आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या JaipurCity/413/2015-17
मुद्रण तिथि दिनांक 5 से 8 सितम्बर, 2016
वर्ष : 74 ★ अंक : 09 ★ मूल्य : 10 रु.
डाक प्रेषण तिथि 10 सितम्बर, 2016 ★ भाद्रपद, 2073

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

सूत्रकृतांग अंक

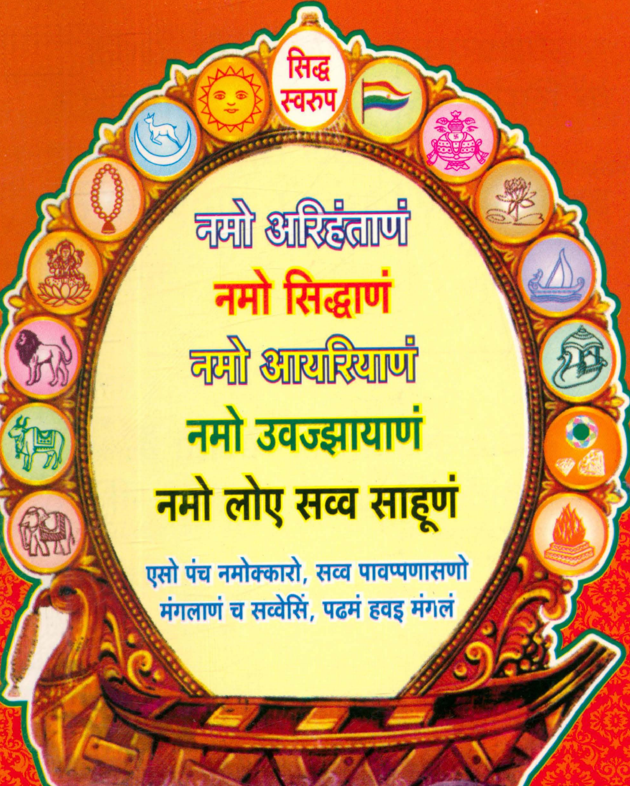

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'॥

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :
Rajeev Nita Daga Foundation Houston

जिनवाणी

हिन्दी-मासिक

卐 **संरक्षक**
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 **संस्थापक**
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 **प्रकाशक**
विनयचन्द डागा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-4068798

ACHARYA SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SRI ... KENDRA
Koba, Gandhinagar ... 009
(079) 232 ... 76204-0

卐 **प्रधान सम्पादक**
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
सामायिक-स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2,
नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)
फोन : 0291-2626279
E-mail : editorjinvani@gmail.com
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 **सह-सम्पादक**
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 **भारत सरकार द्वारा प्रदत्त**
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2015-17
ISSN 2249-2011

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

जाइं सरित्तु भयवं,
सहसंबुद्धो अणुत्तरे धम्मे।
पुत्तं ठवेत्तु रज्जे,
अभिणिक्खमई नमी राया।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 9.2

पूर्वजन्म की स्मृति में नमि,
धर्म मार्ग का बोध किया।
राज्यभार झट सौंप पुत्र को,
दीक्षा हित अभिनिष्क्रमण किया।।

सितम्बर, 2016
वीर निर्वाण संवत्, 2542
भाद्रपद, 2073

वर्ष 74 अंक 9

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.

स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
संरक्षक सदस्यता : 11000/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि 'जिनवाणी' बैंक खाता संख्या SBBJ 51026632986
IFSC No. SBBJ 0010843 में जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता
'जिनवाणी', दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail:sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

सम्पादकीय-	सूत्रकृतांग सूत्र में साध्वाचार	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-सम्पादक	9
विचार-वारिधि-	परिग्रह-परिमाण	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	11
प्रवचन-	स्वाध्याय एवं तप की सार्थकता	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	12
संगोष्ठी-प्रस्तुति-	'वीरत्थुई' में भगवान महावीर के गुण	-महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा.	14
	सूत्रकृतांग में बारह भावनाएँ	-महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.	19
	सूत्रकृतांग में पाँच महाव्रत	-महासती श्री लक्षितप्रभाजी म.सा.	36
	सूत्रकृतांग में उपमाओं का सौन्दर्य	-महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.	43
	सूत्रकृतांग सूत्र के अध्ययनों के क्रम का हेतु	-श्री प्रकाशचन्द जैन	57
	सूत्रकृतांग में परमतानुसारी आत्म-स्वरूप की मीमांसा	-प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन	64
	सूत्रकृतांग में साधना के बाधक तत्त्व	-श्री शांतिलाल बोहरा	76
युवा-स्तम्भ -	आओ सेल्फी लें	-श्री प्रमोद महनोत	82
नारी-स्तम्भ-	मन की शुद्धि	-श्रीमती आशा धीरेन्द्र बांठिया	84
बाल-स्तम्भ -	बदल गई श्रेया	-श्रीमती कमला सुराणा	85
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	-डॉ. श्वेता जैन	89
कविता/गीत-	क्षमापना और मन	-श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'	10
	तुम आराधक बन जाओ	-श्री मोहन कोठारी 'विनर'	18
	जीवन बोध क्षणिकाएँ	-श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.	35
	तीन कविताएँ	-डॉ. रमेश 'मयंक'	42
	क्षमा मिटा दे वैर-बुराई	-श्री दिलीप गाँधी	56
वाचना-	जैन आगमों की प्रमुख वाचनाएँ	-डॉ. दिलीप धींग	91
विचार-	जिनवाणी के स्वाध्याय से लाभ	-डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन	122
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	93
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	118

सम्पादकीय

सूत्रकृतांग सूत्र में साध्वाचार

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

द्वितीय अंग आगम के रूप में सूत्रकृतांग (सूयगडंगसुत्त) प्रसिद्ध आगम है, जिसमें भगवान महावीर कालीन विभिन्न मतों का उपस्थापन एवं खण्डन किया गया है। आचार संहिता से सम्बद्ध भी इस सूत्र में ऐसे निर्देश प्राप्त होते हैं, जो साधक को अपनी साधना में स्थिर करते हैं। सूत्रकृतांग में चार्वाक, सांख्य, मीमांसा, बौद्ध, आजीवक आदि विभिन्न मतों की चर्चा है तथा प्रबल तर्कों से उनकी मान्यताओं का खण्डन किया गया है। यहाँ हम दार्शनिक मान्यताओं की चर्चा न करके आचार के सम्बन्ध में कुछ विचार करेंगे।

सप्तम अध्ययन में साधु की आचार-भ्रष्टता का निर्देश करते हुए कहा गया है कि कुशील साधक धर्म प्राप्त (नियमानुसार प्राप्त) आहार का संचय करके उपभोग करता है तो वह आचार भ्रष्ट होता है। साधु भोज्य सामग्री को रात्रि में अपने पास नहीं रखता है, दिन में भी दो प्रहर से अधिक काल तक लाया हुआ आहार नहीं रखा जाता। साधु विभूषा की दृष्टि से प्रासुक जल से भी स्नान करता है, तो भी वह अनुमत नहीं है। विभूषा के लिए वस्त्रों को धोकर उजला बनाना भी त्याज्य है। यदि कोई साधु स्वादिष्ट भोजन प्राप्त होने वाले घरों में ही बार-बार गोचरी के लिए जाता है तो यह भी उसके लिए दोषपूर्ण है। ऐसे घरों में जाकर कोई साधु धर्मोपदेश करता है तथा भोजन के लोभ से अपने गुणों का बखान करता है तो यह भी दोषयुक्त है। बीज, कन्द आदि सचित्त वनस्पति का उपयोग साधु के लिए त्याज्य है। साधु तपस्या के साथ पूजा प्रतिष्ठा की कामना नहीं करता। मनोज्ञ शब्द आदि विषयों पर आसक्त नहीं होता तथा अमनोज्ञ शब्द आदि विषयों से द्वेष नहीं करता। वह सभी प्रकार के संग से दूर रहता है। परीषह एवं उपसर्ग से आए हुए दुःखों को समभाव से सहन करता है। ज्ञान-दर्शन एवं चारित्र की साधना में ही संलग्न रहता है। त्रयोदश अध्ययन में कहा गया है कि साधु हितकारी धर्म का उपदेश देता है। जो कार्य निन्द्य हैं अथवा जो कार्य सांसारिक निदान सहित किए जाते हैं, वीतराग धर्मानुयायी साधक उनका सेवन नहीं करते। साधु दूसरों के अभिप्राय एवं भूमिका को अनुमान से जानकर धर्म का उपदेश दे-*''लद्धाणुमाणे य परेसु अट्ठे।''* (सूत्रकृतांग, 1.13.20) साधु अपनी पूजा और श्लाघा की कामना नहीं करता-

''न पूयणं चेव सिलोयकामी, पियमप्पियं कस्सवि णो कहेज्जा।
सव्वे अणट्ठे परिवज्जयंते, अणाउले य अकसाई भिक्खू।।''

-सूत्रकृतांग, 1.13.22

अपनी पूजा एवं प्रशंसा का त्याग करने के साथ साधु न तो किसी को प्रिय कहता है न ही किसी को अप्रिय कहता है। वह सभी अनर्थों को त्यागता हुआ अनाकुल एवं अकषायी रहता है। दशम अध्ययन में समाधि की चर्चा करते हुए कहा गया है कि त्रस एवं स्थावर प्राणियों की हिंसा न करते हुए साधु को उनके प्रति आत्मवद् भाव का व्यवहार करना चाहिए- **''आयतुले पयासु।''** (सूत्रकृतांग, 1.10.3)। वह समस्त जगत को समतापूर्वक देखे तथा किसी का प्रिय अथवा अप्रिय न करे- ***''सव्वं जगं तु समयाणुपेही, पियमप्पियं कस्सइ नो करेज्जा।''*** (सूत्रकृतांग, 1.10.7)। साधु दूसरों के प्रति हितकर व्यवहार करता है, सबका हित चाहता है। वह किसको क्या प्रिय लगेगा या अप्रिय, इसको व्यवहार की कसौटी नहीं बनाता।

विषयों से विरक्ति, मन में समाधि, वचन में निरवद्यता, साधु जीवन में अनिवार्य है। पापों से विरति के लिए द्वितीय अध्ययन में कहा गया है-

''पुरिसोरम पावकम्मुणा, पलियंतं मणुयाण जीवियं।
सन्ना इह काममुच्छिया, मोहं जंति नरा असंवुडा।।''

-सूत्रकृतांग, 1.2.1.10

साधुओं के लिए ही नहीं, अपितु सभी मनुष्यों के लिए कहा गया है- हे पुरुषों! तुम पाप कार्यों से उपरत हो जाओ। मनुष्यों का जीवन नश्वर है। जो संसार में आसक्त हैं, काम-भोगों में मूर्च्छित हैं तथा हिंसा, झूठ, चोरी आदि पापों से विरत नहीं हैं, वे मनुष्य मोह को प्राप्त होते हैं। जो हिंसा आदि से विरत हैं, जो कर्म-विदारण में वीर हैं, संयम-पालन के प्रति उद्यत हैं, क्रोध आदि कषायों से दूर हैं, प्राणियों की हिंसा से सर्वथा उपरत हैं तथा जो पाप से निवृत्त हैं, उनके चित्त में शान्ति रहती है तथा वे सही मार्ग पर चल पाते हैं। (1.2.1.12)

परीषह एवं उपसर्गों के उपस्थित होने पर साधक का चित्त डाँवाडोल हो जाता है, वह उन परीषहों एवं उपसर्गों को सहन करने में समर्थ अनुभव नहीं करता है। ऐसे साधकों को सूत्रकृतांग सूत्र में स्थिरता एवं समतापूर्वक उन परीषहों एवं उपसर्गों को सहन करने की प्रेरणा की गई है। उपसर्गों को धैर्यपूर्वक सहन करने पर पूर्व कर्मों का क्षय होता है। प्रतिकूल परीषहों से भी अधिक विचलन अनुकूल परीषहों में होता है। साधक अनुकूल परीषहों के उपस्थित होने पर कब डाँवाडोल हो जाए, इसका स्वयं को पूर्वाभास नहीं होता। कभी कोई संयम से विचलित करने हेतु संसार में पुनः प्रवेश करने या गृहस्थ जीवन बसाने का प्रलोभन दे सकता है। कभी माता-पिता रागवश पुनः संसार में आने के लिए प्रस्ताव रख सकते हैं। जो साधक साधना के रस से आप्लावित हैं, वे अनुकूल एवं प्रतिकूल दोनों प्रकार के परीषहों में विचलित नहीं होते। उनके पास सभी परीषहों में समता से रहने का सामर्थ्य उत्पन्न हो जाता है। वे किसी प्रलोभन या भय से डाँवाडोल नहीं होते। उनका लक्ष्य स्थिर होता है।

केश लुंचन और ब्रह्मचर्य पालन से पराजित मन्द अर्थात् अज्ञानी साधक मुनि धर्म में उसी प्रकार क्लेश पाते हैं, जिस प्रकार जाल में फंसी हुई मछलियाँ तड़फती है।

''संतत्ता केसलोएणं बंभचेरपराजिया।
तत्थ मंदा विसीयंति, मच्छा पविट्ठा व केयणे।''

-सूत्रकृतांग सूत्र, 1.3.1.13

जिनका सत्पथ एवं सद्भाव नष्ट हो गया है, वे संसार को पार नहीं कर पाते-''नट्ठ सप्पहसब्भावा, संसारस्स अपारगा'' (1.3.3.10)

साधक क्रोध, मान, माया एवं लोभ को नियंत्रित करता है एवं सतत, सावधान रहता है कि उस पर इन कषायों का प्रभाव न बढ़े। मान कषाय को जीतने के लिए मद नहीं करने पर बल दिया गया है। मद का त्याग करने के लिए कहा गया है कि साधक को किसी गुणवान साधक को देखकर ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए। निन्दा एवं ईर्ष्या झूठा अभिमान पैदा करते हैं। जो साधक दूसरे का तिरस्कार करता है वह चिरकाल तक चतुर्गति संसार में परिभ्रमण करता है। परनिन्दा पापों की जनक है, इसलिए मुनि मद न करें-

''जो परिभवती परं जणं, संसारे परियत्तती महं।
अदु इंखिणिया उ पाविया, इति संखाय मुणी ण मज्जती।।''

-सूत्रकृतांग, 1.2.2.2

साधक में न तो हीन भावना होनी चाहिए और न ही मद। हीन भावना जहाँ साधक के सामर्थ्य का ह्रास करती है, वहाँ मद भावना भी साधक का पतन करती है। जो जैसा है, उसे वैसी स्थिति स्वीकार करके आगे बढ़ना चाहिए। गुणीजनों के गुण देखकर प्रमोदभाव एवं अपने से दुःखियों के प्रति करुणा भाव लाकर निज गुणों का विकास करना चाहिए। संसार की अनित्यता, अशरणता आदि को अपने चित्त में भावित करने वाला साधक संसार में आसक्त नहीं होता तथा निज गुणों का विकास करने में समर्थ होता है।

साधु अपने समुदाय में रहते हैं, अतः कभी कलह एवं विवाद का होना संभव है। ऐसे साधकों को सावधान करने के लिए सूत्रकृतांग में कहा गया है-

''अहिगरणकडस्स भिक्खुणो, वयमाणस्स पसज्झ दारुणं।
अट्ठे परिहायती बहू, अहिगरणं न करेज्ज पंडिए।।''

-सूत्रकृतांग, 1.2.2.19

कलह या वाद के लिए यहाँ अधिकरण शब्द का प्रयोग किया गया है। जो भिक्षु या साधक अधिकरण करता है तथा कठोर वचनों का प्रयोग करता है। वह संयम के प्रयोजन से भ्रष्ट होता है। इसलिए पंडित साधु को चाहिए कि वह अधिकरण न करे। आरम्भ एवं परिग्रह का त्याग साधु के लिए आवश्यक है। सूत्रकृतांग कहता है कि सांसारिक पदार्थों एवं स्वजनों

के प्रति परिग्रह इस लोक एवं परलोक दोनों में दुःख देता है। जिनके प्रति ममत्व किया जाता है, वे सभी विध्वंस स्वभाव वाले हैं। जो ऐसा जानता है एवं मानता है वह घर में निवास कैसे कर सकता है? गृहस्थ परिग्रही होते हैं, उनके लिए कहा है-

"परिग्गहे निविट्ठाणं, वेरं तेसिं पवड्ढई।
आरंभ संभिया कामा, न ते दुक्खविमोयगा।।" -सूत्रकृतांग, 1.9.3

जो परिग्रह में संलग्न हैं, उनका परस्पर वैर बढ़ता है। आरम्भ से युक्त कामनाएँ कभी दुःख मोचक नहीं हो सकती।

साधु स्वयं समता में रहता है। समता से ही वह प्रज्ञा सम्पन्न बनता है तथा दूसरों को समता में ही धर्म बताता है। जैसा कि कहा है-"पण्णसमत्ते सदा जए, समिया धम्ममुदाहरे मुणी।" (1.2.2.6)। यदि कोई कामनाएँ पूरी भी होती हैं तो भी उनकी पुनः प्रार्थना न करे। विवेकपूर्वक आर्य आचरण करे। जो साधक मान एवं माया से रहित होता है। ऋद्धि-रस-सातारूप गौरव को जानकर उनका परित्याग करता है, वह निर्वाण की प्राप्ति करता है।

शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि विषयों में जो विरक्त रहना सीख लेता है, निन्दा विकथा में नहीं पड़ता, काम-वासनाओं से ग्रस्त नहीं होता, संसार के विषयों की अनित्यता एवं निरर्थकता को जानकर उनके प्रति आकृष्ट नहीं होता, यश एवं पूजा की कामना नहीं करता। इनके मिलने पर अभिमान नहीं करता, प्रतिकूल प्रसंगों में भी जो क्रोधित नहीं होता, अपना सामर्थ्य होने पर जो तप-त्याग से जी नहीं चुराता, दूसरों को धोखा नहीं देता, अपने स्वाद के लिए एषणा समिति का भंग नहीं करता, ईर्या आदि सभी समितियों का पालन तत्परता से करता है तथा मन, वचन एवं काया का गोपन कर संयम की रक्षा करता है, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह का सजगता से पालन करता है वह साधक दुःख-मुक्ति स्वरूप निर्वाण को अवश्य प्राप्त करता है। उसके लिए कोई काल बाधक नहीं होता। सूत्रकृतांग में कहा गया है-

"संवुडकम्मस्स भिक्खुणो, जं दुक्खं पुट्ठं अबोहिए।
तं संजमओऽवचिज्जइ, मरणं हेच्च वयंति पंडिता।।"-सूत्रकृतांग, 1.2.2.1

जो भिक्षु कर्मों के आस्रव को रोककर संवर की साधना करता है तथा अज्ञानजन्य दुःख को ज्ञान, संयम एवं तप के द्वारा क्षीण कर देता है वह पंडित पुरुष मृत्यु को नहीं मोक्ष को प्राप्त करता है। इसलिए साध्वाचार का सारा मर्म संवर में निहित है। आस्रव के निरोध रूप पूर्ण संवर ही संयम-साधना का स्वरूप है। इसके साथ जब तप जुड़ जाता है तो पूर्वबद्ध कर्मों की भी निर्जरा होती है एवं मोक्ष का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। ❖

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

दुहा चेयं सुयक्खायं, वीरियं ति पवुच्चति।
किं नु वीरस्स वीरत्तं, केण वीरो त्ति वुच्चति।।
कम्ममेगे पवेदंति, अकम्मं वा वि सुव्वता।
एतेहिं दोहिं ठाणेहिं, जेहिं दिस्संति मच्चिया।।
पमायं कम्ममाहंसु, अप्पमायं तहाऽवरं।
तब्भावादेसतो वा वि, बालं पंडितमेव वा।।

-सूत्रकृतांग सूत्र, प्रथम श्रुतस्कन्ध, अध्ययन 8, गाथा 1-3

अर्थ- वीर्य को श्रुत में दो प्रकार का कहा गया है। वीर पुरुष की वीरता क्या है और वह किस काम से वीर कहलाता है (यह एक प्रश्न है।)।।1।।

हे सुव्रतियों! कुछ लोग कर्म को वीर्य कहते है और कुछ लोग अकर्म को वीर्य कहते हैं। मनुष्य लोक के प्राणी इन दो स्थानों में देखे जाते हैं।।2।।

प्रमाद को कर्म कहा गया है तथा इसके विपरीत अप्रमाद को अकर्म कहा गया है। इन दोनों को अपेक्षा से क्रमशः बाल वीर्य अथवा पंडित वीर्य कहा गया है।।3।।

विवेचन- सूत्रकृतांग की उपर्युक्त गाथाओं में बालवीर्य एवं पंडित वीर्य तथा कर्म एवं अकर्म का स्वरूप निरूपित किया गया है। जो वीर्यवान् होता है वह वीर कहलाता है। यह वीर्य कर्मवीर्य एवं अकर्मवीर्य के आधार पर दो प्रकार का होता है। कर्म वीर्य क्या है एवं अकर्म वीर्य क्या है, इसे सूत्रकृतांग की उपर्युक्त तीसरी गाथा में स्पष्ट किया गया है कि प्रमाद पूर्वक किया गया कार्य कर्म वीर्य है एवं अप्रमाद पूर्व किया गया कार्य अकर्म वीर्य है।

भगवद् गीता में कर्म करने पर बल दिया गया है। वहाँ कहा गया है कि मनुष्य का कर्म करने में अधिकार है। फलासक्ति का उसे अधिकार नहीं है। सूत्रकृतांग सूत्र में स्पष्ट विधान किया गया है कि प्रमाद कर्म है एवं अप्रमाद अकर्म है। प्रमादपूर्वक की गई क्रिया बन्धन का कारण होने से कर्म कही गई है तथा अप्रमादपूर्वक की गई क्रिया बंधन का कारण नहीं होने से अकर्म कही गई है। प्रमादपूर्वक किस प्रकार के कर्म किए जाते हैं इसका भी उल्लेख सूत्रकृतांग में किया गया है। वहाँ कहा गया है कि प्राणियों का वध करने के लिए तलवार आदि शस्त्र अथवा मंत्रों का प्रयोग सकर्म वीर्य है। माया का प्रयोग करके कामभोगों में प्रवृत्त होना अपने सुख के लिए अंधी दौड़ लगाते हुए अन्य प्राणियों को मारना-पीटना, मन-वचन एवं काया से जीव हिंसा करना सकर्म वीर्य है। किसी से वैर करना पापकारी है

एवं उसका फल दुःख के रूप में उपलब्ध होता है अतः वैर पूर्वक कर्म करना भी सकर्म वीर्य है। दूसरे शब्दों में कहें तो जिन प्रवृत्तियों के द्वारा कर्मों का बंधन होता है- वे प्रवृत्तियाँ प्रमादपूर्वक की जाती हैं। अतः वे कर्मवीर्य के अन्तर्गत आती हैं। ऐसा आचरण अज्ञानी जीवों के द्वारा किया जाता है। अतः इसे बाल वीर्य भी कहा गया है।

पंडित वीर्य प्रमाद से रहित होता है। यह काषायिक बंधनों से उन्मुक्त होता है। प्रमाद के न होने पर जो प्रवृत्ति की जाती है वह बन्धनकारी नहीं होती। इसलिए उसे अकर्म वीर्य कहा गया है। वह पापकर्मों से दूर रहता है तथा बंधे हुए कर्मों को काटने के लिए उद्यत रहता है। वह प्राणातिपात आदि पापों से अपने को दूर रखता है। जिस प्रकार कच्छप अपने अंगों को अपनी देह में समेट लेता है उसी प्रकार अकर्म वीर्य वाला मेधावी पुरुष अपनी इन्द्रियों को संयमित कर पापों को दूर कर देता है। वह किए हुए, किये जाते हुए एवं भविष्य में किये जाने वाले पापों का अनुमोदन नहीं करता। वह जितेन्द्रिय होकर आत्मगुप्त होता है। ऐसा पंडित पुरुष निसन्देह मन, वचन एवं काया से संवृत होकर प्रमाद का त्याग कर देता है।

प्रमाद एवं अप्रमाद के पूर्व सम्यक् दर्शन का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। सम्यक्दृष्टि व्यक्ति ही अप्रमादपूर्वक प्रवृत्ति करके कर्म बंधन को काट सकता है तथा मिथ्यादृष्टि व्यक्ति प्रमाद में पड़कर हिंसा आदि पापकारी प्रवृत्ति में लगा रहता है।

क्षमापना और मन

श्री राजेन्द्र जैन 'राजा'

हर वर्ष आता है क्षमापना
फिर भी पता नहीं क्यों
मलिनता से मुक्त नहीं हो पाता है मन।
त्याग-तपस्या, धार्मिक अनुष्ठान भी
नहीं बना पाते क्यों आत्मा को
अपने स्पर्श से चन्दन वन।
क्षमा मांगते बीते जाने कितने ही वर्ष
पर कितने हो पाते हैं, सच में
मनुज के निर्मल पावन अन्तर्मन।
सुरसा सा मुँह फैलाये वक्त
हमसे पूछ रहा है मित्रों!
फिर से, यही पुराना प्रश्न।

-44/221, रजत पथ, मानसरोवर-302020, जयपुर(राज.)

विचार-वारिधि

परिग्रह-परिमाण

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- आवश्यक द्रव्य रखते हुए भी आप परिग्रह पर ममता की गाँठ को ढीली करके अपरिग्रही बन सकते हैं।
- परिग्रह का बन्धन यदि प्रगाढ़ होगा तो उत्तरोत्तर ईर्ष्या, द्वेष, कलह, लड़ाई-झगड़े, मिलावट, चोरबाजारी और मुकदमाबाजी होगी। इसके विपरीत आप परिग्रह पर ममता घटाकर अपने स्वयं के जीवन-निर्वाह के लिये, अपने परिवार और बच्चों के लिये, समाज के हित के लिये, आवश्यकता पूर्ति योग्य अर्थोपार्जन न्याय-नीति से करेंगे तो सभी लोग आपके मित्र होंगे, आपको न राज्य का डर रहेगा और न समाज का ही।
- परिग्रह को सीमित करना, कम करना और परिग्रह के बन्धनों को ढीला करना चाहते हैं तो भोगोपभोग की सामग्री को सीमित करना होगा, अपनी भोगोपभोग की भावना पर अंकुश लगाना होगा, भोगोपभोग की भावना को घटाना होगा।
- इच्छा-परिमाण श्रावक के मूलव्रतों में परिगणित किया गया है। इच्छा का परिमाण नहीं किया जाएगा और कामना बढ़ती रहेगी तो प्राणातिपात और झूठ बढ़ेगा। अदत्त ग्रहण में भी प्रवृत्ति होगी। कुशील को बढ़ाने में भी परिग्रह कारणभूत होगा। इस प्रकार असीमित इच्छा सभी पापों और अनेक अनर्थों का कारण है।
- परिग्रह की एक सीमा कर, परिग्रह का परिमाण कर अपरिग्रही बनने के साथ-साथ भोगोपभोग की सामग्री को यथाशक्ति सीमित करते रहना, भोगोपभोग की इच्छा पर नियन्त्रण करना परमावश्यक है। भोगोपभोग की इच्छा जब तक शान्त नहीं होती, तब तक अपरिग्रहपन की आराधना करना गृहस्थ के लिये संभव नहीं है।
- परिग्रह का परिमाण कर यदि आप परिग्रह को कम करना चाहते हैं, तो अपरिग्रह की भावना के साथ उपभोग-परिभोग को, भोगोपभोग की सामग्री को घटाने की आवश्यकता है। उपभोग-परिभोग को घटाने के साथ ही परिग्रह की आवश्यकता स्वतः कम हो जायेगी और परिग्रह-संचय के लिये होने वाला पाप भी कम हो जायेगा।
- केवल बाहरी वस्तु का परिमाण करने से काम नहीं चलता। यह तो इच्छाओं को सीमित करने की एक साधना मात्र है। साधना क्षेत्र में बाह्य और आन्तरिक परिसीमन की नितान्त आवश्यकता है तथा दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।
- जिस प्रकार भोगोपभोग परिग्रह को बढ़ाने के साधन हैं, उसी प्रकार दिखावा या आडम्बर भी परिग्रह को बढ़ाने का साधन हैं। *-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार*

प्रवचनांश

स्वाध्याय एवं तप की सार्थकता

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. द्वारा निमाज चातुर्मास में स्वाध्यायी शिविर एवं मासक्षपण तप की अनुमोदना के प्रसंग पर फरमाए गए भावों को यहाँ उपयोगी समझकर संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है। प्रवचनांशों का संकलन श्री जगदीश जी जैन द्वारा किया गया है। **-सम्पादक**

स्वाध्याय शिविर (26 से 31 जुलाई 2016) में उद्बोधन

हर स्वाध्यायी एक सामायिक धर्मस्थान में स्वाध्याय के साथ करे। आपकी स्वाध्याय की रूपरेखा नियमित प्रवाहमान रहनी चाहिये। यहाँ मात्र सुन लेते हो, ग्रहण कर घर पर क्या ले जा रहे हो? आप स्वयं स्वाध्याय करके, पढ़कर आएं। आप पृच्छा करें, तो पता चले कि वास्तव में आपकी कुछ-न-कुछ गति बनी हुई है। स्तर बढ़ाकर क्षमता का विकास करें। इस बार आवश्यक सूत्र की परीक्षा में भाग लें, प्रेरणा करें, परस्पर चर्चा करें। **स्वाध्याय संघ की जो साख बनी हुई है, वह अक्षुण्ण रहे, ऐसा चिन्तन आवश्यक है।** धर्मस्थान में मुखिया (स्वाध्यायी) पहले आयेगा, तब ही सामूहिक स्वाध्याय संभव हो पायेगा। अन्य भी स्वतः आने लग जायेंगे। कम से कम स्वाध्यायी तो रात्रिभोजन का त्यागी बनने का आदर्श प्रस्तुत करे। आप हर साल स्वाध्यायी बनकर जाने का लक्ष्य रखें।

तीर्थंकर भगवान महावीर की आदेय अनमोल वाणी में जीवन-निर्माण का एक स्वर्णिम अनमोल साधना सूत्र है- निरन्तर चलने वाला एवं नियमित रहने वाला, सिद्धत्व को प्राप्त करता है। रस्सी पर पत्थर पड़े तो वह टूट जाती है, पर वही डोरी पत्थर पर नियमित-निरन्तर चले तो वह पत्थर घिस जाता है। कहा भी है- **'गिरत-गिरत प्रतिदिन रस्सी भी शिला घिसावेला। करलो सामायिक रो साधन जीवन उज्जवल होवेला।।''** कठोर से कठोर पत्थर पर यदि नियमित बर्तन को घिसा या मांजा जाय तो सफाई वाले स्थान पर गौलाई जैसा निशान बन जाता है। आज स्वाध्याय शिविर का समापन है। स्वाध्यायी यदि अंतगड आदि आगमों का नियमित स्वाध्याय करें तो वे निष्णातता प्राप्त कर सकते हैं। आप यहाँ आते हैं तो स्वाध्यायी, और घर जाते ही व्यवसायी हो जाते हैं। मैं भी स्वाध्यायी रहा हूँ। संवत् 2016 में स्वाध्यायी बना, निरंतरता से श्रमण पथ पर आगे बढ़ा। स्वाध्यायी स्वयं पाप घटाए, तब दूसरों को प्रेरणा करे तो वह प्रभावी होगा। व्यायाम में निरन्तरता रहे

तो जिसकी हड्डी-पसली दिखती थी, वह भी पहलवान बन सकता है। कथा भाग का प्रसंग है। एक राजा रानी से बात नहीं करता था। राजा ने शर्त रखी कि यदि रानी बैल को उठाकर यहाँ आ जाये तो बात कर लूँगा। शर्त कठिन अवश्य थी, पर असंभव नहीं। रानी ने गाय के नवजात बछड़े को उठाने से अभ्यास प्रारम्भ किया। अभ्यास निरन्तर चलता रहा। बछड़े का वजन दिन पर दिन बढ़ रहा था- पर निरन्तरता से वजन महसूस नहीं हो रहा था। आत्म- विश्वास भी बढ़ता गया। वही बछड़ा बड़ा होकर बैल बन गया। रानी का रोजाना उठाकर चलने का अभ्यास था, अतः वह बैल को उठाकर राजा के समीप पहुँच सकने में सफल हुई, यह सब निरन्तरता से संभव हुआ। अभ्यास करें, बूँद-बूँद से घड़ा भरता है।

मासखमण तप की अनुमोदना में उद्बोधन

तप की अनुमोदना तप से होती है, किन्तु मैं आपसे अभी आहार छोड़ने की बात नहीं कह रहा। मैं तो आपकी सन्तान को संस्कार देने पर जोर देने की बात कह रहा हूँ। तप के बारह भेद हैं, उनमें स्वाध्याय भी एक भेद है। परिवार में प्रत्येक व्यक्ति संस्कारों को देने-लेने का कार्य करने का लक्ष्य रखे। बड़े का कर्त्तव्य है कि वह कम से कम 10 मिनट के लिये अपनी संतान को साथ लेकर बैठे और उन्हें धर्म संस्कार दे। साथ ही छोटों का भी कर्त्तव्य है कि वे संस्कारप्रदाता के समीप बैठकर संस्कार प्राप्त करें। सत्संस्कारों से युक्त मानव ही जीवन मे सुखी रह सकता है। वर्तमान में सद्संस्कारों का हनन करने वाले अनेक बाधक तत्त्व हैं। ऐसे समय में सत्संस्कारों का रक्षण आवश्यक प्रतीत होता है। यह दस मिनट का स्वाध्याय, स्वाध्याय का रूप है, साथ ही तप भी है।

मोक्ष का मार्ग ज्ञान-दर्शन-चारित्र एवं तप रूप निरूपित है। दान-शील-तप-भावना को भी मोक्ष में साधन माना है। तप का दोनों ओर उल्लेख है, अतः तप की आराधना करने वाला मोक्ष का वरण कर सकता है। साधना करने वाले श्रद्धालु श्रावक-श्राविका गुरु के पधारने के पहले ही मानस बना लेते हैं। इन बहिनों ने पहले से संकल्प किया कि यदि गुरुदेव का चातुर्मास हुआ तो उग्र तपस्या करेंगे। संकल्पबल की ही करामात है- इनके शरीर की अनुकूलता नहीं है, फिर भी साहस से संकल्प आगे बढ़ाती रही। उम्र 70 से ऊपर है, फिर भी मासक्षपण किया। संकल्प बल दृढ़ हो तो अवस्था, प्रतिकूलता भी पीछे रह जाती है। तपस्या श्रद्धा से होती है, पर श्रद्धा के साथ संकल्प भी चाहिये। जिनके संकल्प नहीं बने हैं, वे बनायें, खुले न रहें। पाप छोड़ने की वृत्ति अपनाइये। पैसे का त्याग पुण्यवानी हो सकती है, पर निर्जरा नहीं। निर्जरा तो एकान्त धर्म करणी से ही होगी। जो जितना कर सकता है, उतना अवश्य करे, इसमें प्रमाद नहीं करे। ■

संगोष्ठी-प्रस्तुति

'वीरत्थुई' में भगवान महावीर के गुण*

व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा.

संसार की चला-चली को मिटाने के लिए प्रभु ने अमृतमयी वाणी की वर्षा की है, उस वाणी का नाम आगम है। आगमों में दूसरा आगम है- सूत्रकृतांग। इसके छठे अध्ययन में प्रभु महावीर की स्तुति करते हुए एक सुन्दर गाथा आयी है-

''हत्थीसु एरावणमाहु णाए, सीहं मियाणं सलिलाण गंगा।
पक्खीण वा गरुले वेणुदेवे, णिव्वाणवादीणिह णायपुत्ते।।''

-सूत्रकृतांग, अध्ययन 6, गाथा 21

अर्थात् जैसे हाथियों में ऐरावत, पशुओं में सिंह, नदियों में गंगा, पक्षियों में वेणुदेव गरुड प्रधान होते हैं, वैसे ही निर्वाण वादियों में प्रभु महावीर श्रेष्ठ हैं।

प्राचीनकाल की दार्शनिक परम्परा में दो मुख्य परम्पराएँ रही हैं- निवार्णवादी और स्वर्गवादी। भगवान महावीर ने निर्वाण के आदर्श को सर्वाधिक मूल्य दिया है एवं -निर्वाणवादी में श्रेष्ठ कहलाए। इस परम्परा में साधना के वे ही तथ्य मान्य हैं जो कि निर्वाण के पोषक हैं, स्वर्गवादी परम्परा में ऐसा नहीं है। वैदिक परम्परा स्वर्गवादी परम्परा है। प्रभु महावीर ने अंग सूत्रों की व्याख्या की, उसमें सूत्रकृतांग सूत्र दूसरा अंग सूत्र है।

श्रीमान् अशोकजी कवाड़ ने अज्ञान व मोह के परिहारकर्ता के रूप में सूत्रकृतांग को प्रदर्शित किया। उसी कड़ी की लड़ी में डॉ. सुषमाजी सिंघवी ने वर्तमान युगीन समस्याओं का समाधान 'सूत्रकृतांग' के आधार पर अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त आदि को बताया।

द्वितीय सत्र में गुरु हस्ती से निर्माण पाए हुए डॉ. धर्मचन्दजी ने आत्मा के स्वमत व परमत के सिद्धान्तों की निरूपणा की। बैंगलोर में धार्मिक ज्ञान की सुगन्ध फैलाने वाले श्रीमान शान्तिलालजी ने बहुत ही सुन्दर तरीके से 'साधना में बाधक तत्त्व' आगम आधार से बतलाये एवं वैराग्य पूर्ण सुन्दर अभिव्यक्ति की। इन सभी के भावों को सुनकर मेरे भी भाव आये और सूत्रकृतांग के छठे अध्ययन 'वीरत्थुई' के माध्यम से भगवान के गुणों को गाने की इच्छा हुई। सूत्रकृतांग सूत्र में तिलक स्वरूप पुच्छिंसु णं है। सूत्रकृतांग को उत्तमांग कहते हैं। उत्तमागं की शोभा तिलक से और अधिक बढ़ जाती है। तिलक मांगलिक रूप भी है, व्यक्ति का वर्चस्व तिलक से बढ़ जाता है एवं तिलक विजय का प्रतीक भी है। इस

*बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई, 2014 को आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में उद्बोधन

छट्ठे अध्ययन में भगवान के एक-एक गुण को लेकर सुधर्मा स्वामी स्तुति गा रहे हैं, गाते हुए गुणों की संख्या देखती जाऊँ तो समय सीमा में गा पाना कठिन ही नहीं, असम्भव है। पर कुछ गुणों को तो व्याख्यायित करने का प्रयास गुरु कृपा से जरूर करूँगी। तीसरी आदि गाथाओं में प्रभु के गुण हैं-

1. खेयण्णे (आत्मज्ञ)- सुधर्मा स्वामी फरमा रहे हैं कि भगवान महावीर क्षेत्रज्ञ थे। चूर्णिकार ने 'क्षेत्रज्ञ' का 'जानने वाला' अर्थ किया है। वृत्तिकार ने दूसरी ओर क्षेत्रज्ञ और खेदज्ञ ये दो अर्थ किये हैं। खेदज्ञ क्या है? भगवान महावीर संसार के समस्त प्राणियों के कर्मजन्य दु:खों को जानने वाले थे, जो दूसरों के दु:खों को जान लेते हैं तब करुणाकर कहलाते हैं और करुणाकर दु:ख के मूल को मिटाने का उपाय बतलाने वाले थे। आगम में स्थान-स्थान पर छ:काय जीवों के रक्षा की बात आई है। यूँ तो शास्त्रों में किसी बात की पुनरावृत्ति नहीं होती है, पर कुछ बातों को विशेष समझाने के लिए बार-बार कहना पड़ता है। छ: काय जीवों की रक्षा का गुण भगवान के रोम-रोम में बसा था। क्षेत्रज्ञ अर्थात् आकाश (लोक) लोक-अलोक को जानने वाला। आचारांग सूत्र में यह शब्द आत्मा को जानने के अर्थ में लिया गया है। भगवती सूत्र में भी इसी अर्थ में लिया गया है। भगवद् गीता में क्षेत्र को शरीर के अर्थ में लिया गया है। जो आत्मा का ज्ञाता होता है, भेद विज्ञान करता है वह क्षेत्रज्ञ कहलाता है। ये सारे अर्थ भगवान महावीर में घटित होते हैं।

2. अभय- प्रभु महावीर अभय के देवता थे। सात प्रकार के भयों से जो रहित होता है वह 'अभय' कहलाता है। चूर्णिकार के अनुसार जो दूसरों को अभय बनाता है और स्वयं किसी भी प्रकार से भयभीत नहीं होता है, वही वास्तव में अभय कहलाता है।

प्रभु महावीर ने एकान्तवास किया था। वे श्मशान, खण्डहर आदि में जाकर ध्यान साधना किया करते थे। जहाँ पर साधारण व्यक्ति जा भी नहीं सकता है। निर्भीकता से प्रभु चण्डकौशिक के पास पधारे। अनार्य क्षेत्र में विचरण किया, कुत्तों ने काटा तो भी मंगल भावना ही प्रेषित की। प्रभु में निर्भीकता का गुण कूट-कूट कर भरा था।

गहरे सूने जंगल में, जहाँ जंगली पशु आवाजे,
काले काले मेघों में, बिजलियाँ कड़-कड़ बाजे।
यक्ष राक्षस किन्नर, मनमानी करते गाजे वहाँ पे,
मेरे प्रभु निर्भय के देवता, कण-कण से मुस्काते।
प्रभु है मेरा, मैं हूँ प्रभु का, ये संगीत है प्यारा, मेरा वीर है न्यारा,
श्वास को लेते, श्वास को छोड़ते, हर एक प्राण है गाता, मेरा वीर है न्यारा।।

3. गंथा अतीते- भगवान ग्रंथों से अतीत थे। वृत्तिकार ने ग्रंथ दो प्रकार के बताये- 1. द्रव्यग्रंथ, 2. भावग्रंथ। द्रव्य ग्रंथ यानी पदार्थ और भाव ग्रंथ अर्थात् कषाय-क्रोध, मान, माया, लोभ आदि। प्रभु महावीर दोनों प्रकार के ग्रंथ से सम्पूर्ण रहित थे। जो दोनों प्रकार के ग्रंथ से रहित होते हैं, वे निर्ग्रंथ कहलाते हैं। इसका अर्थ हुआ अपरिग्रही थे। पदार्थ व क्रोध आदि कषाय और कर्म ये सब परिग्रह हैं। स्थानांग में तीन प्रकार के परिग्रह बताये हैं- शरीर, उपधि और कर्म। प्रभु जब दीक्षित हुए तब उनके पास किसी प्रकार की उपधि नहीं थी सिवाय एक देव-दूष्य वस्त्र के। जबकि साधारण मानव के पास एक ही वस्त्र हो तो विशेष सम्भाल कर रखता है। पर भगवान ने तो उस वस्त्र को भी त्याग दिया। ग्रंथ का दूसरा अर्थ- कषाय अथवा राग-द्वेष की गांठ। इस गांठ से जो अतीत हो जाता है, वह ग्रन्थातीत होता है। भगवान शास्त्र पढ़कर नहीं जानते थे, वे तो अपने आत्मज्ञान में ही सब जानते थे एवं वे शास्त्र के प्रणेता थे। प्रभु ने मात्र पेड़ के नीचे ध्यान करके सारे राज खोल दिये। वैज्ञानिकों ने हजारों वर्षों में जितनी खोज की, उससे कई गुणा अधिक भगवान ने मात्र साढ़े बारह वर्ष की साधना में विवेचना कर दी। सारे सत्य फरमा दिये। एक भी ऐसा सत्य नहीं जो भगवान के ज्ञान के बाहर हो।

4. णिराम गंधे- विशुद्ध भोजी- जो आहार संबंधी दोष का वर्जन कर आहार करता है वह विशुद्ध भोजी कहलाता है। तीर्थंकर भगवान न आरम्भ करते हैं, न करवाते हैं और न ही अनुमोदन करते हैं। प्रभु महावीर विशुद्ध भोजी थे। भगवान के साढ़े बारह वर्ष के साधनाकाल को देखें तो आहार ही कितनी बार किया। उन्होंने चौमासी तप किया, 15 की तपस्या 72 बार की। छह मासिक दीर्घ तप किया। ये सभी तप चौविहार त्यागपूर्वक थे। गृहस्थों के लिए बने हुए भोजन की एषणा करते, संयत विधि से आहार ग्रहण करते, व्यंजन रहित, व्यंजन सहित सूखा हो, लूखा हो, ठण्डा-बासी हो, ऐसा आहार ग्रहण करते। इसके अलावा अभिग्रह भी ग्रहण करते थे। रास्ते में चलते हुए अगर पक्षियों का समूह हो तो भगवान दूर से ही निकल जाते ताकि पैरों की आहट से भी उनके भोजन में व्यवधान न हो। रसनेन्द्रिय विजयी प्रभु सरस आहार के मिलने या न मिलने पर भी रागद्वेष से रहित सहज समता भाव में रहते थे। अस्वस्थ अवस्था में भी प्रभु महावीर ने मात्र शिष्यों की समाधि के लिए सिंह अणगार को रेवती श्राविका के यहाँ आहार लेने भेजा और इस निर्देश के साथ कि रेवती ने मेरे लिए जो बीजोरा पाक बनाया है उसे नहीं लेकर घोड़ों के लिए जो बीजोरा पाक बनाया है उसे लेकर आना।

आहार सम्बन्धी दोष 2 प्रकार के होते हैं- 1. अविशोधि कोटिक- जो मूल से दोषयुक्त होते हैं और 2. विशोधि कोटिक- जो उत्तर दोष होते हैं वे विशोधि कोटिक हैं।

रसनेन्द्रिय को जीतने वाले, दोनो का विवेक रखने वाले विशुद्ध भोजी होते हैं।

चूर्णिकार ने णिराम-गंधे को दो भागों में बांटा है- 1. निराम, 2. निर्गंध। आचारांग (2.108) में सव्वामगंधं परिण्णाय णिरामगंधो परिव्वाए पाठ है- अर्थात् श्रमण सब प्रकार के अशुद्ध भोजन का परित्याग कर शुद्ध भोजी रहता हुआ परिव्रजन करे।

रूखी-सूखी रोटी भी तो, हमसे छूट नहीं सकती,
सड़ी गली इन बेचीजो से, काया रूठ नहीं सकती।
कैसे पकवान छोड़े, खाने के राज रसोड़े,
चले गये सब छोड़के जी, छोड़ के।। ओ महावीर........।
कैसे आप निकले घर छोड़ के.......।।

निराम-गंधे का एक अर्थ सुगन्ध भी होता है। हे प्रभो! आपकी सुगन्ध तो चारों दिशाओं में, तीनो लोकों में फैली हुई थी। क्यों नहीं फैलेगी? आप स्वयं सुगंधित थे, आपका जीवन सुगंधित था और आपका शरीर भी सुगंधमय था अर्थात् आपकी यश-कीर्ति तो चारों दिशाओं में एवं तीनों लोकों में फैली हुई थी।

यह तो मात्र स्थूलता से कुछ गुणों की महिमा हुई, भगवान तो अनंतानंत गुणा शोभायमान हैं जिनका व्याख्यान विशेष गीतार्थ गुणवान ही कर सकते हैं।

सुयगडांग कहता आओ स्व-पर का ज्ञान करा दूंगा।
साधक का उत्तम जीवन, रस पान करा दूंगा।।

सूत्रकृतांग कह रहा है अब तक माँ की अंगुली पकड़ी, अब जिनवाणी माँ की अंगुली पकड़ लो तो इस संसार सागर से पार हो जाओगे।

श्री सुधर्मा स्वामी आगे फरमा रहे हैं जिसे श्री जम्बूस्वामी अहोभाव से एकाग्रचित्त हो सुनते हैं पांचवी गाथा के माध्यम से।

5. अनायु (अणाऊ)- जन्म-मरण के चक्रवात से मुक्त प्रभु महावीर शरीर के ममत्व का विसर्जन कर आत्मस्थ हो गये थे। आत्मस्थ पुरुष आयु कर्म की सीमा से परे चले जाते हैं। जिनका वर्तमान जन्म ही अन्तिम है- वे अनायु कहलाते हैं। चैतन्य के अनुभव में रहने वाला शाश्वत बन जाता है फिर आयु उसे अपनी सीमा में नहीं बांध सकती। अत: भगवान अनायु थे। चूर्णिकार कहते हैं- आयु कर्म जहाँ बंधता है वहाँ तो प्रभु टिके ही नहीं। आयु कर्म का बंध छट्ठे गुणस्थान तक होता है। (अपवाद रूप सातवें में सम्पूर्ण कर सकता है, पर आरम्भ तो छट्ठे तक ही रहेगा) और प्रभु वहाँ ठहरते ही नहीं छट्ठे गुणस्थान को स्पर्श मात्र करते व पुन: सातवें गुणस्थान में ही रमण करते थे अर्थात् अप्रमत्त अवस्था में ही रहते थे।

जैसे एक चावल के दाने को दबाकर समस्त दानों की परिपक्वता का ज्ञान हो जाता है ठीक उसी प्रकार एक गुण की महिमा भी भगवान की महिमावंतता को प्रगट कर देती है। हम ऐसे विशेष, विशिष्ट भगवान महावीर स्वामी की स्तुति भी करें, उनका स्मरण भी करें, उनके जीवन का स्वाध्याय भी करें एवं भावपूर्वक आज्ञाओं में रमण भी करें व परिपूर्णत: स्वयं का समर्पण भी करें। यही मंगल मनीषा.......।

तुम आराधक बन जाओ

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

श्रद्धा को पुष्ट बनाओ, समकित का थाल सजाओ,
जिन धर्म से प्रीत लगाओ, तुम आराधक बन जाओ।
तुम आराधक बन जाओ-2।।टेर।।

समकित जितनी निर्मल होगी, मन का थाल सजेगा,
पावन होगी अपनी भावना, कलिमल दूर हटेगा।
ऊँची करणी करो सदा ही, चिंतन नया जगाओ।
तुम आराधक बन जाओ-2।।1।।

जिनवर की वाणी सच्ची है, संशय नहीं है करना,
जीवन के हर कदम पर, प्रभु आज्ञा में चलना।
इत-उत मन गर डोल रहा हो, उस पर रोक लगाओ।
तुम आराधक बन जाओ-2।।2।।

मुक्ति मंजिल के राही हो, नहीं तनिक घबराना,
विपदाओं से टक्कर लेकर, आगे बढ़ते जाना।
महावीर के हो अनुयायी, जिनशासन चमकाओ।
तुम आराधक बन जाओ-2।।3।।

जग में ऊँचा नाम प्रभु का, ऊँचा धर्म मिला है,
उत्तम कुल में जन्म लिया है, अपना भाग्य खिला है।
सच्चे जैनी बनकर बंधु, जीवन सफल बनाओ।
तुम आराधक बन जाओ-2।।4।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

संगोष्ठी-प्रस्तुति

सूत्रकृतांग में बारह भावनाएँ

महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.

सूत्रकृतांग एक आर्ष वाणी है। आर्ष वाणी के दो ध्येय होते है। अज्ञान का नाश व मोह का विनाश। अथवा एक शब्द में कहा जाए तो हर आगम का लक्ष्य आत्मवान बनाना ही है। बारह भावना क्रमबद्ध रूप में किसी भी आगम में प्राप्त नहीं होती, पर जैसे कि प्राकृतिक उद्यान में पुष्प व फल के पौधे व वृक्ष यत्र-तत्र होते हैं तथा पुष्पित व पल्लवित रहते हैं। वैसे ही आगमों में 12 भावना रूप पुष्प यत्र-तत्र विकीर्ण हैं। रागोन्मुखी बने व्यक्ति को आगम वैराग्योन्मुखी बनाता है तथा बारह भावनाएँ उसका माध्यम ही है।

भावशून्य क्रिया फलदायी नहीं होती। अनेक प्रसिद्ध आचार्यो ने भी अपने ग्रंथों में भावना का वर्णन किया है। वाचक उमास्वाति ने तत्त्वार्थसूत्र में, आचार्य नेमिचन्द्र ने वृहद्द्रव्य संग्रह में, सोमदेवसूरि ने यशस्तिलक में, आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णक में, आचार्य हेमचन्द्र ने योगशास्त्र में, स्वामी कार्तिकेय ने कार्तिकेयानुप्रेक्षा में, उपाध्याय विनयविजयजी ने शांत सुधारस में, शतावधानी पंडित श्री रतनचन्द्रजी ने भावना शतक में भावनाओं का वर्णन किया है। द्वितीय अंग सूत्र सूत्रकृतांग में भी 12 भावना को संसार सागर पार करवाने का माध्यम बताया है। ''भावनाजोगसुद्धप्पा, जले नावा आहिया'' भावना योग से शुद्ध आत्मा जल में नौका की तरह होती है, जो संसार समुद्र को तैर कर परम मोक्ष पद तक पहुँच जाती है।

सूत्रकृतांग का उद्घोष गूंज रहा है- आत्मार्थी साधक! मैं कल्पवृक्ष हूँ। मुझमें बारह भावना रूपी शीतलता समाई हुई है। आओ, तुम्हें ठंडक मिलेगी। मैं अचला धरती हूँ तो मुझ पर बारह भावना रूपी नदियाँ बह रही हैं। आओ उनका पान करो। मैं अगर अध्यात्म देह हूँ तो मुझमें बारह भावना रूपी प्राण ऊर्जा है। आओ, तुम्हें शक्ति मिलेगी। मैं अगर पुष्प हूँ तो मुझमें 12 भावना रूपी पराग है। हे भव्य प्राणी! तुम्हें सुगन्ध मिलेगी। मैं नीरव आकाश हूँ तो मुझमें 12 भावना रूपी तारागण है। तुम्हें वैराग्य की जगमगाहट मिलेगी। मैं अगर आभूषण का भण्डार हूँ तो मुझमें 12 भावना रूपी बहुमूल्य आभूषण भरे हुए हैं। हे महावीर पुत्र! तुम्हें सम्पन्नता मिलेगी। मैं सूत्रकृतांग अगर गायक हूँ तो मुझमें बारह भावना रूपी स्वर है। हे मोक्षमार्ग प्रवासी! तुम्हें गुंजार मिलेगी। मैं अगर रणवीर हूँ तो रूपी मेरे पास बारह भावना शस्त्र है। तुम्हें मोह राजा से विजय मिलेगी।

***बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई, 2014 को आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुति**

सूत्रकृतांग कहता है मैं अगर पूज्य हूँ तो बारह भावना से मेरी पूजनीयता है। मैं अगर आराध्य हूँ तो 12 भावना से मेरी पूजनीयता है। मैं अगर आराध्य हूँ तो 12 भावना से मेरी आराध्यता है। मैं अगर आदरणीय हूँ तो 12 भावना से मेरी आदरणीयता है। मैं अगर मोक्ष साधन हूँ तो 12 भावना से मेरी साधनता है।

हे मोक्षप्रिय जीवात्मा! मेरी शैली बड़ी निराली है। मैं तुम्हें ज्ञानवान, दर्शनवान, चारित्रवान बनाने के लिए कुछ भी प्ररूपित करूँ यह मेरा प्रत्यक्ष अवदान है, पर तेरे हृदय में वैराग्य का किरमिची-रंग रंग देना मेरा उपहार है। हे वीतराग दत्तक! मैं तुम्हें संसार के मतों को समझाना चाहता हूँ तो मैं तुम्हें संसार से छुड़ाना भी चाहता हूँ, मैं तुम्हें पर मत का मर्म बताना चाहता हूँ तो मैं तेरी पराङ्मुखता मिटाना चाहता हूँ। मैं तुम्हें मिथ्या मान्यत्ताओं का परिचय देना चाहता हूँ तो साथ ही बारह भावना द्वारा मिथ्यात्व से छुड़ाना चाहता हूँ। मैं तुम्हें द्रव्य क्रियाओं के विषय का बोध देना चाहता हूँ तो भीतर के राग से निवृत्त भी करना चाहता हूँ। हे उपास्य के उपासक! मेरे समीप आए हुए को शुभ भावना नहीं सिखाऊँगा तो वह तो अशुभ भावना में रम जाएगा अर्थात् आर्त्त रौद्र में चला जाएगा यह मेरी स्वीकृति कभी नहीं हो सकती। जैसे गुरु के समीप जाने पर शिष्य में कृतज्ञ भावना बहती है, जैसे माता के पास जाने पर बालक में सौहार्द्र भावना बहती है, जैसे भगवान के पास जाने पर भक्त में भक्ति उमड़ती है वैसे ही जो साधक समर्पण भाव से मेरे समीप आएगा उसमें वैराग्य रूप बारह भावना उमड़ेगी व बहेगी।

1. अनित्य भावना-

हे परमात्म प्रिय आत्मान्! तू इस संसार को अनित्य जानना व तेरी आत्मा को नित्य जानना। मेरे द्वारा प्रथम अध्ययन से समझाया गया है कि कुछ अन्यमतावलम्बी आत्मा को भी अनित्य मानते हैं जिससे उनका पूर्वजन्म व पुनर्जन्म ही घटित नहीं होता। आत्मा ही अनित्य रहेगी तो उसके द्वारा किये कर्मों का फल भोग कौन करेगा? अत: मैं आत्म द्रव्य को नित्य प्ररूपित करता हूँ। इसके साथ पुद्गल की समस्त पर्यायों को मैं अनित्य घोषित करता हूँ। हे निर्मल दृष्टि साधक! झांक मेरी इस गाथा में ''गब्भाइं मिज्जंति बुयाबुयाणा, नरा परे पच्चसिहा कुमारा, जुवाणगा मज्झिम थेरगा य, चयंति ते आउक्खए पलीणा।।'' अर्थात् कई जीव गर्भावस्था में ही मर जाते है। कई अस्पष्ट बोलने की अवस्था में तथा कई बोलने की अवस्था आने से पहले ही चल बसते है। कई कुमार अवस्था में, कई युवा होकर, कई आधी उम्र में और कई वृद्ध होकर मर जाते है। सुन साधक! मृत्यु हर अवस्था में आ धरती है।

उत्पाद व ध्रौव्य के साथ त्रिपदी में व्यय धर्म भी प्ररूपित है। यह व्यय धर्म हर द्रव्य पर

प्रतिक्षण, प्रतिपल, प्रतिसमय अपना प्रभाव दिखा रहा है। इस अनित्य धर्म को समझाकर मैं तुझमें नित्य जगत की प्यास जगाना चाहता हूँ। हे साध्य के लिए गतिमान साधक! तू जब तक अनित्य केन्द्रित रहेगा अनित्य में अकडा हुआ व जकड़ा हुआ रहेगा तो नित्य पथ की तेरी वास्तविक यात्रा कितनी पीछे रह जायेगी। चलती आँधी के बीच कोई जलते हुए दीपक को लेकर चले तो कितना दुर्लभ है उसका प्रज्वलित रह पाना।

उस दीपक के समान ही है आयुष्य की ज्योत। ना जाने कौनसा हवा का झोंका इस ज्योत को अरोशन कर दे। हे आत्मगगन विहारी साधक! सुरो मेरी (1.2.1.2) गाथा को-

''डहरा वुड्ढा य पासह्य, गब्भत्था वि चयन्ति माणवा,
सेणे जहं वट्टयं हरे, एवं आउखम्मि तुट्टई।।''

देखो, युवक, बूढ़े यहाँ तक कि गर्भस्थ बालक तक चल बसते हैं। जैसे बाज पक्षी दबोच देता है वैसे ही काल जीव को दबोच देता है। बाज के सामने वह पक्षी निरा असहाय होता है। भले ही वह रुदन, क्रन्दन करे पर स्व रक्षा में सक्षम नहीं होता है, वैसे ही हे अनित्य भावना से भावविभोर साधक! काल के उपस्थित होने पर सभी जीवात्मा असहाय ही होते हैं।

संसार की चार गतियों में विशेष भोगों को समुपलब्ध देव गंधर्व, राक्षस, राजा, चक्रवर्ती, श्रेष्ठ पुरुष, ब्राह्मण सभी पुण्यशील जीवात्माएँ ''ठाणा ते वि चयंति दुक्खिया'' (1.2.1.5) दु:खी होकर अपने स्थान को छोड़ देते है। जीवात्मा वर्तमान अनुकूल पर्यायों को शाश्वत मानकर व स्वयं को अमर समझकर पुद्गलों व इन्द्रिय विषयों से अपना तादात्म्य सम्बन्ध मान बैठते हैं। लगता है जो है, जो प्राप्त है बस ये सब ऐसे ही बना रहेगा, उसी पर्याय में आसक्त, गृद्ध हो जाते हैं। पर हे जिनवाणी रसिक! मैं (सूत्रकृतांग) तेरी आँखों पर लगी पट्टी को खोलता हुआ यह बताना चाहता हूँ कि **''ताले जह बंधणच्चुए, एवं आउक्खयंमि तुट्टइ''** जैसे बंधन से टूटा हुआ ताल फल जमीन पर गिर पड़ता है इसी प्रकार विषय भोग की तृष्णा वाले तथा परिचित पदार्थो में आसक्त रहने वाले प्राणी अक्सर अपने कर्म का फल भोगते हुए आयु क्षीण होने पर इसी प्रकार मृत्यु को प्राप्त होते है। वे बेचारे विवश होकर बंधनों को बढ़ा लेते हैं।

आयुष्य टूटता है। जैसे घर का बर्तन, पेड का पत्ता, बच्चे का खिलौना टूटता है वैसे ही देह की हड्डी, श्वासों की धारा, प्राणों की शक्ति व आयुष्य की लड़ी भी टूट जाती है। बर्तन, खिलौना, पेन तो टूटा हुआ फिर से प्रयास से जुड जाता है। बड़ी-बड़ी मशीनों के पुर्जे भी अच्छे इंजीनियर के द्वारा पुन: जोड़ दिये जाते हैं पर हे साधना पथिक! **''न य संखयमाहु जीवियं।''** (1.2.2.21) टूटा हुआ मनुष्यों का जीवन फिर जोड़ा नहीं जा

सकता है। समस्त सर्वज्ञ मिलकर भी इस कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकते। यह सर्वज्ञों की असमर्थता नहीं, अपितु कार्य की असंभवता है। ऐसा भी मत समझ लेना कि पंचम आरे के मनुष्य की आयुष्य तो 100 वर्ष झाझेरा होती है तो मैं पिछली उम्र में अपना आध्यात्मिक मनोरथ सिद्ध कर लूँगा। अथवा मेरी उम्र जितनी होगी उतनी तो पूरी भोगूँगा। नहीं-नहीं हे जिनवाणी पीयूष ग्राहक! मैं सूत्रकृतांग (1.2.3.8) मर्म कथन करता हूँ कि-

''इह जीवियमेव पासहा, तरुणए वाससयाउ तुट्टई।
इत्तरवासे य बुज्झहा, गिद्धणरा कामेसु मुच्छिया।।''

अर्थात् कोई मनुष्य शतायु होकर भी युवावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। जैसे समुद्र में लहर उठती है और नष्ट होती रहती है इसी तरह आयुष्य भी प्रतिक्षण नष्ट होता रहता है। इसको आविचि मरण कहते हैं। अध्यवसाय आदि सात कारणों से आयुष्य बीच में टूट जाता है। अर्थात् पूर्व भव से 100 वर्ष की आयु साथ में लाया हुआ जीव निमित्त मिलने पर अल्पायु में ही मरण को प्राप्त कर लेता है, अत: साधक तू गहराई से अनित्यता को समझ व इसको अपनी स्वीकृति का विषय बिना। इस अनित्य धर्म में कुछ संशय मत कर। हे साध्य दृष्टि केन्द्रक! मेरे 8वें अध्ययन में मैंने समझाया कि-**''चइस्संति ण संसओ, अणियए अयं वासे''** सब छोड़ने होंगे इसमें किंचित् भी संशय नहीं है। सभी के साथ में वास अनियत है, अनित्य है। यह सब जानकर तू चिंतन कर कि जब सब छूट जाएगा, टूट जाएगा, बिखर जाएगा, बिगड़ जाएगा, मिट जाएगा, सिमट जाएगा, सड़-गल जाएगा, बिछुड जाएगा तो फिर उसकी शरण क्यों ग्रहण करता है? अगर तू नित्य का गवेषक बना तो अनित्य का मिलना व बिछुड़ना तेरे लिए अर्थहीन हो जाएगा। तेरा विशिष्ट स्वभाव प्रगट हो जाएगा। तू तेरे नित्य स्वरूप दशा से अविभक्त हो जाएगा।

2. अशरण भावना-

हे प्रशस्त विवेकी साधक! जो पदार्थ अनित्य है वे कभी तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेंगे। जो स्वयं प्रतिक्षण मृत्यु के ग्रास हो रहे हैं वे तुम्हें मृत्यु से भला कैसे बचाएगें? तुझे प्राप्त समस्त जड़ व चेतन संयोग मात्र कर्म सत्ता द्वारा कुछ समय के लिए तेरे समीप लाये गए हैं। यथार्थ तो यह है कि कर्मसत्ता हर क्षण संसार में शतरंज का खेल खेल रही है, कभी कुछ किसी के पास लाती है तो कभी वहाँ से उठा कहीं ओर रख देती है, कभी दूसरी चीज या जीव को समीप लाती है व कभी खाली ही छोड़ देती है। यहाँ किसी का कोई प्रभाव नहीं चलता, इस संयोग व वियोग की बाजियों में वही सुखी है जो पूर्णत: स्वाधीनता का आनन्द ले। पास में क्या आया व क्या गया उससे अप्रभावित रहे तो वह कर्मसत्ता के इस खेल से बाहर निकल जाता है।

हे आत्मविहारी साधक! मेरी 1.2.3.16 गाथा है-

''वित्तं पसवो य नाइयो, तं बाले सरणं ति मन्नइ।
एए मम तेसु वि अहं, नो ताणं सरणं न विज्जइ।।''

अर्थात् बाल जीव धन, पशु और जाति वालों को अपनी शरण या आश्रय स्थान मानता है और समझता है- ये मेरे हैं और मैं उनका हूँ। परन्तु उनमें से कोई भी आपत्तिकाल में त्राण तथा शरण देने वाला नहीं है।

हे जिनमार्ग प्रदानकर्त्ता! तेरे भीतर से ''एए मम तेसु वि अहं'' इस पंक्ति के संस्कार को परिपूर्णतः समाप्त कर दे। यह चिंतन तेरे हित में नहीं है। यह मान्यता तेरे विकास में अवरोधक है। यह स्वीकृति तुझे बाल की श्रेणी में पंक्तिबद्ध करने वाली है।

हे सत्यगवेषक! मेरे गाथा (1.9.5) में मैंने इसका विशेष मर्म प्रकाशित किया है-

''माया पिया ण्हुसा भाया, भज्जा पुत्ता य ओरसा,
णालं ते तव ताणाय, लुप्पंतस्स सकम्मुणा।।''

जन्म देने वाले माता-पिता, सहोदर भाई, अपनी स्त्री तथा अपने बेटे कोई भी दुःख से पीड़ित होते हुए उस पुरुष की रक्षा करने में समर्थ नहीं हैं। वे इस लोक में दुःख से रक्षा नहीं करते तो परलोक में तो रक्षा कर ही कैसे सकते हैं? जो तेरे द्वारा कृत उपकार को जानते हैं, जो तेरे प्रति विशेष सद्भाव रखते हैं, जो तेरे प्रति राग अथवा अनुराग रखते हैं। इस भव में भी वे सभी तुझे संरक्षित करने में समर्थ नहीं हैं। तो फिर परभव में शरण देने में, आश्रय देने में, सहयोग देने में कैसे समर्थ होंगे? अतः हे आत्मविद् साधक! तू पर को ताकना व पर की ओर झांकना बंद कर दे। यह जानना मात्र ही पर्याप्त नहीं । इनका परिज्ञा से ज्ञानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग करना भी अनिवार्य है। ये तुझे छोड़ेंगे तो तू किंकर्तव्यविमूढ़ बनकर दुःखी व पीड़ित होगा। इसी कारण मैं 1.10.19 वीं गाथा में समबोध का झरना बहाता हुआ समझाता हूँ कि-

''जहाहि वित्तं पसवो वा सव्वं, जे बांधवा जे य पिया य मित्ता।
लालप्पइ सो वि य एइ मोहं, अण्णे जणा तंसि हरंति वित्तं।।''

अर्थात् मृत्यु के पश्चात् व्यक्ति धन, पशु आदि सब पदार्थो को छोड़ेंगे। बांधव व प्रिय मित्र भी शरणभूत नहीं हैं। जब वह प्राणी मर जाता है तब दूसरे लोग उनका कमाया हुआ धन हर लेते हैं।

संसारी जीवों का चिन्तन स्वभाव से ही स्व सापेक्ष अधिक होता है। अतः ग्रंथकारों ने काव्यकारों ने, नीतिकारों ने संसार को स्वार्थ बहुल की उपमा से उपमित किया है। मैं तुझे सावधान करता हूँ कि जैसे पृथ्वी पर विचरते हुए मृग मरण की शंका के कारण से सिंह से दूर

ही विचरते हैं, इसी तरह बुद्धिमान पुरुष धर्म का विचार करके पाप को, पाप जनित संयोगों को दूर से ही छोड़ देते हैं। अत: हे साधनाप्रिय साधक! तू अपने जीवन का मूलमंत्र बना ले- "सव्वमेयं ण ताणइ" (1.1.1.5)। ये सभी रक्षा के लिए समर्थ नहीं हैं।

मैं सूत्रकृतांग तुझे अशरणता समझाकर तुझे अनाथ बनाना नहीं चाहता हूँ, मैं तुझे जिनेश्वर की, धर्म की, शरण देना चाहता हूँ। तुझे तेरी स्वभाव दशा की शरण देना चाहता हूँ

"एवं सत्ता महत्तरं, धम्ममिणं सहिता बहू जणा।
गुरुणो छंदाणुवत्तणा, विरत्ता तिन्न महोधमाहितं।।"

-सूत्रकृतांग, 1.2.2.32

आर्हतधर्म को मानकर, ज्ञानादिरत्नत्रय सम्पन्न होकर गुरु की आज्ञानुसार चलने पर अनेक साधकों ने इस विशालप्रवाहमय संसारसागर को पार किया है। यह मुझ सूत्रकृतांग के माध्यम से भगवान महावीर ने कहा।

3. संसार भावना-

संसार के समस्त प्राणी अनादिकाल से जन्म लेकर अन्त में मृत्यु की गोद में सोते हैं यह क्रम गतिमान रहता है। जन्म-मरण के इस चक्र को संसार कहते हैं। यह संसार दु:ख से भरा हुआ है। जीव विपरीत माध्यमों से सुख प्राप्ति का प्रयास करते हैं, पर इन्हें सुख के स्थान पर दु:ख ही अधिक प्राप्त होता है। हे जगतवत्सल साधक! मैं 1.1.1.26 वीं गाथा से उद्बोध देना चाहता हूँ कि-

"णाणाविहाइं दुक्खाइं अणुहोंति पुणो-पुणो।
संसारचक्कवालंमि, मच्चुवाहिजराकुले।।"

अर्थात् मृत्यु, व्याधि, वृद्धता से पूर्ण संसार रूपी चक्र में अज्ञानी जीव बार-बार नाना प्रकार के दु:खों को अनुभव करते है। नरक में वे आरा द्वारा चीरे जाते हैं। कुम्भीपाक में पकाये जाते हैं, गर्म लोहे में साट दिए जाते हैं, शाल्मलिवृक्ष से आलिंगन कराये जाते हैं, जिसका वर्णन विस्तार से नरक विभक्ति नामक अध्ययन में बतलाता हूँ। तिर्यंच योनि में जन्म लेकर जीवात्माएँ शीत, उष्ण, दमन, अङ्गन, ताडन, अतिभार वहन, क्षुधा, तृषा का कष्ट सहन आदि दु:खों को भोगते है। मनुष्य जन्म में इष्ट वियोग, अनिष्ट संयोग, शोक और रुदन आदि भोगते हैं। देवता होकर ईर्ष्या, किल्विषता, पतन आदि अनेक प्रकार के दु:खों को भोगते हैं। आशय यह है कि संसार में जीवात्मा किसी भी गति में सुख को प्राप्त नहीं करते हैं।

हे जिनभक्त साधक! अगली 27 वीं गाथा के मर्म को भी ध्यान से सुन जो कि मैं अपनी इच्छा से नहीं कहता हूँ वरन् तीर्थंकर की आज्ञा से कहता हूँ। वे अज्ञानी जीव ऊँच-

नीच नाना योनियों में भ्रमण करते हुए अनन्त काल तक निरन्तर एक गर्भ से निकलकर दूसरे गर्भ में निवास करते रहेंगे।

अनित्य भावना में संयोगों की क्षणभंगुरता, अशरण भावना में संयोगों की अशरणता व संसार भावना में उन्हीं संयोगों की निरर्थकता अभिप्रेत है। यदि तुझे भव-भ्रमण से बचना है तो संयोगाधीन दृष्टि का त्याग करना ही होगा। दत्तचित्त होकर सुनो 1.2.3.18 वीं गाथा का आशय-

''सव्वे सयकम्मकप्पिया, अव्वत्तेण दुहेण पाणिणो।
हिंडंति भयाउला सढा, जाइयजरामरणेहऽभिद्दुता।।''

संसार के उदर रूपी विवर में निवास करने वाले सब प्राणी संसार में पर्यटन करते हुए अपने किए हुए ज्ञानावरणीय आदि कर्म के प्रभाव से सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त-अपर्याप्त और एकेन्द्रिय आदि अवस्थाओं को प्राप्त करते हैं। सभी प्राणी सिर का शूल आदि अलक्षित दु:खों से दु:खी होते हैं। वे अरहट यंत्र की तरह बार-बार उन्हीं योनियों में जाते-आते रहते हैं। वे बार-बार भयभीत होते हैं। वे जन्म, जरा तथा मरण से पीडित रहते हैं। वे बार-बार गर्भावास को प्राप्त करते हुए संसार में भ्रमण करते रहते हैं। हे आप्तवाणी समर्पित साधक! मेरी 1.12.12 वीं गाथा इस संसार परिभ्रमणा का हेतु बताती है कि ज्यों-ज्यों मिथ्यात्व बढ़ता है, त्यों-त्यों संसार मजबूत होता जाता है। अत: संसार त्याग के लिए मिथ्यात्व त्याग अनिवार्य है।

हे आत्मगुप्त साधक! घबराना मत, व्याकुल मत बनना। यह संसार इस स्वरूप वाला है, दु:खरूप है, अब क्या होगा? यह संसार भले ही समुद्र है, पर हर समुद्र पार करने योग्य होता है, बस हमारे में उत्कृष्ट उत्साह, सच्चा सत्व, तीव्र लगन होनी चाहिए। मेरी 1.3.4.18 वीं गाथा-''एते ओघं तरिस्संति, समुद्दं व ववहारिणो।।'' अर्थात् जिस संसार में प्राणी दु:ख पा रहे हैं उसे इसी प्रकार पार करेंगे जैसे समुद्र के दूसरे पार में जाकर व्यापार करने वाला वणिक् लवण समुद्र को पार कर लेता है। इस समुद्र को अनेकों ने पार *किया है, पार कर रहे हैं व अनंत करेंगे। तेरा दु:ख तो अव्याबाध सुख में परिवर्तित हो* सकता है। हे स्वभावरमणशील साधक! अगर तू ''सुव्वते समिते चरे'' अर्थात् सुव्रतों में समित होकर विचरेगा, स्वभाव की महिमा को समझकर स्वभाव सन्मुख होगा तो निश्चय से ''संति निव्वाणमाहियं'' शांति रूप निर्वाण पद की प्राप्ति होगी। यह मेरा कथन तेरे लिए मार्गदर्शन रूप है, प्रोत्साहन रूप है, सत्य ज्ञान प्रदान रूप है साथ ही आशीष रूप भी है। तू स्वभाव का मंगलाचरण तो कर। संसार परिभ्रमण तेरा भूतकाल का विषय कहलाएगा व सिद्धत्व तेरा वर्तमान काल बन जाएगा।

4-5. एकत्व व अन्यत्व भावना-

एकत्व व अन्यत्व में अस्ति नास्ति का ही अंतर है। जिस बात का एकत्व भावना में अस्तिपरक चिन्तन किया गया है उसी बात का अन्यत्व भावना में नास्तिपरक चिन्तन होता है। एकत्व भावना में "मैं एक हूँ" इत्यादि प्रकार से विधिरूप व्याख्यान है तो अन्यत्व में देहादि पदार्थ मेरे से भिन्न हैं मेरे नहीं हैं इस प्रकार निषेध रूप से व्याख्यान है।

हे अनुपमलक्ष्य धारी! मेरा लक्ष्य तुझे वैराग्य के महासरोवर में डुबकी लगवाना है। मैं तुझे मेरी गोद में झुलाकर, मेरे सूत्रों को सिखलाकर सिद्ध बनाना चाहता हूँ। मैं सूत्रकृतांग किसी भी शरणागन्तुक साधक को अनंतकाल तक अपनी गोद में खिलाने की भावना नहीं रखता हूँ। जेसे जन्मदात्री माँ को बालक के गोद में खिलाना, झुलाना, लाड लडाना प्रिय होता है पर वह कभी नहीं चाहती कि जिन्दगी भर बालक गोद में ही सोता रहे ठीक वैसे ही मैं अभी तुझे वैराग्य के संस्कारों से संस्कारित कर सिद्धों की श्रेणी में पहुँचा दूँ, यही मेरी लक्ष्यबद्धता है।

हे आगमप्रिय पुत्र! सुन मेरी 1.2.2.12 वीं गाथा का हार्द- **"एगे चरे ठाणमासणे, सयणे एगे समाहिए सिया"** साधक अकेला विचरे, अकेला ही कायोत्सर्ग करे आसन व शयन आदि भी अकेला ही करता हुआ धर्मध्यान से युक्त रहे।

परद्रव्यों का संयोग है पर साथ नहीं, परद्रव्य संयोगी हैं पर साथी नहीं। संयोग में सहयोग शामिल करने पर साथ होता है। चित्त में "कोई साथ नहीं" इस चिन्तनधारा का अविराम प्रवाह ही एकत्व भावना है। यह एकत्व आत्मा की मजबूरी नहीं, सहजस्वरूप है। एकत्व तेरा स्वभाव है अनादिकाल में प्रतिसमय तू उसके साथ है और अनंतकाल तक रहेगा। यह एकत्व अखण्ड स्वाधीनता का सूचक व स्वावलम्बन का प्रेरक सूत्ररूप है। जन्मना-मरना-रोगादि का वेदन, संसार-परिभ्रमण सभी कुछ जीवात्मा को अकेले ही करना होता है। यह ज्ञानी के लिए आह्लाद का व अज्ञानी के लिए खेद का विषय है। पर संसर्ग को-"पलिगोव जाणिया।" सांसारिक जीवों का परिचय महानपंक है, यह जान लो।

हे उर्ध्वगमनशील साधक! मेरी 1.2.3.17 गाथा तेरे हृदय में उट्टंकित कर ले- "एगस्स गती य आगती, विदुमं ता सरणं न मन्नई"। उपार्जित कर्म उदय से जब जीव के दुःख आता है तब वह अकेला ही उसे भोगता है। रोग से पीडित जीव अपने स्वजन वर्ग के मध्य में रहकर भी अकेला ही दुःख भोगता है। स्वजन वर्ग उसके उस रोग को न तो घटा सकते हैं और न ही नाश कर सकते हैं। इस जगत में जीव अकेला ही जन्मता है, अकेला ही मरता है तथा इस संसार चक्र में वह अकेला ही आता है और अकेला ही जाता है इसलिए मरण पर्यन्त जीव को अपना हित सम्पादन करना चाहिए। "एक्को" जीव अकेला ही कर्म करता

है और अकेला ही उसका फल भोगता है। हे अनुभवसिद्ध साधक! अगर तू समाधि चाहता है तो देख मेरे 10 वें समाधि नामक अध्ययन में एकत्व की नदी प्रवाहित है- 12 वीं गाथा-

''एगत्तमेयं अभिपत्थएज्जा, एवं पमोक्खो ण मुसं ति पासे।
एसप्पमोक्खो अमुसे वरे वि, अकोहणे सच्चरए तवस्सी।।''

अर्थात् साधु एकत्व की भावना करे, क्योंकि एकत्व की भावना से ही निसंगता आती है। यह एकत्व की भावना ही उत्कृष्ट मोक्ष है। जो एकत्व में आन्तरिकता से रम जाता है वह मोक्ष जैसा सुख प्राप्त करता है व कालान्तर में मोक्ष चला जाता है, मुक्त हो जाता है।

हे गुणभूषित साधक! मेरे 13 वें यथातथ्य अध्ययन की 18वीं गाथा का भी यही संगान है-''एगस्स जंतो गइरागइ य'' जीव अकेला ही गति-आगति करता है।

जिस देह में यह आत्मा रहता है, जब वह देह भी आत्मा से भिन्न है तो जो क्षेत्र से भिन्न है उनकी क्या बात करें? वे तो सर्वथा भिन्न ही हैं। 'हे आत्मीय साधक! समझ- जो शरीर, मन, वाणी, मोह, राग-द्वेष यहाँ तक कि क्षणस्थायी परलक्ष्यी बुद्धि से भिन्न एक त्रैकालिक, शुद्ध, अनादि अनंत, चैतन्य ज्ञानानन्दस्वामी ध्रुवतत्व है जिसे आत्मा कहते हैं। ''अन्नो जीवो अन्नं सरीरं'' आत्मा अन्य है शरीर अन्य है। इस भावना से मैं सूत्रकृतांग तुझमें भेदज्ञान उत्पन्न कराना चाहता हूँ। तू चिन्तन कर कि- ''शरीर ऐन्द्रिय है, मैं अतीन्द्रिय हूँ, शरीर अज्ञेय है, मैं ज्ञाता हूँ, शरीर अनित्य है मैं नित्य हूँ, शरीर आदि अन्तवाला है और मैं अनाद्यनन्त हूँ। संसार में परिभ्रमण करते हुए मेरे लाखों शरीर अतीत में हो गए। मैं उनसे भिन्न ही हूँ।'' संयोग पर द्रव्यों से निज परमात्म तत्त्व की पारमार्थिक अत्यन्त भिन्नता का अनेक प्रकार से चिन्तन करना ही अन्यत्व भावना है। इस चिन्तन में पारमार्थिक निश्चयपक्ष प्रबल होता है। इन सभी से अन्यत्व का भान करवा कर आगे मैं 9.8 वीं गाथा से तुझे चेतावनी देना चाहता हूँ कि-

''चिच्चा वित्तं च पुत्ते य, णाइओ य परिग्गहं।
चिच्चाणं अंतगं सोयं, णिरवेक्खो परिव्वए।।''

अर्थात् धन, पुत्र, ज्ञाति, परिग्रह और आन्तरिक शोक को छोड़कर मुनि संयम का पालन करे। जो अन्यत्व भावना से भावित होने का महालाभ या महाफल है। इस एकत्व अन्यत्व भावना से भावित होने पर अनंतवीर्य उल्लसित होगा, आनंद सागर तरंगित होगा, देह देवल में विराजमान देवता के प्रदेश-प्रदेश में आनन्द की तरंगे उल्लसित हो उठेगी। देह देवल भी उसकी तरंगों से तरंगायित हो रोमांचित हो उठेगा, तेजोदीप्त हो उठेगा।

6. अशुचि भावना-

हे उत्तमोत्तम पथगामी साधक! मैं सूत्रकृतांग तुम्हें देह से पृथक् आत्मा जो निश्चय से

परिपूर्ण शुद्ध-विशुद्ध है उसमें रमण व विहरण करवाना चाहता हूँ। पर इस अध्यात्म के उत्तम गगन में विहरण में बाधक है देहासक्ति। उस देहासक्ति में उलझा हुआ जीव आत्मभावों के समीप कैसे पहुँच सकता है। इस देह से अनासक्त होने के लिए आवश्यक है देह की अशुचिता-अनिर्मलता-अपावनता-अपवित्रता का यथार्थ भान। अनेक आगमों में इस यथार्थ का बोध देने वाली अनेक गाथाएँ मिलती हैं। अनेक ग्रंथों में अशौच भावना के स्थान पर काम भोग भावना का वर्णन भी मिलता है। इसमें कामभोग की अशुचि प्रधानता एवं असारता के चिन्तन से निर्वेद की उत्पत्ति होती है। इसी का मैं सूत्रकृतांग उपदेश करता हूँ।

यह देह दुर्जन के समान है, क्योंकि इसमें भी दुर्जन के समान पोषण करने पर दुःख और दोष उत्पन्न होते हैं। शोषण करने पर सुख उत्पन्न होते हैं। इसका स्वरूप रमने योग्य नहीं है, अपितु यह छोड़ने योग्य ही है।

संसार में जितने भी पाँच इन्द्रिय के विषय हैं देह ही उनका भोक्ता है। हे महामानव! तू उसका भोक्ता नहीं है। मेरी 1.2.1.10 वीं गाथा कह रही है-

''पुरिसोरम पावकम्मुणा, पलियंतं मणुयाण जीवियं।
सन्ना इह काममुच्छिया, मोहं जन्ति नरा असंवुडा।।''

अर्थात् हे पुरुष पाप कर्मो से निवृत्त हो। यह मनुष्य जीवन शीघ्रता से दौड़ा जा रहा है। जो लाभ लेना है, वह ले लो। भोग रूपी कीचड़ में फंसा हुआ और कामभोगों में मूर्च्छित अजितेन्द्रिय मनुष्य हिताहित विवेक को खोकर मोह ग्रस्त होता है। हे अनंत ऐश्वर्यवान् जीवात्मा! चाहे स्व देह की चर्चा हो या परदेह की, अशुचि भावना में सभी देहों की चर्चा उनकी स्वभावगत अशुचिता के दिग्दर्शन के लिए ही होती है। क्योंकि अशुचि भावना के चिन्तन का प्रयोजन स्व-पर देह एवं तत्सम्बन्धी भोगों से विरक्ति उत्पन्न करना होता है।

हे 'मम' पद अध्येता! सत्य को जान।

''मा पच्छ असाहुया भवे, अच्चेही अणुसास अप्पगं।
अहियं च असाहु सोयई, से थणती परिदेवई बहुं।।''

—सूत्रकृतांग, 1.2.3.7

कहीं परभव में दुर्गति न हो, इस विचार से आत्मा को विषयसंग से दूर करो और उसे अंकुश में रखो। असाधुकर्म से तीव्र दुर्गति में गया हुआ जीव अत्यन्त सोच करता है। आक्रन्दन करता है व विलाप करता है।

अतः हे निवृत्तिरस आस्वादक! मैं सूत्रकृतांग तुझे चेतावनी देता हूँ कि अगर तुझे अपना भविष्यकालीन सुख अभिप्रेत है, प्रिय है तो अशुचि भावना के द्वारा दैहिक सुखासक्ति से निवृत्त हो जा। अगर आर्यक्षेत्र में जन्म लेकर तुझे मानव जीवन को सफल करना है तो मेरी

आज्ञा स्वीकार- "घुणे उरालं अणुवेहमाणे, चेच्चाण सोयं अणपेक्खमाणे" (1.10.11)। अर्थात् औदारिक शरीर की अपेक्षा न रखता हुआ साधक शरीर का शोक छोड़कर संयम में पराक्रम करे। जब तक शरीर की परवाह जीवित रहेगी तब तक संयम में हर परीषह- उपसर्ग में आह को अनुमति होगी। तपस्या आदि के द्वारा शरीर कृश भी हो जाए तो हे तपस्वी रत्न! उसकी परवाह न करना ही तेरे लिए हितकारी है।

7-8. आश्रव भावना व संवर भावना-

आश्रव निषेधात्मक रूप है व संवर विधेयात्मक रूप है। शरीरादि संयोगी पदार्थो में एकत्व ममत्व एवं इन्हीं शरीरादि के लक्ष्य से आत्मा में उत्पन्न होने वाली राग-द्वेष रूप विकल्प-तरंगें भावास्रव है, इन्हीं भावास्रवों के निमित्त से कार्मण वर्गणाओं का कर्मरूप परिणमित होना द्रव्यास्रव है तथा इस आस्रव का निरोध संवर है।

हे ध्येय प्रिय साधक! मैं तुझे आह्वान करता हूँ कि कोई भी जीव माता-पिता आदि के द्वारा मार्गभ्रष्ट कर दिया जाता है। उनके द्वारा फैलाए हुए मोह के जाल में जब जीव फँस जाता है तो उसे मरने पर सद्गति सुलभ नहीं होती। सद्गति के अभाव में इस संसार को भयरूप जानकर "आरंभा विरमेज्ज सुव्वते" (1.2.1.3) साधक आरम्भ से विरत व निवृत्त हो जाए तथा सुव्रतों का भावपूर्वक अनुपालन करें।

हे सुखानन्दी साधक! तुझे तो शाश्वत सुख की प्यास है ना, तुझे तो दुर्गति से घृणा है ना, तू अपना हित चिंतक है ना तो फिर तू प्रथमत: आस्रवत्यागी बन। क्योंकि जो जीवात्मा आरम्भ में आसक्त है, आत्मा को दण्ड देने वाले एकान्त रूप से प्राणिहिंसक हैं वे चिरकाल के लिए पापलोक अर्थात् नरक में जाते हैं। एक बार नरक गमन हो जाए तो जघन्य से जघन्य 10,000 वर्ष वहाँ रहना होता है व अधिक तो 33 सागरोपम तक अनवरत दु:ख भोगना पड़ता है। कदाचित् बाल तप आदि कर लिया हो तो आसुरी दिशा में जाते हैं। वहाँ वे दूसरों के दास रूप किल्विषी देव बनते हैं। परमाधामिक असुर बनते हैं। अत: इस आरम्भ के रास्ते का परिपूर्ण त्याग करने में ही तेरा श्रेय है।

मैं सूत्रकृतांग तेरी आत्मा का हितैषी बनकर तुझे यह निवेदन करना चाहता हूँ कि जैसे जन्मान्ध पुरुष छिद्र वाली नौका पर चढ़कर नदी पार करना चाहता है, परन्तु वह बीच में ही डूब जाता है इसी तरह मिथ्यादृष्टि अनार्य कर्मों के आस्रव रूप पूर्ण भाव स्रोत में डूबे हुए होते हैं। "सोयं कसिण भावण्णा, आगंतारो महब्भयं" (1.11.31)। उन्हें अंत में नरकादि में दु:ख रूप महाभय पाना पड़ेगा। इसके कारण वह जीव समाधि से अत्यधिक दूर चला जाएगा। आस्रव से सबसे बड़ी हानि यह है कि जीवात्मा निर्वाण मार्ग से दूर हो जाता है।

हे मुक्तिपथगामी साधक! मैं सूत्रकृतांग सभी जीवों के भूत, वर्तमान और भविष्य को

जानने वाला हूँ। ''नेयरो अन्नेसि अणन्नणेया, हु ते अंतकडा भवन्ति'' (1.12.16) जगत् के अनन्यनेता व संसार का अंत करने वाले बुद्ध-ज्ञानी-पुरुष हैं। वे मेरे माध्यम से यही कहलाना चाहते हैं कि तुम अर्थात् मम पाठक, मम अध्येता, मम श्रोता मिथ्यात्व रूप आस्रव का सर्वप्रथम त्याग कर दो। हे अप्रतिबद्ध साधक! ज्यो-ज्यों मिथ्यात्व बढ़ता है त्यों-त्यों संसार भी शाश्वत होता जाता है। अर्थात् संसार में भवभ्रमण बढ़ता जाता है। कभी राक्षस, कभी यमपुरवासी, कभी देवता, कभी गन्धर्व, कभी पृथ्वी निवासी, कभी आकाशगामी। ''पुणो-पुणो विप्परिया सुवेंति'' (1.12.13)। इनमें भिन्न-भिन्न रूपों में जन्म धारण करते हैं।

हे अद्भुत आत्मवान्! इसके ठीक विपरीत जिसने विषय भोग रूप आस्रव द्वारों को बंद कर दिया है जो रागद्वेष मल से रहित है, स्वच्छ है वही भविकात्मा अनुपम भावसन्धि मोक्षाभिमुखता को प्राप्त है। मोक्षाभिमुखता के लिए यह अनिवार्य शर्त है कि आस्रव का कारण मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय एवं योग, इनका निरोध होना चाहिए। संवर की भव्य आराधना होनी चाहिए। संवर महासुखमय है, संवर आस्रव के अभावपूर्वक उत्पन्न होने वाली स्थिति है। आस्रव संवर परस्पर विरोधी भाव हैं। कारण कि आस्रव दु:खमय व दुखदायक है व संवर सुखमय तथा सुखदायक है। संवर आस्रव का प्रतिद्वन्द्वी है, निषेधक है, उसका अभाव करके उत्पन्न होने वाला पराक्रमी सज्जनोत्तम योद्धा है। अनन्त आनन्ददायक है, वंदनीय है, अभिनन्दनीय है। शुभ संवर का वेष धारक ज्ञान आस्रव का संहारक है।

हे आत्मपिपासु! मैं सूत्रकृतांग संवर का स्वरूप बताता हूँ कि-

''विरया वीरा समुट्ठिया, कोहाकायरियादिपीसणा।
पाणे ण हणंति सव्वसो, पावातो विरयाऽभिनिव्वुडा।।''

-सूत्रकृतांग, 1.2.1.12

अर्थात् जो विरत है, जो वीर है, जो संयम में उपस्थित है, जो क्रोधादि परिग्रह से निवृत्त है जो सर्वथा प्राणियों की विराधना नहीं करते, जो पाप से निवृत्त हैं वे पुरुष शांत हैं। यही संवर की महिमा है अत: हे मम अध्येता! ''सुसंवडे चरेज्जसि'' तू सुसंवृत होकर विचरण कर। संवर की आराधना करके ही तू धर्मवान बन सकता है। धर्मवेत्ता बन सकता है, आगे धर्मप्रवक्ता बन सकता है। मैं सूत्रकृतांग अपने मार्ग नामक ग्यारहवें अध्ययन के माध्यम से सिखाना चाहता हूँ कि-

''आयगुत्ते सया दंते, छिण्णसोए अणासवे।
जे धम्मं सुद्धमक्खाति, पडिपुण्णमणेलिसं।।''

जो आत्मगुप्त है, सदा शांत है, मिथ्यात्वादि पाँच आस्रव स्रोतों का अवरोधक तथा आस्रव से रहित है वही इस परिपूर्ण, अनुपम, शुद्ध धर्म का उपदेश करता है या उपदेश करने की पात्रता रखता है। जो स्वयं आस्रव के नाले को रोका हुआ होगा वह ही अन्यों का भी आस्रव प्रतिबंधक होगा।

प्रश्नः- हे सूत्रकृतांग! अगर मैं आस्रव नहीं करूँगा तो मुझे क्या लाभ होगा। हे जिज्ञासु! लोक में पापकर्म को जानने वाले जो नये कर्म नहीं करते हैं उन महापुरुषों **''तिउट्टंति पावकम्माणि''** (1.15.6) के सभी पापकर्म टूट जाते हैं। जैसे कि जिस वृक्ष का सिंचन नहीं किया जाता उसकी जड़ें ढीली पड़ जाती हैं व कालान्तर में वह वृक्ष गिर जाता है। *''जेण जाति न मिज्जती''* (1.15.7) कर्मप्रवाह समाप्त होने पर जन्म-मरण का निरोध हो जाता है। यह उसे उसका चरम मनोरथ फल रूप प्राप्त होता है।

हे सूत्रकृतांग! आस्रव के त्याग व संवर की आराधना से जन्म-मरण नहीं होगा तो क्या होगा? हे स्वाध्याय लवलीन साधक! **''साहदूत्ताण से तिण्णा, देवा वा अभविंसु ते।''** (1.15.24) जो समस्त साधुओं को मान्य है उस पाप को करने वाले व संयम की साधना करने वाले अनेक जीव तिरे हैं तथा जिनके समस्त कर्म क्षय नहीं हुए हैं, वे वैमानिक देव हुए हैं।

बस इसी विश्वास के साथ हे साध्य प्रिय साधक! आस्रव द्वारों को बन्द कर दे व संवर के उपवन में निश्चिन्तता व निर्भीकता से रमण कर।

9. निर्जरा भावना-

कर्म की शक्ति को क्षीण करने में समर्थ बहिरंण व अंतरंग तपों द्वारा वृद्धि को प्राप्त शुद्धोपयोग ही भाव निर्जरा है। शुद्धोपयोग के प्रभाव से नीरस हुए कर्मो का एकदेश क्षय द्रव्य निर्जरा है। हे शुभ भावनाओं से भावित साधक! अशुद्धि का सम्पूर्णतः अभाव और शुद्धि की पूर्णतः प्राप्ति ही मोक्ष है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए मोक्ष की भावना से भी अधिक महत्त्व मोक्षमार्ग की भावना का है। अतः हे आत्मन्! तू अपने आपको मोक्षमार्ग में स्थापित कर उसी का अनुभव कर, उसी का ध्यान कर व उसी में विहार कर, अन्य द्रव्यों में विहार मत्त कर।

मैं सूत्रकृतांग मेरे दूसरे अध्ययन से सूचित करना चाहता हूँ कि कर्मक्षय के लिए अनशन के द्वारा देह को कृश कर देना, सुखा देना चाहिए।**''धुणिया कुलियं व लेववं, कसए देहमणासणादिहिं''** जिसका प्ररूपण मुनीन्द्र सर्वज्ञ प्रभु ने मेरे द्वारा किया है। और भी दत्तचित्त होकर सुनो- **''सउणी जह पंसुगुंडिया, विधुणिय धंसयती सियं रयं।।''** (1.2.1.15)। जैसे धूल से भरी हुई पक्षिणी अपने अंगों को, पंखों को फड़फड़ाकर शरीर में

लगी हुई रज को झाड देती है, उसी प्रकार भव्य उपधान आदि तपस्या करने वाला तपस्वी पुरुर्ष कर्म रज को झाड़ देता है।

धर्म की उत्पत्ति संवर, वृद्धि निर्जरा एवं पूर्णता मोक्ष है। आत्मशुद्धि ही धर्म है। अत: ऐसे कह सकते हैं कि शुद्धि की उत्पत्ति संवर, शुद्धि की वृद्धि निर्जरा, शुद्धि की पूर्णता ही मोक्ष है।

परन्तु हे आत्मार्थी साधक! समझो कि-''**ण कम्मुणा कम्म खवेंति बाला अकम्मुणा उ कम्म खवेंति धीरा।**'' अज्ञानी जीव सावद्य कर्म करके अपने कर्मों का क्षय नहीं कर सकते। धीर साधक ही कर्म का क्षय करते हैं। जो क्षय करते हैं वे ही मुक्ति को प्राप्त करते हैं।

प्रश्न:- हे आर्षवाणी सूत्रकृतांग! निर्जरा के लिए मैं क्या करूँ? हे जिज्ञासु! पण्डितवीर्य (सुसंयमवीर्य, तपोवीर्य) को प्राप्त करके पहले के अनेक भवों में किए हुए कर्मो का क्षय कर डालो व नवीन बंध ना करो तो तुम्हारी आन्तरिक अटल कामना की पूर्ति होगी।

10. धर्म भावना-

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र को धर्म के ईश्वर सर्वज्ञदेव धर्म कहते है। धर्मभावना में रत्नत्रय धर्म की अचिन्त्य महिमा बनाकर जीवन को धर्ममय बना लेने की पावन प्रेरणा दी जाती है। जिसका पावन प्रवाहन बनने का सौभाग्य मुझ सूत्रकृतांग को भी सम्प्राप्त हुआ है। हे अप्रतिम साधक! ''**हरए व सया अणाविले धम्मं पादुरकासि कासवं**'' (1.2.2.7) अगर तू कर्मों को धुनना चाहता है तो मेरा निवेदन है कि तू सरोवर की तरह सदा निर्मल रहकर भगवान महावीर के समता धर्म को आदर्श रूप में स्थापित कर।

हे जिनराधक! मैं उदाहरण द्वारा तुझे यह समझाना चाहता हूँ कि जैसे कुशल पासों से जुआ खेलता हुआ व्यक्ति कृत नामक चतुर्थ स्थान को ग्रहण करता है, कील को एवं द्वितीय व तृतीय स्थान को ग्रहण नहीं करता है। इसी तरह जगत् त्राता सर्वज्ञ द्वारा कथित अनुत्तर धर्म को भी वैसे ही ग्रहण करना चाहिए जैसे कुशल जुआरी समस्त स्थानों को छोड़कर ग्रहण करता है। ''**तं गिण्हं हितं ति उत्तमं।**'' (1.2.2.24) उसको ग्रहण करना हितकर व उत्तम है।

हे धर्मानुरागी साधक! यह मात्र स्वयं के लिए ही हितकारी नहीं है, अपितु जो धर्म में स्थिर है वे धर्म में स्थिर होने की योग्यता के कारण से एक-दूसरे को संभालते हैं। ''अन्नोन्नं सारेंति धम्मओ'' पुन: धर्म में स्थिर या प्रवृत्त करते हैं। अत: अधर्म द्वार रूप पंच इन्द्रियों आदि का त्याग करे। अधर्म तेरे संसार समुद्र में डूबने का कारण होगा, अत: हे विवेकी पुरुष! ''**णच्चा धम्मं अणुत्तरं कयकिरिए य ण यावि मामए**'' (1.2.2.28) अनुत्तर

धर्म को जानकर धर्मक्रिया का अनुष्ठान कर। जिन भी किन्हीं साधकों ने धर्म की अनुपालना की है उन्होंने "विरता तिन्न महोघमहितं" विशालप्रवाहमय संसार सागर को पार किया है। उन तिरे हुए तथा पहुँचे हुए गुणवान महात्माओं के जीवन को दृष्टि पथ पर रखकर हे जिनशासन तिलक! **"इमे च धम्ममादाय, कासवेणं पवेदितं, तरे सोयं महाघोरं अत्तताए परिव्वए"** (1.11.32)। भगवान महावीर के द्वारा प्ररूपित इस धर्म को ग्रहण करके शुद्ध मार्ग पर आरूढ हो दीर्घकालिक दु:खपूर्ण संसार सागर को पार कर।

प्रश्न:- हे सूत्रकृतांग! उस धर्म को जानने या नहीं जानने से क्या होता है? हे जिनोपासक! जैसे अटवी आदि प्रदेशों से भलीभांति परिचित नेता भी अंधेरी रात्रि में कुछ न देख पाने के कारण मार्ग को भलीभाँति नहीं जान पाता। परन्तु वही पुरुष सूर्य के उदय होने से चारों ओर प्रकाश फैलने पर मार्ग को भलीभाँति जान लेता है। इसी प्रकार धर्म सूर्योदय के समान है। (1.14.13)

हे हृदयालंकार साधक! आगे सुन, जो महापुरुष शुद्ध धर्म की व्याख्या करते हैं- **"अणेलिस्स जं ठाणं, तस्स जम्मकहा कुतो"** (1.15.19) वे सर्वोत्तम पुरुष के स्थान को प्राप्त करते हैं, फिर उनके लिए जन्म लेने की तो बात ही कहाँ? अर्थात् वे पुनरागमन का निराकरण कर लेते हैं वह ही तो तेरी मनोभावना है अत: धर्मभावना से स्वयं को सुरभित बना।

11. लोक भावना-

लोकभावना में छह द्रव्यों के समुदायरूप लोक और लोक की भोगोलिक स्थिति भी चिंतन का विषय बनती है। लोक भावना यह समझाना चाहती है कि यदि अपना हित चाहते हो तो सम्पूर्ण जगत् की सभी आशाओं को मिटाकर और मोहकर्म का नाश करके निज पद में स्थिर हो जाओ। यदि ऐसा कर सके तो तुम्हारा आवास लोक के शिखर पर होगा।

हे अप्रमत्त दशा सम्प्राप्त साधक! मैं सूत्रकृतांग अपने दूसरे सूत्रस्कंध से संदेश देता हूँ- **"नत्थि लोए अलोए वा नेव सन्नं निवेसए अत्थि लोए अलोए वा एवं सन्नं निवेसए"** (1.5.12)। लोक अलोक नहीं है ऐसी संज्ञा पर विश्वास मत करो। लोक है, अलोक है ऐसा विश्वास करो। हे आत्मार्थी साधक! मैं अपने प्रथम श्रुतस्कंध में जीवलोक के स्वरूप को बताता हूँ। नरक विभक्ति नामक पाँचवें अध्ययन में नरक का विवेचन सुनाकर एवं अंतिम गाथा में चारों गतियों का सूचन कर यह समझाना चाहता हूँ कि इस लोक में सभी जीवों को अपने शुभ-अशुभ कर्मो का फल मिलता है। अत: हे साधक! तू लोक स्वरूप को जानकर लोकाग्र में पहुँचने की साधना कर।

12. बोधि दुर्लभ भावना-

अपने को जानना, पहचानना, अपने में लीन हो जाना ही बोधि है। महाबोधि इस जगत् में दुर्लभ है, महादुर्लभ है। इस बोधि की दुर्लभता का विचार, चिन्तन, बार-बार चिन्तन ही बोधि दुर्लभ भावना है। इसको दुर्लभ जानकर इनका अत्यन्त आदर करो। हे स्वच्छ अध्यात्म गगन विहारि साधक! *''संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पेच्च दुल्लहा। णो हूवणमंति रातिओ, णो सुलभं पुणरावि जीवियं।।''* (1.2.1.1)

तुम बोध को प्राप्त करो, बोध क्यों नहीं प्राप्त करते? परलोक में संबोधि प्राप्त करना अवश्य ही दुर्लभ है। बीती हुई रातें लौटकर नहीं आती और संयमी जीवन फिर सुलभ नहीं है। पहले तो मनुष्य जीवन प्राप्त होना ही दुर्लभ है, फिर पाँच इन्द्रिय, स्वस्थता, दीर्घायु, सद्धर्म प्राप्ति आदि अनेक दुर्लभ घाटियाँ पार करने के बाद भी श्रद्धा नहीं तो सम्बोध प्राप्ति नहीं होती।

हे अशरीरदशा अभिलाषी! *''संबुज्झह जंतवो माणुस्सत्तं''* यह लोक ज्वरपीडित व्यक्ति की तरह एकान्त दुःखरूप है। अपने कर्म से सुख चाहने वाला जीव सुख के विपरीत दुःख ही पाता है। अतः मनुष्यत्व की दुर्लभता को समझो।

लोकोत्तर धर्म का आराधक अपने आत्मकार्य को सम्पन्न करके कृतकृत्य दशा वाली पंचमगति को प्राप्त करता है। *''अमणुस्सेसु णो तहा''* (1.15.16) मेरा फरमाना है कि मनुष्येतर जन्म में ऐसा होना सम्भव नहीं है। तुझे मनुष्य भव की प्राप्ति हो गई तो अब प्रमाद मत कर।

प्रश्नः- हे सूत्रकृतांग! क्या देव भी भव परम्परा का अंत कर सकते हैं। हे मम श्रोता! यह मान्यता मिथ्या है। ज्ञानियों ने अनेक बार कहा है- यह मनुष्यभव दुर्लभ है। कारण कि इसी भव में बोधि सुलभ होती है। (1.18.11)

चेत है साधक! *इओ वि समाणस्स पुणो संबोहि दुल्लहा, दुल्लाहो तहच्चाओ, जे धम्मट्ठं वियागरे।।* (1.15.18) अर्थात् एक बार मनुष्य भव ध्वंस हुआ कि फिर उसका पाना सरल नहीं है तथा यह तो मैं समझा ही चुका हूँ कि उसके बिना सद्बोध पाना सुलभ नहीं होता। ऐसी चित्तवृत्ति भी दुर्लभ होती है, जिससे धर्माराधना होती है। साधना के लिए यह तुझे अनुपम अवसर प्राप्त हुआ है। इसका जागृत व उत्साही बनकर लाभ उठा। हे जिनमत विश्वासी! सुन अतीत में अनेक वीर हुए हैं, भविष्य में होंगे जो उस दुर्लभ मार्ग पर चलकर, अन्यों को चलाकर *''दुण्णिणोहस्स मग्गस्स, अंतं पादुकरा तिण्णे''* (1.15.25)। संसार सागर को पार हुए है, होंगे व हो रहे हैं।

इस बोधि दुर्लभ भावना की महिमा अपार है, अपरम्पार है, इसके गीत जितने भी गाये

जायें कम है कारण कि यह आत्महित की ओर अग्रसर करने वाली परमभावना है।

मुझ सूत्रकृतांग में बह रही ये 12 भावनाएँ मुक्तिपथ का पाथेय तो है ही, लौकिक जीवन में भी अत्यन्त उपयोगी है। इष्ट वियोग और अनिष्ट संयोगों से उत्पन्न उद्वेगों को शांत करने वाली ये 12 भावनाएँ जीवात्मा को विपत्तियों में धैर्य एवं सम्पत्तियों में विनम्रता प्रदान करती है। मुझ सूत्रकृतांग में सुरक्षित ये 12 भावनाएँ विषय कषायों से विरक्त एवं धर्म में अनुरक्त रखती है। जीवन में मोह व मृत्यु के भय को क्षीण करती है। बहुमूल्य जीवन के एक-एक क्षण में आत्महित में संलग्न रह सार्थक कर लेने को निरन्तर प्रेरित करती है। जीवन के निर्माण में इनकी योग्यता असंदिग्ध है।

मुझ सूत्रकृतांग के द्वारा यह परमागम का रसास्वाद आत्मार्थी बंधुओं के लिए सादर समर्पित है इस पावन भावना और विश्वास के साथ कि सभी आत्मार्थी इसका भरपूर उपयोग करके निज उपयोग को निज में ही लगा देंगे, निज में ही जम जायेंगे, निज में ही रम जायेंगे। आत्मा की आराधना करके सहज ही सहजानंद को उपलब्ध हो जायेंगे।

जीवन बोध क्षणिकाएँ

श्रद्धेय श्री यशवन्तमुनिजी म.सा.

देह और देही

प्यार ही करना है तो
देह से नहीं देही से कर,
देह का प्यार पाप है इससे डर,
देही से प्यार धर्म है
इसे रुचि से कर,
ऐसा करने से आ जायेंगे तेरे
मुक्ति मार्ग में उड़ने के लिए पर (पंख)

साक्षी भाव (प्रयोग)

अशुभ विचारों से जूझना,
यानी अपनी शक्ति को खोना,
और पुनः दुःख के बीज बोना;
बस- द्रष्टा बन देखना,
नहीं कुछ सोचना और न ही
उसको आने से रोकना
सहज हो जायेगा उससे उबरना।

छाता

जिस दिन यह जीव बन जायेगा
द्रष्टा और ज्ञाता,
उस दिन इसके हाथ लग जायेगा
कर्मास्रव को रोकने का छाता।

अन्तर बोध

जिसने स्व के प्रति उपकार का
नहीं किया विचार,
वह क्या कर पायेगा
दूसरों का उपकार।

-संकलित

संगोष्ठी-प्रस्तुति

सूत्रकृतांग में पाँच महाव्रत

महासती श्री लक्षितप्रभाजी म.सा.

सूत्रकृतांग सूत्र मुख्यतः द्रव्यानुयोग के अन्तर्गत आता है, किन्तु कुछ महापुरुषों ने इसे चरणकरणानुयोग के अन्तर्गत समाविष्ट किया है। कारण यही है कि सिद्धान्त पक्ष को प्रकाशित करता हुआ यह आगम साधक जीवन की सुन्दर रूपरेखा प्रकाशित व प्रतिपादित करता है।

अग्गं व एवं परमा महव्वया, अक्खाया उ सराइभोयणा।।

-सूत्रकृतांग सूत्र, 2.3.3

जैसे इस लोक में व्यापारियों के द्वारा लाए हुए उत्तमोत्तम सामान को राजा-महाराजा आदि धनाढ्य लेते या खरीदते हैं, इसी प्रकार आचार्यों द्वारा प्रतिपादित पाँच महाव्रतों के गुणों को उत्तम पुरुष धारण/ग्रहण करते हैं। पाँच गुण इस प्रकार से हैं- अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

जो इन पाँच गुणों पर श्रद्धा रखता है, विश्वास करता है वह सम्यग्दृष्टि, जो इन गुणों का अंश रूप में पालन करता है वह श्रावक तथा जो इन गुणों का पूर्ण रूप से पालन करता है वह श्रमण कहलाता है। भगवान की भाषा में साधक संजय (इन्द्रिय पर विजयी), विरय (पापों से निवृत्त) पडिहय (पूर्व के पापों का नाश करने वाला)होता है।

साधक किसे कहते हैं ? जिसका साध्य निर्णीत है उसे साधक कहते हैं, बंधनों से मुक्ति ही साधक का साध्य है। प्रथम गाथा कह रही है- ''बंधणं परिजाणिया'' बंधन के स्वरूप को जानकर उसे तोड़ना चाहिए। बंधन हैं- जन्म-मरण, 18 पापों का सेवन। 18 पाप से विरति करके बंधनों को तोड़ना ही साधक का साध्य है। पाँच गुणों (अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) के धारण से बंधन टूटते चले जाते हैं। जो हिंसा से विरत हैं, जो संयम पालन में उद्यत हैं, जो परिग्रह को दूर करने वाले हैं वे पुरुष शान्त हैं।

1. अहिंसा

सूत्रकृतांग के प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देशक की तीसरी गाथा कह रही है- ''सयं तिवायए पाणे ..... वेरं वड्ढेति अप्पणो।'' जो व्यक्ति प्राणियों का वध करता है और करवाता है, वह मारे जाने वाले प्राणियों के साथ अपना वैर बढ़ाता है। हिंसा बंधन रूप है, हिंसा का आगम में प्रसिद्ध पर्यायवाची नाम प्राणातिपात है। हिंसा का अर्थ साधारण एवं जैनेतर जनता किसी स्थूल प्राणी को जान से मार देना, प्रायः इतना ही समझती है, इसलिए

*बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई, 2014 को आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुति

विशेष अर्थ का द्योतक प्राणातिपात शब्द रखा है। प्राण भी केवल श्वासोच्छ्वास नहीं, किन्तु इसके अतिरिक्त 9 प्राण मिलाकर 10 प्राण बताये हैं। इसलिए इस गाथा में कहा गया- 'सयं तिवायए पाणे', हिंसा वैर बढ़ाता है।

राग-द्वेष ये दोनों कर्मबंध के मूल कारण हैं। जब हिंसा अनुमोदी जाती है, तब राग-द्वेष की उत्पत्ति अवश्य होती है। आचार्य अमृतचन्द्र ने कहा है- 'रागद्वेषादि का प्रादुर्भाव न होना ही अहिंसा है। यह जिनागम का सार है। एक बार हिंस्य प्राणियों के साथ वैर बढ़ जाने के बाद जन्म-जन्मान्तर तक वैर परम्परा चलती रहती है। धर्म का मौलिक रूप अहिंसा है, सत्य आदि उसका विस्तार है। आचार्यों ने लिखा है- *'अवसेसा तस्स रक्खयं......'*। शेष व्रत अहिंसा की सुरक्षा के लिए हैं, काव्य की भाषा में अहिंसा धान है, सत्य आदि उसकी रक्षा करने वाले बाडे हैं, अहिंसा जल है और सत्य आदि उसकी रक्षा के लिए सेतु हैं। दूसरे सभी व्रत अहिंसा के ही पहलू हैं। फिर आगे बताया गया- *'सव्वे अक्कंत दुक्खा य अओ सव्वे अहिंसया।'* सभी प्राणी दुःख से पीड़ित हैं। सभी प्राणियों को दुःख अप्रिय है, इसलिए हिंसा करने योग्य नहीं है। किसी भी प्राणी को किसी भी रूप में पीडा देना, सताना, मारना आदि हिंसा है, हिंसा से प्राणियों को दुःख होता है। दशवैकालिक सूत्र भी तो कहता है कि समस्त जीव जीना चाहते हैं, इसलिए निर्ग्रंथ प्राणी-वध को घोर पाप मान इससे विरत होते हैं, आगे और गाथाओं के माध्यम से हिंसा सर्वथा त्याज्य है, हेय है। जैसे- *''एवं खु णाणिणो सारं, जं हिंसइ किंचणं।''* ज्ञानी उसे नहीं बताया गया है जो पोथी पण्डित हो, रटारटाया शास्त्र पाठ जिसके दिमाग में भरा हो, बल्कि ज्ञानी तो वह है जिसे आत्मवत् सर्वभूतेषु सिद्धांत का अनुभव ज्ञान हो। अहिंसा भी समता का कारण है, क्योंकि साधक अहिंसा का पालन या आचरण तभी कर सकता है जब वह प्राणिमात्र के प्रति समभाव रखे। *अहिंसा समयं चेव वियाणिया, समतानुभूति आने पर ही अहिंसा का आचरण हो सकता है।* आयतुला पयासु-अहिंसा की भावना को समझने और बलवान बनाने के लिए यह आत्मा तुला का सिद्धान्त उपयोगी है।

सूत्रकृतांग के हिंसा करना खुद का ही घात करना है। लक्ष्य की निश्चितता से जैसे आत्मबल बढ़ता है, वैसे निर्भयता से भी अहिंसा बढ़ती है। निर्भयता अहिंसा का प्राण है। मनुष्य में हिंसा का जन्म हुआ है, वह आकस्मिक नहीं है, इसके पीछे कारण रहे हुए हैं। अहिंसा एक महामार्ग है, हर कोई इस महान् मार्ग के प्रति समर्पित नहीं होता, किन्तु जो पराक्रमशाली वीर है, वे ही इस महान् मार्ग के प्रति समर्पित हो सकते हैं। अहिंसा में मैत्री है, सौहार्द है, एकता है, सुख शांति है। अहिंसा का स्वरूप मृदुता, संतोष, आसक्ति और अद्वेष है। अहिंसा हमारी स्वाभाविक क्रिया है। *'हत्थेहि पाएहि य संजमेता'* यानी हाथ

पैर का संयम रखते हुए किसी भी जीव की हिंसा न करें। संयम में ही अहिंसा है। यह आत्म-निष्ठा से फलित होती है। अध्यात्म जगत् में बाल जीव वे ही हैं जो अपने हिताहित से अज्ञ हों। जो हिंसादि पापकर्म करने में नादानी करके अपने आप को विनाश का निमंत्रण देते हैं। सार यही निकलता है कि अहिंसा से मोक्ष मार्ग की ओर बढ़ने में सुगमता होती है। समाधि की प्राप्ति होती है। जो प्राणियों के प्राणों का अतिपात नहीं करता, वह साधक त्राता और समितिवान् होता है, उससे पापकर्म वैसे ही दूर चले जाते हैं, जैसे कि ऊँचे स्थान से जल बहकर चला जाता है।

2. सत्य

यह साधक की दूसरी योग्यता है। जैन दर्शन की नींव में सत्यगुण का बड़ा महत्त्व रहा हुआ है। सूत्रकृतांग सूत्र इस गुण को लेकर सुन्दर दर्शाता है। सत्य अर्थात् मृषावाद से विरति, जो समितिवान् होता है, वह सत्य गुण का पालन कर सकता है। इस गुण को लेकर सूत्रकृतांग सूत्र के 'मार्ग' नामक ग्यारहवें अध्ययन में बताया गया कि भाषा समिति की पालना से सत्यव्रत अच्छी तरह से पलता है। उस साधक को फिर असत्य भाषण, असत्य कथन नहीं हो सकता। इस अध्ययन में बताया गया कि साधक अपनी भाषा का कैसे प्रयोग करे। अपनी भाषा से किसी को पीड़ा न हो, विराधना न हो, कहीं पर भी सत्यव्रत खंडित न हो ऐसी अपनी भाषा समिति हो। सूत्रकृतांग सूत्र कहता है- बोलता हुआ भी न बोलता सा रहे, जो साधक भाषा समिति से युक्त है, वह वचन विभक्ति को जानता है, अन्यान्य नियमों का ज्ञाता है, वह बोलता हुआ भी वचन गुप्त है। वस्त्रों का उपयोग करने वाला मुनि भी अचेलक कहलाता है, उसी प्रकार भाषा समिति से युक्त मुनि भी सत्य गुण का धारक कहलाता है। ग्यारवें अध्ययन में बताया गया है कि भाषा समिति का पालन करना कितना आवश्यक है, **'सच्चमेव समभिजाणाहि'** आत्म निग्रह का उपाय सत्य है, जो सत्य की धारा में उपस्थित है वह मेधावी मृत्यु को तर जाता है। **'सच्चम्मि धिइं कुव्वहा'** सत्य में धृति, सत्य में अनुशीलन। जो सत्य की आज्ञा में उपस्थित है वह मेधावी मृत्यु अथवा कामनाओं को तैर जाता है। आगे साधक को चेताया गया है, बोलने में जहाँ हिंसा हो रही हो, क्लेश बढ़ रहा हो, ऐसी भाषा का प्रयोग नहीं करे। भाषा समिति से सत्य गुण वर्धित होता है, सत्य से कर्मों का बंध नहीं होता। सूत्रकृतांग सूत्र के चौदहवें अध्ययन में पुनः बताया गया है- पाप का बंध हो, इस प्रकार के वचनों का प्रयोग न करें। भाषा समिति में सत्य कथन से पुनः पश्चात्ताप करना नहीं पड़ता। मृषावाद से सामने वाले को पीड़ा पहुँच सकती है क्योंकि उसको कहने का भान भी नहीं रहता। दसवें सूत्र का सातवां अध्ययन भाषा के लिए रखा गया है- साधक की भाषा कैसी हो। सत्य यदि सच हो पर सामने वाले के लिए

पीड़ा उत्पन्न करता हो तो वह सत्य भी बोलने से बचें तो फिर झूठ कैसे बोला जा सकता है। साधक के लिए कहीं पर भी झूठ बोलना, मिथ्या कथन करना स्वीकार्य ही नहीं है। जो सत्यव्रती होता है वह आचारवान होता है। उसमें अनेक गुणों का प्रादुर्भाव होता है। सत्य कथन से निर्भयता बढ़ती है और निर्भयता सम्यग्दृष्टि का गुण है, स्वयं में निर्भीकता बढ़ने से सामने वाले प्रत्येक जीव में अपनापन नज़र आता है। वह सभी को भयरहित करता चला जाता है। अनेक लाभ हैं सत्य गुण के तभी तो पाँच गुणों में इस गुण का भी नाम आता है।

3. अचौर्य

अचौर्य अर्थात् अदत्तादान से विरति। यहाँ सूत्रकृतांग सूत्र में अचौर्य को इस रूप में दर्शाया गया-भगवान् की आज्ञा में चलना, उनकी आज्ञा को स्वीकारना। इस आगम में भगवान ने साधक को अच्छी तरह से समझाया कि सदा कषायों पर विजय प्राप्त करता हुआ, साधक अपनी आत्म साधना करे। भगवान ने जो फरमाया उसे यदि पालन नहीं करते हैं तो उनकी आज्ञा की आराधना नहीं होने की चोरी लगती है। भगवान फरमा रहे हैं, सूत्र कहता है *'नो ताणं सरणं च विज्जई'* विद्वान् पुरुष साधक को अच्छी तरह जान लेना चाहिए कि कोई शरण रूप नहीं है, न तन, न धन, न परिजन। इसलिए इस तरह भगवान की आराधना करें जिससे अचौर्य महाव्रत गुण अच्छी तरह से पले। सूत्रकृतांग सूत्र बारहवें अध्ययन के माध्यम से साधक को कह रहे हैं, साधक मनोज्ञ शब्दों पर राग तथा अमनोज्ञ शब्दों पर द्वेष न करे, न जीने की इच्छा, न मरने की आकांक्षा करे। इस अचौर्य व्रत के अनुरूप जीवन जीने पर साधक सिद्धि को समुपलब्ध होता है, ऐसा सूत्रकृतांग सूत्र कहता है। इसलिए सारे गुणों को अपनाते हुए साधक आगे बढ़ता हुआ साध्य को प्राप्त करता चला जाता है।

4. ब्रह्मचर्य

मैथुन सेवन से विरति ब्रह्मचर्य है।, ब्रह्म अर्थात् आत्मा, चर्या यानी रमण करना अर्थात् आत्मा में रमण करना। सूत्रकृतांग सूत्र के दूसरे अध्ययन में बताया गया है कि 'अदक्ख कामा रोगवं' जो काम भोगों को रोगवत् देखता है। वह साधक मुक्त हो सकता है। गाथा कह रही है- कामभोग, कामवासना रोग के समान हैं। साधक को मुक्ति पाने में सबसे बड़ी बाधा है- कामवासना। कामवासना मन के किसी कोने में जब तक हलचल करती रहती है तब तक मुक्ति दूर रहती है। कामवासना की जड़ कामी है अथवा कामिनी है, वास्तव में कामिनी का संसर्ग ही साधक में कामवासना उत्पन्न करता है। जब तक यह संसर्ग नहीं छूटता, तब तक साधक ऊपर नहीं उठ सकता। जैन दर्शन में ब्रह्मचर्य का बहुत बड़ा महत्त्व रहा हुआ है। इस गुण को साधक की नींव कह सकते हैं। यह गुण अत्यन्त महत्त्व रखता है। तीसरे अध्ययन में बताया गया है कि अन्य मतवादी के अनुसार जैसे फुँसी या फोड़े को दबा

दें तो मुहूर्त में ही शांति मिल जाती है, इसी तरह समागम की प्रार्थना करने वाली स्त्रियों के साथ समागम से शांति हो जायेगी, ऐसा चिन्तन असत् है। जैन दर्शन में ब्रह्मचर्य में रमण करने वाले साधक के लिए कहा कि जिन साधकों ने स्त्रियों के संसर्ग से पीठ फेर ली है वे साधक समाधि में, स्वस्थ चितवृत्ति में स्थित रहते हैं-

जे हिं नारीणं संजोगा पूयणा पिहतो कता।
सव्वमेयं निराकिच्चा ते ठिआ सुसमाहिए।।

स्त्री परिज्ञा अध्ययन में बताया कि जिन साधकों ने स्त्री संसर्ग का त्याग कर दिया है, उसने सब कुछ पा लिया है। उत्तराध्ययन सूत्र का 32 वां अध्ययन कहता है- जैसे महासागर को पार करने के बाद गंगा नदी को पार करना कठिन नहीं है, ठीक उसी प्रकार ब्रह्मचर्य का गुण आ जाने पर सारे गुण अपने आप आ जाते हैं।

अनुकूल, प्रतिकूल दो प्रकार के उपसर्गों में स्त्री उपसर्ग को अनुकूल उपसर्ग में लिया गया है। स्त्री का उपसर्ग अत्यन्त दुःसह होता है। हर कोई सहने में समर्थ नहीं होते हैं, साधक को स्त्री-संसर्ग का वर्जन ही करना चाहिये। मुनि के लिए तो यहाँ तक कह दिया कि स्त्री परिचय मात्र से, संलाप से वह पथच्युत हो सकता है। ग्रन्थकार कहते हैं कि गंगा के बालुकणों को गिना जा सकता है, सागर के पानी का माप हो सकता है और हिमालय का परिमाण जाना जा सकता है, उसे तोला जा सकता है, किन्तु महिलाओं के हृदय को जान पाना विचक्षण व्यक्तियों के लिए भी दुष्कर है। स्त्रियों के संसर्ग से जो दोष पुरुषों में आपादित होते हैं वे ही दोष पुरुष के संसर्ग से स्त्रियों में भी आपादित होते हैं। समस्त दोष का मूल कारण है 'स्त्री संबंध'। जो साधक स्त्री का वर्जन करता है वह समस्त अपाय स्थानों से बच जाता है, अपनी आत्मा को दोषाविल होने से बचा लेता है। मैथुन से जो विरत होता है वह अपनी आत्मा और शरीर दोनों की रक्षा करता है। काठ से बनी स्त्री का सहवास निषिद्ध है तो चेतन स्त्री के साथ तो प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए ब्रह्मचर्य का गुण जीवन में आना अनिवार्य है, जिससे साधक अपने साध्य को पा सके। आचारांग सूत्र कहता है- **'थीभि लोगे पव्वहिए'** यह लोक स्त्रियों के द्वारा वशीभूत है। उदाहुवीरे अपमादो महामोहे, महामोह-स्त्रीवेद, पुरुषवेद। विषय सेवन की अभिलाषा जो विषय है, वह आधार है, जो आधार है वह विषय है। कामभोग महाभयंकर है। आत्म रमण का लक्षण है ब्रह्मचर्य।

5. अपरिग्रह

यह इस कड़ी में पाँचवाँ गुण है परन्तु पहले चार व्रतों का संरक्षण करता है। परिग्रह को घटाने से, पहले जो हिंसा आदि चारों पाप कहे गये हैं। इन पर रोक लग सकती है। पाप और सांप दोनों ही जगत् में भयंकर माने जाते हैं, दोनों से बचकर रहना विवेकी मनुष्य के लिए

अनिवार्य है। प्रभु महावीर ने जिन पापों से बचने के लिए व्रत नियमों का विधान किया है, उनमें पाँचवाँ परिग्रह से विरत होना बताया गया है। अपरिग्रह को समझने के लिए, परिग्रह का ज्ञान होना आवश्यक है। परिग्रह की व्याख्या करते हुए कहा गया है- 'परिगृह्यते आदीयतऽस्मादिति परिग्रहः।' मूर्छाभावेन मतिबुद्ध्या गृह्यते इति परिग्रहः।' सूत्रकृतांग सूत्र (2.2.10) कहता है- परिग्रह दुःख देने वाला है और परलोक में भी दुःख देने वाला है तथा वह विध्वंस, विनश्वर स्वभाव वाला है। ऐसा जानने वाला पुरुष कौन है, जो गृह निवास कर सकता है? परिग्रह उभयलोक में दुःखदायी है। पदार्थों को प्राप्त करने में दुःख है, उनकी रक्षा करने में, उनके व्यय में भी दुःख होता है तथा वियोग में भी दुःख होता है। माता-पिता आदि स्वजनों के प्रति ममत्व रूप परिग्रह दुःखदायी है। इस लोक में किया गया परिग्रह कर्मबंधन कराने वाला है। समाधि अध्ययन भी कह रहा है- जो भिक्षु परिग्रह नहीं करता वह समाधि को प्राप्त करता है। परिग्रह बढ़ने से दुःख शांत नहीं होता। परिग्रह कर्मों के भार को हल्का नहीं करता, बल्कि बढ़ाता है। 'मार्ग' नाम के ग्यारहवें अध्ययन में भी बताया गया, जो कोई परिग्रह आदि रखता है उनसे त्यागवर्धक शुभ ध्यान कैसे होगा? सुख की यात्रा का प्रारम्भिक बिंदु सम्यग्दर्शन है। सम्यग्दर्शन का अर्थ है स्व तथा पर के स्वरूप का निश्चय। इस निश्चय से व्यक्ति बाहर सुख ढूंढने की बजाय भीतरी सुख की अभीप्सा करने लगता है। यह अपरिग्रह का प्रारम्भिक बिन्दु बन जाता है। विज्जं कोऽगारमावसे? सत्य को जानकर कौन घर में रहना चाहेगा? परिग्रह दोनों लोक में दुःख देने वाला है। विनश्वर स्वभाव वाला है इसलिए कौन पुरुष गृह निवास कर सकता है? यहाँ साधक के गुणों की शृंखला में पाँचवें अपरिग्रह की बात बतायी जा रही है। इसी सूतकृतांग सूत्र के 15 वें अध्ययन में बताया गया कि मोक्षाभिमुख साधक कौन? जो लिए हुए पाँच व्रतों, पाँच महाव्रतों पर कृतप्रतिज्ञ दृढ़ रहता है। जहाँ भी साधन की बात बतानी हो, गुणों की बात कहनी हो तो इन पाँच गुणों को सबसे पहले लिया जाता है। वहीं 16 वां अध्ययन कह रहा है- भिक्षु, माहण, श्रमण, निर्ग्रंथ वे होते हैं जो बाह्य आभ्यंतर परिग्रह से रहित होते हैं। परिग्रह जहाँ तक होता है वहाँ तक हिंसा भी होती है। इसलिए परिग्रह हिंसा को पुष्ट करता है। जो भी जीव लक्ष्य से अभिन्न होना चाहते हैं, उन्हें वास्तव में भोग और संग्रह छोड़ना होगा। परिग्रह एक विशाल वृक्ष है जिसके क्लेश स्कंध लोभ हैं। इसलिए सूत्रकृतांग सूत्र चेता रहा है कि अपरिग्रह की साधना हमें अपरिग्रही बनकर करनी है।

अंत में सारांश यही निकलता है कि पाँच गुणों का जीवन में बड़ा महत्त्व रहा हुआ है। सूत्रकृतांग सूत्र सुन्दर रूप से कहता है- अतीत में जो भी सिद्ध हुए हैं इन पाँच गुणों के पालने से, स्वीकारने से हुए हैं। ये तो सामान्य गुण, मूल गुण रहे हैं। रुचियाँ भिन्न हो सकती हैं,

परन्तु पाँच गुणों को तो सभी को अपनाना पड़ेगा प्रारम्भ में कहा जा चुका है, जो इन पाँच गुणों पर विश्वास करता है वह सम्यग्दृष्टि और जो इनको आंशिक रूप से पालन करता है वह श्रावक, जो सेवार्थ पालन करता है वह श्रमण होता है। और फिर आगे चलकर वही साधक अरिहंत, सिद्ध बन कृत कृत्य हो जाता है। नित्य योग के लिए आत्मानुभूति होना आवश्यक है, जिसमें ये पाँच गुण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होते हैं।

तीन कविताएँ

डॉ. रमेश ''मयंक''

1. भोजन–

भरपेट– पशु खाते,
यथा आवश्यकता ग्रहण कर्त्ता
चतुर कहलाते,
स्वाद को सर्वोपरि मानने वाले
मूर्खों की श्रेणी में आते
और– संतजन
साधना; तपस्या के लिए
शरीर चलाने योग्य खाते।

2. दुःख–

भूल का परिणाम
भूल का त्यागकर
दुःख को अलविदा कहो
सुखद क्षणों की
आलोक धारा से प्रकाशमान रहो।

3. स्वाध्याय–

स्वाध्याय का पौधा
बहुआयामी चिन्तन विकसित करता
पढ़ने, समझने– चिंतन करने से
आत्मा, मन–बुद्धि के लिए
ज्ञान–ऊर्जा का द्वार खोलता
दीर्घकाल तक फलदायी कहलाता है
व्यक्तित्व के साथ में
प्रखरता का विशेषण स्वतः जुड़ जाता है।

–बी–8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़–312001 (राज.)

संगोष्ठी-प्रस्तुति

सूत्रकृतांग में उपमाओं का सौन्दर्य

महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा.

जैन दर्शन के मूल आगम 'अनुयोगद्वार' सूत्र में प्रमाण के चार भेद प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान व आगम बताए गए हैं। वहाँ उपमान प्रमाण के दो भेद साधर्म्योपनीत व वैधर्म्योपनीत कहे गए हैं।

साधर्म्योपनीत के तीन भेद हैं- 1. किंचित् साधर्म्योपनीत अर्थात् पर्वत सरसों के समान बताना इसमें किंचित् साधर्म्य है। 2. प्राय: साधर्म्य अर्थात् गवय गाय के समान है। 3. सर्वसाधर्म्यता अर्थात् अरिहंत अरिहंत के समान है। सूत्रकृतांग में साधर्म्यता का अनेक अध्ययनों की अनेक गाथाओं में वर्णन हुआ है।

भाव प्रमाण के गुण-नय-संख्या तीन भेद किए गए हैं और पुनः संख्या भाव प्रमाण के 8 भेदों में चौथे भेद औपम्य के 4 भेद हैं। उनमें प्रथम सत् को सत् की उपमा अर्थात् भगवान महावीर के समान ही भगवान पद्मनाभ होंगे। द्वितीय सत् को असत् की उपमा अर्थात् नारकी की स्थिति को बताने के लिए पल्योपम सागरोपम से समझाना। असत् को सत् की उपमा अर्थात् एक पुष्प दूसरे पुष्प से कहता है अभी तो मिले हैं ना जाने फिर कब मिलेंगे? फूलों का मिलना सत् है व फूलों का कहना असत् है। चतुर्थ असत् को असत् की उपमा अर्थात् घोड़े के सींग, गधे के सींग के समान होते हैं। न तो घोड़े के सींग हैं न गधे के सींग होते हैं। यह असत् को असत् की उपमा है। सूत्रकृतांग की उपमाएँ सत् को सत् की उपमा रूप है।

आगम की उपमाएँ अलंकार रूप भी हैं तो आवश्यकता रूप भी हैं। सरलता का हेतु भी है तो सुन्दरता रूप भी है। यह रोचकता का कारण भी है तो रुचिवर्धक भी है।

अधिकांशत: देखा जाता है कि बाल विद्यालय का शिक्षक विश्वविद्यालय का शिक्षक नहीं होता तथा विश्वविद्यालय का शिक्षक बाल वय वालों को नहीं पढ़ा पाता। सूत्रकृतांग ज्ञानी-प्रबुद्धजनों का शिक्षक रूप आगम भी है तो साथ में अल्पज्ञ-अल्पमति वालों को उपमा, रूपक आदि के द्वारा प्रबोध कर्ता भी है। उपमाएँ भी वास्तविकता के पट खोलने वाली होती हैं। सुनने को मिला कि अध्ययन की एक शैली knowing (ज्ञान) से unknowing (अज्ञात) की ओर होती है। जो चीज हम जानते हैं उससे नहीं जाने हुए ज्ञेय

*बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई, 2014 को आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुति

विषयों की जानकारी गुरु द्वारा, आगम द्वारा प्रदान की जाती है।

सूत्रकृतांग में दृश्यमान जगत् की कुछ उपमाओं को लेकर शास्त्रकारों ने अज्ञात विषयों का ज्ञान करवाया है। प्रथम श्रुतस्कन्ध के 1.2.7 से 11वीं गाथा में-

1. जैसे हरिण शंकित स्थानों पर शंका नहीं करता व अशंकित स्थानों पर शंका करता है वैसे ही अज्ञानी एकांतवाद में शंका नहीं करता है व अनेकांतवाद में शंका करता है।
2. हिरण पैरों में पड़े बंधन से छूट सकते हैं पर वे उसे बंधन ही नहीं समझते इसीलिए बंधन में पड़े रह जाते हैं। अज्ञानी भी अपनी मिथ्या मान्यताओं को बंधन नहीं समझते।
3. मृग बंधनों से फँसते हैं वैसे ही अज्ञानी कर्मो से बंधते हैं।
4. मृग भयभीत व आकुलित-हृदय रहता है, वैसे ही अज्ञानी हर समय निश्चिंत हृदय नहीं रह पाते।
5. मृग को मरणावस्था प्राप्त होती है व अज्ञानी को दुर्गति प्राप्त होती है।
6. मृग जहाँ नहीं जाना चाहते वहाँ जाते हैं व जहाँ जाना चाहिए वहाँ नहीं जाते। अज्ञानी अहिंसा पथ पर नहीं बढ़ते व हिंसा आदि के पथ पर बढ़ जाते हैं।

अज्ञानी की दिग्मूढता बताते हैं कि-

वणे मूढे जहा जंतुं, मूढणेताणुगामिए।
दुहओ वि अकोविया, तिव्वं सोयं णियच्छति।। -1.1.2.18

अर्थः- वन में दिग्मूढ बना हुआ मनुष्य दिग्मूढ़ नेता का अनुगमन करता है तो वे दोनों मार्ग को नहीं जानते हुए घने जंगल में चले जाते हैं।

1. एक दिङ्मूढ़ व्यक्ति दूसरे दिङ्मूढ से पूछता है पाटलीपुत्र कहाँ है? उसे पाटलीपुत्र का रास्ता पता नहीं होता और गलत रास्ता बता देता है। दोनों साथ-साथ चलते हुए पथच्युत हो जाते हैं। इसी प्रकार अध्यात्म की दिशा में मूढ़ बना गुरु शिष्य बना कर उसे रास्ता दिखाता है। दोनों ही रास्ता नहीं जानते हुए भ्रमित हो जाते हैं।
2. परिणाम- **तिव्वं सोयं नियच्छइ**- दोनों ही तीव्र शोक को प्राप्त होते हैं।
3. द्रव्य राहगीर को आगे जाकर कांटे-कंकर मिलते हैं अथवा पगडण्डी ही समाप्त हो जाती है। मिथ्यामतियों को मद-अहंकार के, अज्ञान व मोह के कांटे चुभते हैं व अंत में वे किंकर्तव्यमूढ़ हो जाते हैं।

मिथ्यामती की पथभ्रष्टता- ''अंधो अंधं पहं णिंतो''। (1.1.2.19)

अर्थः- एक अंधा दूसरे अंधे को मार्ग में ले जाता हुआ दूर उत्पथ में अर्थात् दूसरे मार्ग में पहुँच जाता है।

समानता-1. अंधे के पास चक्षु नहीं होते, अज्ञानी के पास ज्ञानचक्षु नहीं होते। 2. अंधा

सामने आए विषय को भी नहीं जानता, अज्ञानी प्रत्यक्ष अनुभव में आए सत्य तत्त्व को भी नहीं जानते। 3. दूरस्थ विषय अंधा नहीं देख पाता, अज्ञानी जीव दीर्घद्रष्टा होकर अपने आत्महित को नहीं देख पाता। 4. पादस्पर्श से मार्ग को पहचानता हुआ अंधा जीव क्षणभर सही मार्ग पर चलता है, फिर उत्पथ पर चला जाता है। वहाँ काँटे, सर्प, हिंसक पशु होते हैं जिनसे वह दुःखी होता है इसी प्रकार बाल जीव पाप कर्मों से दुःखी होते हैं। 5. अंधे अगर चक्षुमान नेता चुनते तो वे पार हो सकते थे वैसे ही अज्ञानी भी वीतराग वाणी को अपना नेता बनाते तो पार हो सकते थे। 6. पथ पर ले जाने वाला अंधा व साथ जाने वाला अंधा दोनों आगे जाकर किसी कुएँ में गिर जाते हैं अथवा खाई में गिर जाते हैं वैसे ही अज्ञानी दुर्गति में गिर जाते हैं।

मोहमूढ जीवों का संसार पार असंभव–

जहा आसाविणिं नावं जाइअंधो दुरूहिया। (1.1.2.31)

अर्थः– जैसे जन्मान्ध मनुष्य सछिद्र नौका में बैठकर समुद्र के पार जाना चाहता है, किन्तु वह पार नहीं होता।

विशेषता– यहाँ आसाविणिं शब्द आया है जिसका अर्थ है छिद्रयुक्त नौका।

वह जन्मान्ध जो नौका के अग्रमुख को पश्चात् भाग को, नाव खेने के उपकरण को नहीं जानता। उसने कभी पूर्व में इन सभी साधनों को नहीं देखा। वह जन्मान्ध अछिद्र को भी नहीं चला सकता तो छिद्र वाली को कैसे चलाएगा?

प्रसंग– एक जन्मान्ध बिना दीवार की नौका में बैठ जाता है, बैठने से पूर्व नौका की जानकारी भी प्राप्त नहीं करता। बीच समुद्र में जाकर नौका डूबने लगती है, नाविक बोलता है नौका तो डूब रही है तुम्हें तैरना पड़ेगा। जन्मान्ध को तैरना भी नहीं आता व किनारा भी नहीं दिखता। वह डूब जाता है।

समानता– 1. नौका के समान यहाँ धर्म को लिया गया है व जन्मान्ध के तुल्य अज्ञानी जीवात्मा को तथा नाविक के समान मिथ्यावादी गुरु माना है। 2. जैसे नौका खण्डित भी है व सछिद्र भी है वैसे ही उनका दर्शन अपूर्ण है। 3. जन्मान्ध तैर नहीं सकता वैसे ही अज्ञानी संसार सागर में तैर नहीं सकता। 4. जन्मान्ध नाविक को कोसता है, वैसे ही अज्ञानी अपने गुरु को कोसता है। 5. जन्मान्ध के लिए डूबते समय कोई विकल्प व सहारा शेष नहीं रहता वैसे ही अज्ञानी के दुर्गतिगमन के समय कोई त्राण रूप नहीं रहता।

तप की उपादेयता–

'धुणिया कुलियं व लेववं, कसए देहमणासणादिहिं' (1.2.1.14)

जैसे गोबर आदि से लीपी हुई भीतं को धक्का देने पर उसका लेप दूर हो जाता है और

वह कृश हो जाती है वैसे ही अनशन आदि के द्वारा देह को कृश करो।

रक्तमांस की अधिकता काम-केन्द्र को उत्तेजित करती है। वह ऊर्जा केन्द्र भी है, मैथुन भाव रहने से ऊर्जा उर्ध्वगामी नहीं होती। तप-संयम द्वारा स्थूल शरीर को कृश करने से कार्मण शरीर कृश होता है। कार्मण शरीर के कृश होने से सत्ता में स्थित राग-द्वेष कृश होते हैं व राग-द्वेष कृश होने से मोह कृश होता है। परिणामतः ज्ञान, दर्शन, चारित्र का विकास होता है। भीतर में प्रेम का स्रोत प्रवाहित होने लगता है।

1. साधारणतया दीवार के पार की वस्तु हमें नहीं दिखती-दीवार हटने पर व्यवधान दूर हो पाता है। किन्तु कार्मण शरीर में स्थित ज्ञानावरण के क्षय होने से सर्वज्ञता सर्वदर्शिता फलित होती है।
2. गोबर की दीवार धीरे-धीरे पतली होती है, फिर गिर जाती है। ईंट-चूने की दीवार पतली करके नहीं गिराई जाती। अतः शास्त्रकारों ने गोबर की दीवार का उदाहरण दिया है। शरीर कृश करने का विदेहता प्राप्ति का उपदेश है।
3. गोबर गाय का विकार है, जिससे दीवार बनी है। मनुष्य का देह भी अशुचि से निर्मित है।

श्रमण की निर्लिप्तता

सउणी जह पंसुगुंडिया विधुणिय धंसयई सियं रयं। (1.2.1.15)

अर्थः- पक्षिणी धूल से अवगुंठित होने पर अपने शरीर को कंपित कर, लगे हुए रजकणों को दूर कर देती है, वैसे ही राग-द्वेष रहित तपस्वी श्रमण तपस्या के द्वारा कर्मों को क्षीण कर देता है।

समानताः- 1.पक्षी व श्रमण अप्रतिबद्ध विहारी होते हैं। 2. पक्षी के पंख हल्के होते हैं, वैसे ही श्रमण की आत्मा कर्म क्षय से हल्की बनी हुई होती है। 3. पक्षी गगन विहारी होते हैं, वैसे ही श्रमण अध्यात्म गगन विहारी होते हैं। 4. पक्षी व श्रमण दोनों स्वभाव से विप्रमुक्त होते हैं। 5. पक्षी व श्रमण दोनों की प्रियता ऊर्ध्वगामिता में होती है।

अकषायी की कर्म-विमुक्ति-

तसयं व जहाइ से रयं, इह संखाय मुणी न मज्जई। (1.2.2.1)

अर्थ- जिस प्रकार सर्प अपनी केंचुली को छोड़ देता है वैसे ही मुनि रज को छोड़ देता है। अकषाय अवस्था में रज क्षीण होती है।

समानता- 1. सर्प का देह-विकार केंचुली है। आत्मा का विकार राग-द्वेष है। 2. केंचुली पतली झिल्ली होती है फिर भी सर्प के लिए वह बाधक है वैसे ही पतला कषाय भी साधक

के लिए बाधक है। 3. सर्प केंचुली को त्यागता है और पीछे मुड़कर नहीं देखता, वैसे ही पूर्ण अकषायी पुनः कषायी नहीं बनते।

परीषह हत की अवस्थाएँ-

माया पुत्तं ण जाणाइ, जेएण परिविच्छए। (1.3.1.2)

अर्थ- माता अपने पुत्र को नहीं जान पाती। विजेता के द्वारा क्षत-विक्षत होने पर वे दीन हो जाते हैं।

विशेष- जब भयंकर युद्ध होता है व गाँव लूटा जा रहा होता है तब भगदड़ मचती है उस समय माता को यह ध्यान ही नहीं पड़ता कि उसका पुत्र उसकी गोद से गिर गया है या कहाँ पर बिछुड़ गया। बाद में जब समझ आती है तब वह पुत्र विरह में रोती है।

समानताः- 1. माता को पुत्र से प्रेम होता है, साधक को संयम से प्रेम होता है। 2. युद्ध में बालक बिछुड़ता है। परीषहोदय से संयम छूट जाता है। 3. युद्ध में माँ बालक को नहीं पहचान पाती, परीषह उपसर्ग के समय संयमी अपने स्वरूप को आत्मा के वैभव को, अपने सामर्थ्य को नहीं पहचानता। 4. बच्चे के विरह में माँ तड़फती है, बिलखती है व संताप करती है। संयम के छूट जाने पर जीवात्मा क्लेश करते हुए संताप को प्राप्त होते हैं।

तत्थ मंदा विसीयंति रज्जहीणा व खत्तिया। (1.3.1.4)

अर्थ- परिषहोदय पर मंद मनुष्य वैसे ही विषाद को प्राप्त होते है, जैसे राज्य से च्युत राजा।

समानता- 1. राजा सोचता है कि मैंने लड़ाई लड़ी, सैनिक मरे, राज्य भी खोया। परीषहोपसर्ग उदय से आक्रान्त बना जीव सोचता है कि मैंने घर-परिवार छोड़ा, धन वैभव त्यागा और मुझे असह्य सर्दी-गर्मी का सामना करना पड़ रहा है। 2. राज्य च्युत राजा के पास भोग शेष नहीं रहता, परीषहहत जीवात्मा के पास शेष योग (संयम) नहीं रहता। 3. वह राजा अपकीर्ति को प्राप्त होता है वह साधक भी अपयश को प्राप्त होता है।

तत्थ मंदा विसीयंति मच्छा अप्पोदए जहा। (1.3.1.5)

अर्थ- जब गर्मी में धूप से स्पृष्ट होकर विमनस्क और बहुत प्यासे हो जाते हैं तब वे मंद मनुष्य वैसे ही विषाद को प्राप्त करते हैं जैसे थोड़े जल में मछली।

समानता- 1. उष्ण परीषह से प्यासे साधक की स्थिति थोड़े जल वाली मछलीवत् होती है। 2. मछली असहाय होती है, वह साधक स्वयं को असहाय अनुभव करता है। 3. कभी-कभी वह मछली अल्प जल से मर जाती है वैसे ही उस साधक की प्राण-त्याग सी अवस्था बन जाती है। 4. मछलीवत् उस साधक का चित्त व्याकुल रहता है। 5. मछली पानी का स्पर्श होता है तो सुखी और कभी पानी का स्पर्श नहीं होता तो दुःखी होती है, वैसे

ही वह साधक शाम-रात को कुछ ठण्डक होती है तो सुखी व सूर्य की किरणें निकलने पर दुःखी होता है। 6. दोनों विवाद को पाते हैं। 7. दोनों की लाचार भूमिका होती है। 8. मछली जल को याद कर तड़पती है, साधक पूर्व की साता युक्त अवस्था को याद कर तड़पता है।

तत्थ मंदा विसीयंति, संगामंसि व भीरुणो। (आक्रोश परीषह, 1.3.1.7)

अर्थ- गाँवों व नगरों में इन शब्दों को सहन न करते हुए मंद मनुष्य वैसे ही विषाद को पाते है, जैसे संग्राम में भीरू।

समानता- 1. डरपोक योद्धा जैसे युद्धभूमि में किंकर्तव्यमूढ हो जाता है, वैसे ही डरपोक साधक की मनःस्थिति होती है। 2. जैसे भीरू योद्धा युद्ध भूमि में शंख, ढोल, नगाड़ों के स्वर सुनते हैं वे वहाँ से भाग खड़े होते हैं, वैसे ही साधक परीषहोदय में पीछे हटते हैं। 3. शौर्य के गुण का दोनों में निधन हो जाता है। 4. वीर रस समाप्त हो जाता है। 5. योद्धा आगे बढ़े तो भी उसे मौत समक्ष प्रतीत होती है व पीछे मुड़ने पर भी लगता है मानो मौत आलिंगन करने खड़ी है। 6. शूरवीरता के अभाव में कायर साधक को भी किनारा नज़र नहीं आता।

तत्थ मंदा विसीयंति तेउपुट्ठा व पाणिणो। (1.3.1.8)

अर्थ- कोई क्रूर कुत्ता भिक्षु को काट खाता है उस समय मंद व्यक्ति वैसे ही विषाद को प्राप्त होता है, जैसे अग्नि से जलने पर प्राणी।

समानता- 1. अग्नि स्पर्श पर जीवात्मा कूदता-उछलता है, वैसे ही कुत्ते के काटने पर साधक प्रतिक्रिया करता है। 2. दोनों अवस्थाओं में वेदना से कराहना होता है। 3. अग्नि स्पर्श पर जैसे व्यक्ति आर्त्त नाद व आर्त्तध्यान करता है वैसे ही वह भी करता है। 4. अग्नि सर्वभक्षिणी होती है वैसे ही कायर को कुत्ता काटने पर लगता है मानो उसके सर्व अंग भक्षण किए जा रहे हैं। 5. अग्नि के लिपटने पर कोई भागे तो भी छुटकारा नहीं, वैसे ही कुत्ते से छूटना उन्हें मुश्किल लगता है। 6. उस अवस्था में वह स्वयं को अरक्षित अनुभव करता है।

तत्थ मंदा विसीयंति मच्छा पविट्ठा व केयणे। (1.3.1.13)

अर्थ- केश लोच से संतप्त व ब्रह्मचर्य में पराजित मंद मनुष्य वैसे ही विषाद को प्राप्त करते हैं, जैसे जाल में फंसी हुई मछली।

समानताः- 1. केशों को खींचना कमजोर साधक को जाल में फंसी हुई मछलीवत् प्रतीत होता है। 2. ज्वार तो पानी में लौट जाता है व मछली फँस जाती है, वैसे ही काम के ज्वर से साधारण जीवात्मा हार जाती है। 3. ब्रह्मचर्य से डांवाडोल पूर्वभोगों का स्मरण करते हैं। मछली भी पूर्व सुख का स्मरण करती है। 4. मछलीवत् वह साधक सोचता है कि अगर मैं

नहीं मरूँगा तो भी ये कंटक अकाल में मुझे मार देंगें। 5. मछली को पानी भी नहीं मिल रहा व बंधन की वेदना भी रहती है, वैसे ही पराक्रमहीन के लिए संयम बंधन रूप होता है।

इत्थी वा कुद्धगामिणी (3.1.16)

अर्थ– डंडे-घूसे या थप्पड़ से पीटे जाने पर अज्ञानी भिक्षु वैसे ही अपने ज्ञातिजनों को याद करता है, जैसे रूठ कर घर से भाग जाने वाली स्त्री।

समानता– 1. जैसे माँस को देखकर क्रूरपक्षी उस पर झपटते हैं वैसे ही घर छोड़कर निकली स्त्री को लुटेरे-चोर सताते हैं। ऐसी ही दशा अज्ञानी साधु की होती है उन पर मिथ्यामती झपटते हैं। 2. स्त्रीवत् उस अज्ञानी जीव को असुरक्षा का अनुभव होता है। 3. स्त्रीवत् उस साधक के असहाय पराधीनता, कारुण्य, भय आदि भाव उभरते हैं। 4. शास्त्रकारों ने पुरुष नहीं स्त्रीवत् बताया है, कारण कि पुरुष अकेला भी रह सकता है। स्त्रीवत् वह साधक पश्चात्ताप करता है। 5. दोनों अपने ज्ञातिजनों का स्मरण करके दुःखी होते हैं।

हत्थी वा सरसंवीता, कीवा वसमा गयागिहं। (1.3.1.17)

अर्थ– हे वत्स! ये सारे कठोर दुस्सह हैं। इनसे विवश होकर पौरुषहीन भिक्षु वैसे ही घर लौट आता है जैसे संग्राम में बाणों से बींधा हुआ हाथी।

समानता– 1. हाथीवत् वह भिक्षु शारीरिक व मानसिक दोनों वेदना भोगता है। शरीर की वेदना किसी को कह भी नहीं सकता, वैसे ही भिक्षु के लम्बे समय से स्नानव्रत आदि नियम पालन से देह रोग उत्पन्न होते हैं तथा वह घर जाता है तो किसी से कुछ कह नहीं सकता। 2. हारे हुए हाथीवत् वह साधक ग्लानि-पीडा-तिरस्कार-गौरवहीनता को प्राप्त होता है। 3. दोनों को भविष्य में भी दुःखों का सामना करना होता है। दोनों अश्रुपात करते हैं।

श्रमण को ज्ञातिजनों से अनुकूल परीषहः-

जहा रुक्खं वणे जायं, मालुया पडिबंधए। (1.3.2.10)

अर्थ– जिस प्रकार वन में उत्पन्न वृक्ष को मालुका लता वेष्टित कर लेती है, उसी प्रकार ज्ञातिजन उसे असमाधि में पकड़ लेते हैं।

समानता– 1. वृक्ष दृढ़ होता है, फिर भी लता से जकड़ जाता है। वैसे ही श्रमण ज्ञातिजनों से जकड़ा जाता है कारण कि वह प्रतिरोध नहीं करता। 2. मालुका की लता बढ़ते-बढ़ते सैकड़ों फुट तक पहुँच जाती है वैसे ही ज्ञातिजनों का स्नेह साधक जीवन में परिव्याप्त होते-होते बढ़ जाता है।

हत्थी वा वि णवग्गहे। सूतीगो व्व अदूरगा। (1.3.2.11)

अर्थ– नया पकड़ा हाथी बांधा जाता है वैसे ही वह ज्ञातियों के संग से बंध जाता है। ज्ञातिजन उसके पीछे वैसे ही चलते हैं, जैसे नयी ब्याही हुई गाय अपने बछड़े के पीछे।

इच्चेव णं णिमंतेंति णीवारेण व सूयरं। (1.3.2.19)

अर्थ– ज्ञातिजन भिक्षु को इस प्रकार निमंत्रित करते हैं जैसे चारा डालकर सूअर को बुलाया जाता है। सूअर चावल के दानों में आसक्त गाँव में चरने नहीं जाता और वह मारा जाता है।

समानता– 1. सूअर आलसी बन जाता है, उस श्रमण को भी अपनी स्वाधीनता याद नहीं रहती। 2. गाथा में नीवार शब्द है, जिसका अर्थ है जंगली सूअर चावल में आसक्त होता है, श्रमण भी प्रलोभनों में फँस जाता है। 3. दोनों का अंत बुरा होता है। 4. सूअर प्रलोभन छोड़ता तो बच सकता था। श्रमण भी अनासक्त रहता तो उसका संयम सुरक्षित रह सकता था। 5. दोनों अंत में वेदना पाते हुए पछताते हैं व असहाय होते हैं।

साधना के पथ पर साधक का निरुत्साह

तत्थ मंदा विसीयंति उज्जाणंसि व दुब्बला।(1.3.2.20)

अर्थ– भिक्षुचर्या में चलने वाले किन्तु उसका निर्वाह करने में असमर्थ मंद पुरुष विषाद को प्राप्त करता है, जैसे ऊँची चढ़ाई में दुर्बल बैल।

समानता– 1. बैल भार वहन करता है, साधक पाँच महाव्रत, दस यति धर्म आदि को वहन करता है। 2. निरुत्साहित बैल ऊपर चढ़ते हुए गर्दन नीचे कर लेता है, वैसे ही भिक्षाचर्या आदि वृत्तियों के पर्वतारोहण में निःसत्त्व साधक के अध्यवसाय गिर जाते हैं। 3. बैल के नहीं चलने पर चालक उसे प्रताड़ित कर आगे बढ़ाता है। इस परिस्थिति में साधक को वीतरागवाणी पाप के पतन का भय दिखाकर जगाने का प्रयास करती है। 4. बैल व निरुत्साही साधक दोनों विषाद पाते हैं, पर किसी से अपना दुःख बाँट नहीं पाते। 5. दोनों के लिए कोई दूसरा रास्ता शेष नहीं रहता, अतः आगमकार मनोबल को बढ़ाने की चेतावनी दे रहे हैं।

तत्थ मंदा विसीयंति पंकंसि व जरग्गवा। (1.3.2.21)

अर्थ– संयम पालन में असमर्थ तथा तपस्या से तर्जित मंद पुरुष वैसे ही विषाद को प्राप्त होते हैं, जैसे कीचड़ में बूढ़ा बैल।

समानता– 1. जैसे बूढ़ा बैल कीचड़ में नहीं चल पाता, वैसे ही असजग साधक राग-द्वेष से युक्त हो संयम पथ पर चलने में स्वयं को असमर्थ अनुभव करते हैं। 2. बूढ़ा बैल अपनी वृद्धावस्था से ग्लान हुआ रहता है, कमजोर साधक देहासक्ति में आबद्ध होता है। 3. वह

बैल कीचड़ में चलने में असमर्थ रहता है। साधक को तप आदि क्रियाएँ विशेष कष्टदायी प्रतीत होती है। 4. दोनों ही सत्त्वहीन होकर बीच रास्ते में ही बैठ जाते हैं, पार नहीं पहुँचते।

जहा संगामकालम्मि, पिट्ठतो भीरू पेहति। (1.3.3.1)

अर्थ- जैसे युद्ध के समय डरपोक सैनिक पीछे की ओर खाई और गुफा को देखता (खोजता) है। कौन जाने पराजय हो जाये? इसी प्रकार कुछ श्रमण अपने को दुर्बल जानकर भविष्य के भय को देखकर इस श्रुत का अध्ययन करते हैं।

समानता- 1. युद्ध में डरपोक खड्डा ढूँढकर रखता है, संयम के बाद कष्ट आये तो खड्डे रूप में साधक ज्योतिष, मंत्र विद्या, निमित्त विद्या आदि सीख कर रखता है। 2. वह सैनिक राज्य सुरक्षा में सहयोगी नहीं बनता। कमजोर साधक जिनशासन के सिद्धान्तों की रक्षा नहीं कर पाता। 3. खड्डे में छिपा सैनिक जीवन को बचा पाता है, पर गौरव को नहीं बचा पाता जैसे ही आत्मविद्या का त्यागी जीवन चला पाता है, पर परमेष्ठी पद रूप गौरव को खो देता है। 4. दोनों ही भविष्य-चिन्ता से त्रस्त होकर वर्तमान को जीते हैं।

स्त्री राग की दुस्तरता

जहा नई वेयरणी दुत्तरा इह सम्मत्ता। (1.3.4.16)

अर्थ- जैसे वैतरणी नदी दुस्तर मानी गई है वैसे ही अबुद्धिमान पुरुष के लिए इस लोक में स्त्रियाँ दुस्तर होती हैं।

समानता- 1. वैतरणी नदी का प्रवाह तेज होता है, तट विषय होता है, तरना कठिन होता है। वैसे ही स्त्री की आसक्ति के सागर में पतित साधक तिर नहीं पाता। 2. नरक में स्थित वैतरणी नदी में जल उबलता रहता है, उसकी किनारे की राख भी प्रज्वलित रहती है व किनारे आने पर उसे पुनः परमाधामी देव द्वारा नदी में गिरा दिया जाता है। वैसे ही कामराग-स्नेहराग-दृष्टिराग रूपी आग में जलते हुई जीवात्मा अशांत व असमाधिस्थ रहते हैं।

इसी की 18 वीं गाथा बताती है कि कामविजेता संसार समुद्र का पार पा जायेंगे, जैसे कि व्यापारी समुद्र का पार पा जाते हैं। डूबने वाले भी हैं तो व्यापारीवत् अपने आन्तरिक मनोरथ को सिद्ध करके संसार-सागर पार जाने वाले भी हैं।

स्त्री बंधन की वास्तविकता

सीहं जहा व कुणिमेणं। (1.4.1.8)

अर्थ- निर्भय और अकेले रहने वाले सिंह को मांस का प्रलोभन दे, पिंजरे में बांध देते हैं। वैसे ही स्त्रियाँ संवृत्त और अकेले भिक्षु को बांध लेती हैं।

समानता- 1. शून्य मार्ग में सिंह हो तो नगर के मनुष्य को भय बना रहता है। वैसे ही साधु

से परमती भयभीत रहते हैं। 2. कोई षड्यंत्र से वहाँ बकरे को छोड़ दें तो आसक्त सिंह जाल में फँस जाता है व उसे पिंजरे में बंद कर दिया जाता है, वैसे ही मैथुन संज्ञा में आसक्त साधक गृहस्थाश्रम रूपी जाल में फँस जाता है। 3. दोनों की शूरवीरता बंधनों में बंध जाती है। 4. दोनों का अंत समान होता है।

स्त्री राग की भयानकता–

"अह सेऽणुतप्पती पच्छा, भोच्चा पायसं व विसमिस्सं।
तम्हा ए वज्जए हत्थी, विसलित्तं व कंटगं णच्च।।"

(1.4.1.10-11)

अर्थ– स्त्री विषमिश्रित खीर व विषबुझे काँटे के समान है।

समानता– 1. विष व विषय (पाँच इन्द्रियों के) समान होते हैं। 2. विष ही मात्र ऐसा प्राण हारक है जो प्रयोग के समय नहीं प्रयोग के पश्चात् अपनी भयंकरता व हलाहलता दिखाता है, स्त्री राग भी भोगकाल के पश्चात् ही अपना परिणाम दिखाता है। 3. विष जीवन समाप्त करता है, स्त्री राग भव-भव बर्बाद करता है। 4. दोनों व्याकुलता-भ्रामकता-चंचलता-चिन्ता के उत्पादक हैं।

जतुकुम्भे जहा उवज्जोती। (1.4.1.26)

अर्थ– लाख के घड़े के समान स्त्री के संवास से विषाद को प्राप्त होता है।

समानता– 1. अग्नि के पास लाख का घड़ा पिघलता है, संयमी का संयम भाव सुदृढ़ता का त्याग कर शिथिल होता है। 2. दोनों की उपयोगिता समाप्त हो जाती है।

से पण्णया अक्खये सागरे वा। (1.6.8)

अर्थ– भगवान स्वयंभूरमण समुद्र के समान प्रज्ञा से अक्षय थे।

समानता– 1. दोनों अपरम्पार हैं। 2. दोनों कलुषतारहित निर्मल हैं।

सक्के व देवहिवई जुइमं। (1.6.8)

अर्थ– इन्द्र के समान देवाधिपति हैं।

समानता– 1. दोनों तेजस्वी हैं। 2. इन्द्र देव अधिपति हैं व भगवान संघ अधिपति हैं।

सुदंसणस्सेव जसो गिरिस्स, पवुच्चई महतो पव्वयस्स। (1.6.14)

अर्थ– महान् पर्वत सुदर्शनगिरि का यश श्रेष्ठ है। ज्ञातपुत्र श्रमण भगवान महावीर को भी इसी पर्वत की उपमा दी गई है।

समानता– 1. दोनों अनेक नामों से प्रसिद्ध हैं। 2. दोनों का तीनों लोक में प्रभाव है। 3. पर्वत के चारों ओर सूर्य आदि ज्योतिष चक्र परिक्रमा लगाते हैं वैसे ही भगवान के चारों

ओर भक्तगण परिक्रमा लगाते हैं। 4. सुदर्शन पर्वत पर्वतों का राजा है एवं भगवान चतुर्विध संघ के राजा हैं।

गिरिवरे वा निसहाऽऽयताणं, रुयगे व सेट्ठे वलयायताणं। (1.6.15)

अर्थ- लम्बे पर्वतों में निषध पर्वत श्रेष्ठ है तथा वलयाकर पर्वतों में रुचक पर्वत श्रेष्ठ है, वैसे ही जगत के मुनियों में भगवान श्रेष्ठ हैं।

समानता- 1. दोनों पर्वत अपने आकार के पर्वतों में श्रेष्ठ है। भगवान मुनियों में श्रेष्ठ हैं। 2. पर्वतों व भगवान में यह भी समानता है कि दोनों की श्रेष्ठता स्वयं सिद्ध है।

रुक्खेसु णाए जह सामली वा....वणेसु वा नदंणमाहु सेट्ठे... (1.6.18)

अर्थ- वृक्षों में शाल्मली वृक्ष श्रेष्ठ है, वनों में नन्दनवन श्रेष्ठ है वैसे ही ज्ञान व चारित्र में भगवान श्रेष्ठ हैं।

समानता- शाल्मली वृक्ष देवों का रमणीय स्थल है, नंदनवन प्रधान रमण-स्थान है वैसे ही भगवान के ज्ञान व चारित्र सभी के लिए रमणीय एवं आकर्षण के हेतु थे।

थणियं व सद्दाण अणुत्तरे तु, चंदो व ताराण महाणुभावे। (1.6.19)

अर्थः- शब्दों में मेघ गर्जन श्रेष्ठ है, तारों में चन्द्रमा श्रेष्ठ है उसी प्रकार भगवान महावीर कामना त्यागियों में श्रेष्ठ है।

समुद्र में स्वयंभूरमण, नागकुमार में धरणेन्द्र, रसों में इक्षुरस श्रेष्ठ है वैसे ही तपस्वियों में भगवान महावीर स्वामी श्रेष्ठ है। (1.6.20)

हाथियों में ऐरावत हाथी, मृगों में सिंह, नदियों में गंगा नदी, पक्षियों में गरुड़ मुख्य है वैसे ही निर्वाणवादियों में ज्ञातपुत्र भगवान महावीर प्रमुख हैं। (1.6.21)

योद्धाओं में चक्रवर्ती/वासुदेव, फूलों में कमल, क्षत्रियों में दन्तवक्र श्रेष्ठ है, वैसे ही ऋषियों में भगवान महावीर श्रेष्ठ हैं। (1.6.22)

दानों में अभयदान श्रेष्ठ है, वचनों में सत्य श्रेष्ठ है, तपों में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है। इसी प्रकार लोक में उत्तम श्रमण महावीर श्रेष्ठ है। (1.6.23)

जैसे स्थिति में लवसत्तम देव, सभाओं में सुधर्मा सभा, धर्मों में निर्वाण श्रेष्ठ है इसी प्रकार ज्ञातपुत्र महावीर से बढ़कर कोई ज्ञानी नहीं है। (1.6.24)

यहाँ उपमाओं में उत्कृष्टता का परिचय देकर भगवान महावीर की साधना पथ की उत्कृष्टता बताई गई है। उपमाओं के माध्यम से भगवान महावीर की श्रेष्ठता, उज्ज्वलता, दिव्यता, सामर्थ्य आदि अद्वितीय एवं अनुपम योग्यताओं का परिचय दिया गया है।

संसार की स्थिति

एगंतदुक्खे जरिते व लोए। (1.7.11)

अर्थः– यह लोक ज्वरपीड़ित व्यक्ति की तरह एकांत दुःखी है।

समानता– 1. बुखार में सर्व विषयों से अरुचि होती है वैसे ही संसार आखिर तो अरति का विषय ही बनता है। 2. कोई भी वेदना एक अंग की ही पीड़ा का कारण बनती है, पर बुखार पूरे देह में वेदना का अनुभव कराता है वैसे ही संसार दुःख की वेदना से परिपूर्ण है। सुख में बाधक है। 3. बुखार के समय रसना पर कड़वाहट की अनुभूति होती है, वैसे ही ज्ञानियों को लोक का रस कड़वा लगता है। 4. बुखार में स्वाधीनता नहीं रहती, पराश्रय स्वीकार करना पड़ता है, वैसे ही लोक में जीव स्वाधीनता की पूर्णता का अनुभव नहीं कर पाता। बुखार विकार का परिणाम है, लोक भी राग-द्वेष रूप विकार का परिणाम है।

अवि हम्ममाणे फलगावतट्ठी। (1.7.30)

अर्थ– जैसे लकड़ी का तखता दोनों ओर से छीले जाने पर रागद्वेष नहीं करता, वैसे ही साधक बाह्य आभ्यंतर तप से कष्ट पाता हुआ रागद्वेष नहीं करे।

समानता– 1. लकड़ी का तखता अप्रतिक्रिय होता है, कितनी बार भी छीलो धैर्य नहीं खोता, अंत तक भी सहन करता है, छिलते हुए, घिसते हुए रूप नहीं बदलता, एक साथ 10 जगह से प्रहार हो तो भी सहन करता है। तरंगों से रहित, प्रतिक्रिया से रहित, कषाय से रहित ही रहें, यह प्रभु उपदेश है। सहन करता हुआ साधक अंत तक कभी भी धैर्य नहीं खोये।

जहा कुम्मे सअंगाइ, सए देहे समाहरे। (1.8.16)

अर्थः- जैसे कछुआ अपने अंगों को अपने शरीर में छिपा लेता है, इसी प्रकार से मेधावी पापों को अध्यात्म भावना से समेट ले।

समानताः- ऊपर से कठोर अन्य अंग कोमल। साधक भी ऊपर से कठोर व कोमल हृदय रहता है। 2. दोनों ही गुप्त रहते हैं। 3. कछुएवत् साधक पर-नियंत्रण में नहीं स्व-नियंत्रण पर विश्वास रखता है।

कंका वा कलुसाहमा। (1.11.28)

अर्थ– जैसे ढंक कंक कुरर जलचर पक्षी को निगल जाने का बुरा विचार करते हैं। यह पाप रूप व अधम है। वैसे ही अनार्य अनार्य विषयों की प्राप्ति का ही ध्यान करते हैं।

समानता– 1. ढंक पक्षीवत् अनार्य भी आर्त्तध्यान में रत रहते हैं। 2. वे पक्षी सागर के रत्न एवं जल कुछ भी ग्रहण नहीं करते, वैसे ही वे अनार्य धर्म स्वीकार नहीं करते हैं। 3. जैसे पक्षी जलचर जीवों को पूरा निगल जाते हैं वैसे ही अनार्य पाँचों इन्द्रियों से विषयों को ग्रहण

करते हैं। 4. दोनों में दयाहीनता, चित्त की क्लिष्टता, आसक्ति, विवेकमूढता समान होती है। 5. दोनों की प्रवृत्ति हिंसात्मक रहती है।

वातेणेव महागिरी। (1.11.37)

अर्थ– अनुकूल प्रतिकूल उपसर्ग पर भी विचलित न हो जैसे महावात से महागिरिवर मेरु कभी विचलित नहीं होता।

समानता– 1. पर्वत को कोई पीड़ा दे तो वह स्वयं दुःखी होता है, पर पर्वत तटस्थ रहता है, अडिग रहता है, अपनी ऊँचाई से गौरवान्वित रहता है वैसे ही परीषह उपसर्गों में अविचलित साधक अपनी गरिमा का त्याग नहीं करता, महाव्रतों की महिमा जीवित रखता है व आत्म-सौन्दर्य रूप क्षमा आदि गुणों से शोभा पाता है। तकलीफ देने वाला ही कालान्तर में तकलीफ की अनुभूति करता है।

अंधे व से दंडपहं गहाय। (1.13.5)

अर्थ– वह अनुपशांत कलह वाला पापकर्मी मनुष्य अंधे व्यक्ति के समान राजपथ के स्थान पर पगडण्डी लेकर कठिनाई में फंस जाता है।

समानता– राजपथ सुरक्षित रहता है, पगडण्डी नहीं। 2. राजपथ का अंत मंजिल पर होता है पगडण्डी का अंत कुँए व गड्डे में भी होता है। 3. पगडण्डी में विषम मार्ग भी होता है, राजपथ में सममार्ग होता है। 4. राजपथ पर चलने वाला सुख, शांति, निर्भयता एवं लक्ष्य पाता है। पगडण्डी वाला नहीं पाता। वैसे ही शान्त अकषायी राजपथगामीवत् सुख पाता है, कालान्तर में सिद्धि पाता है।

जहा दिया पोतमपत्तजातं। (1.14.2)

अर्थ– जैसे पूरे पंख आए बिना पक्षी का बच्चा अपने घोंसले से उड़ना चाहता है, पर वह उड़ नहीं सकता। उड़ने में असमर्थ उस पंखहीन बच्चे को कोए आदि उठाकर ले जाते हैं।

समानता– 1. दोनों अपना सामर्थ्य नहीं पहचानते। 2. दोनों का कोई रक्षक नहीं होता। 3. दोनों लाचार होकर पश्चात्ताप करते हैं। 4. अपरिपक्व दशा में पुरुषार्थ करने पर सुरक्षा शून्यवत् हो जाती है।

वाऊ व जालमच्चेह। (1.15.8)

अर्थ– जिसके पूर्वकृत कर्म नहीं होता वह महावीर्यवान नहीं मरता। जैसे वायु अग्नि की ज्वाला को पार कर जाती है वैसे ही लोक में वह स्त्रियों को पार कर जाता है।

समानता– 1.वायु से अग्नि हत होती है, पर अग्नि वायु को हानि नहीं पहुँचाती, वैसे ही महासाधक जन्म-मरण से प्रताड़ित नहीं होता। 2. वायुवत् वह साधक अप्रतिबद्ध होता है। 3. हवावत् महावीर्यवान साधक को कोई भी रुकावट रोक नहीं पाती। 4. दोनों स्वाधीन व

बंधनों से मुक्त रहते हैं।

यह स्वाध्याय हमारे जीवन को अध्यात्म के साथ सूत्रित करे। शुचिता को प्रदान करे। हमारे जीवन का अभिन्न अंग बने। सूत्रकृतांग की शिक्षाओं से शिक्षित होकर आत्मा हेय को छोड़ पाये, ज्ञेय को सम्यक् रीति से जान पाये व उपादेय को अहोभाव से ग्रहण कर पाये। यह गुरु कृपा से ही संभव है। उनकी महती कृपा से आत्मा व आगम शिक्षाओं के मध्य द्वैतता समाप्त हो जाये यही आशा है।

प्ररूपणा में कोई भी त्रुटि हो तो मन-वचन-काया से अपने अपराध को स्वीकार करके क्षमायाचना करती हूँ।

क्षमा मिटा दे वैर-बुराई

श्री दिलीप गाँधी

जीवन की भूलों को भूलो अभी
दुर्भाव दिल में, ना रखो कभी
फासले बढ़ाकर, हों ना दुःखी

तन के घाव तो मिट जाते हैं
मन के घाव न मिट पाते हैं
बोलें अगर हम मीठी बोली
मिलती दिल से, दिल में खुशी
फासले बढ़ाकर हों ना दुःखी

'क्षमा' मिटा दे वैर बुराई
बिछुडे कभी ना भाई-भाई
थोडा अगर हम पालें संयम
आँसू की सूख जाये नमी,
रहना सबसे अब हिल-मिल

टूटे कभी ना कोमल ये दिल
'गाँधी' क्षमा से सुधरे गति
जीवन की भूलों को भूलों अभी
फासले बढ़ाकर हों ना दुःखी।

-चित्तौड़गढ़ (राज.)

संगोष्ठी-आलेख

सूत्रकृतांग सूत्र के अध्ययनों के क्रम का हेतु*

श्री प्रकाशचन्द जी जैन

आगम तीर्थंकरों द्वारा कथित, गणधरों द्वारा ग्रथित और मुनियों द्वारा आचरित वाणी है जिसके आधार से अनन्तानन्त भव्यजीव मुक्ति मंजिल को प्राप्त कर शाश्वत सुखों में लीन हैं। आगमवाणी का एक-एक शास्त्र, एक-एक अध्ययन, एक-एक उद्देशक, एक-एक गाथा, एक-एक गाथा का चरण, एक-एक शब्द और एक-एक अक्षर-अक्षर का क्रम सहेतुक है। शब्द, चरण, गाथा व उद्देशकों के क्रम का हेतु निकालना बड़ा कठिन कार्य है। अध्ययनों के क्रम का हेतु क्या है इसे प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

तीर्थंकर भगवन्तों की वाणी के आधार से सभी गणधर द्वादशांगी की रचना करते हैं। यह द्वादशांगी शाश्वत है। नन्दीसूत्र के अनुसार कभी यह द्वादशांगी नहीं थी, नहीं है या नहीं रहेगी, ऐसा नहीं होता अर्थात् हमेशा रहती है। उसी द्वादशांगी का प्रथम आगम आचारांग सूत्र है। जिसमें आचार की प्रधानता है, गौण रूप से कुछ-कुछ दार्शनिक विवेचन भी हुआ है। '**आचारो प्रथमो धर्मः**' इस उक्ति के आधार पर सर्वप्रथम गणधर भगवन्त आचार की प्रमुखता वाले आचारांग की रचना करते हैं।

जब तक हमारी धारणा, मान्यता या जानकारी सम्यक् नहीं होगी तब तक हमारा आचार सदाचार नहीं बन सकता। दुनिया में कई तरह की दार्शनिक मान्यताएँ प्रचलित हैं उनमें सही क्या है उनका आचरण कैसे किया जाय, यह जाने बिना आचार सम्यक् नहीं हो सकता। अतः गणधर भगवन्तों ने आचारांग के बाद दूसरे स्थान पर दार्शनिक विचार धाराओं का विवेचन आवश्यक समझकर सूत्रकृतांग की रचना की।

इस सूत्र के दो श्रुतस्कन्ध है। प्रथम श्रुतस्कन्ध में 16 अध्ययन व द्वितीय श्रुतस्कन्ध में 7 अध्ययन हैं। यहाँ प्रथम श्रुतस्कन्ध पर विचार करना है, इसके 16 अध्ययन इस प्रकार हैं- 1. स्वसमय- पर समय वक्तव्यता, 2. वैतालीय, 3. उपसर्ग, 4. स्त्री परिज्ञा, 5. निरय-विभक्ति, 6. वीरत्थुई, 7. कुशील, 8. वीर्य, 9. धर्म, 10. समाधि, 11. मार्ग, 12. समवसरण, 13. यथातथ्य, 14. ग्रन्थ, 15. आदानीय, 16. गाथा अध्ययन।

वृत्तिकार ने इसकी तुलना बौद्ध दर्शन के 'अभिधम्मपिटक' से की है जिसमें 62 मतों

***बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई, 2014 को व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. की सन्निधि में 'सूत्रकृतांग सूत्र' पर सम्पन्न स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।**

का खण्डन करके अपने मत की स्थापना की गई है।

समवायांग सूत्र में सूत्रकृतांग सूत्र के प्राप्त विवरण के अनुसार इस आगम में स्वसमय-परसमय, जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष का वर्णन है तथा क्रियावादी, अक्रियावादी आदि 363 अन्ययूथिक मतों की चर्चा प्राप्त है।

नन्दीसूत्र में कहा गया है कि सूत्रकृतांग में लोक, अलोक, लोकालोक, जीव, अजीव आदि का निरूपण है तथा क्रियावादी आदि 363 पाखण्डियों के मतों का खण्डन किया गया है। तत्त्वार्थ राजवार्तिक के अनुसार- इसमें ज्ञान, विनय, कल्प, अकल्प, व्यवहार, धर्म एवं विभिन्न क्रियाओं का निरूपण है।

यह आगम मुख्यतया दर्शन शास्त्र का आगम होने से इसमें सर्वप्रथम पहले अध्ययन में दर्शनशास्त्र का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न- लोक क्या है? इसका निर्माण किसने किया, कैसे किया, कब किया-की चर्चा हुई है।

दर्शनशास्त्र का लक्ष्य है जीव और जगत् के सम्बन्ध में विचार और विवेचना करना।

भारतीय दर्शनों के मुख्य आधार तीन तत्त्व हैं- 1. आत्मस्वरूप की विचारणा, 2. ईश्वर सत्ता विषयक धारणा, 3. लोक सत्ता (जगत् स्वरूप) की विचारणा।

आत्मस्वरूप की विचारणा में आत्मा के दुःख-सुख, बन्धन-मुक्ति की विचारणा होती है। आत्मा स्वतंत्र है या परतन्त्र। परतन्त्र है तो क्यों? किसके अधीन? कर्म या ईश्वर? आत्मा जहाँ, जिस लोक में हो उस लोक सत्ता का संचालन/नियमन/व्यवस्था कैसे चलती है। इस प्रकार आत्मा और लोक के साथ ईश्वर सत्ता पर भी स्वयं विचार-चर्चा केन्द्रित हो जाती है। इन तत्त्वों की चिन्तना ही दर्शनशास्त्र का प्रयोजन है।

धर्म का क्षेत्र दर्शनशास्त्र द्वारा विवेचित तत्त्वों पर आचरण करना है। आत्मा के दुःख-सुख, बन्धन-मुक्ति के कारणों की खोज दर्शन करता है, पर उन कारणों पर विचार कर दुःख-मुक्ति और सुख-प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना धर्म-क्षेत्र का कार्य है। आत्मा के बन्धन कारक तत्त्वों पर विवेचन करना दर्शनशास्त्र की सीमा में है, उन बन्धनों से मुक्ति के लिए प्रयत्नशील होना धर्म की शिक्षा में है।

इस सूत्र के प्रथम अध्ययन की प्रथम गाथा ही- "दर्शन और धर्म का संगम स्थल है।" बन्धन के कारणों की परिचर्चा के बाद बन्धन मुक्ति की प्रक्रिया, पद्धति और साधन पर विशद चिन्तन करने का संकल्प पहले ही पद में व्यक्त हो गया है। अतः कहा जा सकता है कि इसका 36 हजार पद परिमाण विस्तार पहली ही गाथा का महाभाष्य है।

बुज्झेज्ज तिउट्टेज्जा, बंधणं परिजाणिया।
किमाह बंधणं वीरो, किं वा जाणं तिउट्टइ।।

प्रथम 'समय' अध्ययन– अध्ययन का नाम स्वसमय-परसमय होने से पहले स्व समय और स्व-सिद्धान्त अर्थात् तीर्थंकरों की वाणी में बन्धन का क्या स्वरूप है उस बन्धन को तोड़ने के उपाय क्या? इसकी पहले चर्चा हुई है, फिर आत्मा का स्वरूप, बन्धन आदि की चर्चा में परदर्शनों की अज्ञानता व मिथ्या मान्यताओं को उजागर कर उनका खण्डन किया गया है। वे मिथ्या है, ऐसा बताया है। प्रमुख मान्यताएँ जिनका खण्डन किया गया है वे हैं- पंच महाभूतवाद, तज्जीव-तच्छरीरवाद, एकात्मवाद, जगत्कर्तृत्ववाद, अवतारवाद, नियतिवाद आदि।

इस अध्ययन के अन्त में- **'एयं खु नाणिणो सारं जं न हिंसइ किंचणं।'** ज्ञान का सार किसी भी जीव की हिंसा नहीं करने में है, कह कर अहिंसा की महत्ता को उजागर किया गया है। चारित्र शुद्धि हेतु 10 विवेक सूत्र बताये हैं- समाचारी में स्थित, आहार आसक्ति नहीं, रत्नत्रय संरक्षण, समिति में विवेक, गुप्ति में संयम, चार कषाय का त्याग आदि।

इस अध्ययन में अन्य मतों की मान्यताओं को बताकर उनका खण्डन करके स्व-मत का मण्डन करते हुए अहिंसा व चारित्र शुद्धि पर बल दिया गया है।

द्वितीय 'वैतालीय' अध्ययन– इसमें वैराग्य का उपदेश दिया गया है। आत्मा, परमात्मा व लोक का सच्चा स्वरूप समझ में आ जाने पर अन्तर में वैराग्य के अंकुर प्रस्फुटित होते हैं, उस वैराग्य का क्या स्वरूप है उसे कैसे पुष्ट किया जाये? इसलिए इस अध्ययन में भगवान ऋषभदेव द्वारा अपने 98 पुत्रों को दिये गये वैराग्य के उपदेश का वर्णन किया गया है। इसमें अनित्य भावदर्शन, कर्मविपाक दर्शन, मायाचार का कटुफल, पाप से विरति, मद-त्याग, अनुकूल-प्रतिकूल परीषह सहन, कामासक्ति त्याग, समताधर्म, एकलविहारी मुनिचर्या, अनुत्तरधर्म आदि के आधार पर वैराग्य को पुष्ट करने व संयम में रमण करने का उपदेश है। संयम से ही भूतकाल में अनन्त जीव सिद्ध हुए हैं, वर्तमान में हो रहे हैं और भविष्य में होंगे। अतः संयम ही मोक्ष का सर्वश्रेष्ठ साधन है।

तृतीय 'उपसर्ग' अध्ययन– संयम की साधना करने वाले साधक को अनेक अनुकूल व प्रतिकूल उपसर्ग आना सम्भावित है, अतः इस अध्ययन में उपसर्गों का वर्णन किया गया है कि- 1. कैसे-कैसे उपसर्ग किस-किस रूप में आते हैं, 2. उनको सहन करने में क्या-क्या पीड़ा होती है, 3. उपसर्गों में सावधान न रहने से कैसे संयम का विघात होता है, 4. उपसर्गों के आने पर साधक को क्या करना चाहिए? इसमें प्रतिकूल उपसर्गों का, स्वजनादिकृत अनुकूल उपसर्गों का, आत्मा में विवाद पैदा करने वाले अन्य तीर्थिकों के तीक्ष्ण वचन रूप उपसर्गों का, चित्त को भ्रान्त, मोहित करने वाले आचार भ्रष्ट करने वाले उपसर्गों में युक्तिसंगत हेतुओं द्वारा यथार्थ बोध देकर संयम में स्थिर रहने का उपदेश है।

चतुर्थ 'स्त्रीपरिज्ञा' अध्ययन– तृतीय अध्ययन में अनुकूल-प्रतिकूल दोनों प्रकार के उपसर्गों का वर्णन हुआ है। अनुकूल उपसर्ग सहन करना बहुत कठिन है, उसमें भी स्त्री सम्बन्धी अनुकूल उपसर्ग को सहना महाकठिन व दुष्कर कार्य है। अतः इस अध्ययन में स्त्री सम्बन्धी उपसर्ग कैसे-कैसे आते हैं, उनमें साधक कैसे फिसल सकता है, उसे क्या-क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए इसका विस्तार से वर्णन किया गया है।

यहाँ स्त्री परिज्ञा से केवल स्त्रियों के लिए ही कथन नहीं है। पुरुषों के लिए भी है। जितने दोष स्त्रियों के संसर्ग से पुरुष में उत्पन्न होते हैं उतने ही दोष पुरुषों के संसर्ग से स्त्रियों में भी उत्पन्न होते हैं। अतः वैराग्य मार्ग में स्थित श्रमणों को स्त्री संसर्ग से सावधान रहने की तरह दीक्षित साध्वियों को भी पुरुष संसर्ग से सावधान रहना चाहिए। अति संसर्ग न हो।

अधिकतर दोष स्त्री संसर्ग से ही पैदा होते हैं तथा इसके प्रवक्ता पुरुष हैं। अतः अध्ययन का नाम स्त्री परिज्ञा रखा है, पुरुष परिज्ञा नहीं।

पंचम 'नरकविभक्ति' अध्ययन– जो व्यक्ति संयम लेकर आने वाले अनुकूल और प्रतिकूल उपसर्गों को समभाव से सहन नहीं करता। उनसे बचने के लिए आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान करता है या स्त्री आदि के प्रति आकर्षित होकर संयम से च्युत हो जाता है तब वे स्त्रियाँ उसे विविध प्रकार से प्रलोभनों में फंसाकर उसके संयमधन को लूट लेती हैं और वह इन्द्रियों के वशवर्ती बनकर उसमें आसक्त बन जाता है। ऐसे व्यक्ति को नरक में जाना पड़ता है, अतः पाँचवें क्रम पर नरकविभक्ति अध्ययन को रखा गया है। इसमें नारकी जीवों को प्राप्त होने वाली वेदनाओं का तथा परमाधार्मिक देवों द्वारा उनके किये पापकर्मों की याद दिलाकर दिये जाने वाले असह्य दुःखों का विस्तृत वर्णन है। संयमी साधक को सभी प्रकार के उपसर्ग व परीषहों के आने पर संयम में अडोल रहना चाहिए, उनसे डिगायमान नहीं होना चाहिए अन्यथा उसे नरक के दुःखों को भोगना पड़ता है।

छठा 'वीरस्तुति' अध्ययन– सही धारणाओं को समझकर संयम स्वीकार करने वाले साधक को अनुकूल-प्रतिकूल, स्त्री-पुरुष सम्बन्धी उपसर्ग आने पर भी वह उनमें अडिग रहकर नरकादि के दुःखों को प्राप्त नहीं करके मोक्ष के सुखों को प्राप्त करता है, यह केवल सिद्धान्त ही है या ऐसे कोई आदर्श साधक हुए हैं? इस प्रश्न के उत्तर के रूप में साधना के आदर्श के रूप में भगवान महावीर के जीवन का सांगोपांग वर्णन इस अध्ययन में किया गया है। इसमें भगवान की साधना ज्ञान, दर्शन, चारित्र आदि का विविध उपमाओं से वर्णन किया गया है।

सातवाँ 'कुशील' अध्ययन– पूर्व अध्ययनों से इसका सम्बन्ध इस तरह जोड़ा जा सकता है- कर्मबन्ध के मिथ्यात्व, अव्रत आदि हेतुओं में प्रथम अध्ययन में मिथ्यात्व का वर्णन है।

दूसरे से पाँचवे तक संयम में आने वाले उपसर्गों का तथा छठे में आदर्श पुरुष भगवान महावीर का वर्णन है। जो व्यक्ति अव्रत का पूर्णतया त्याग नहीं करता या त्याग करके भी उसमें शिथिलता रखता है, वह कर्मबन्धन से नहीं बच सकता उसे कुशील कहा जाता है। इस अध्ययन में उन्हीं कुशीलों का वर्णन है। अथवा भगवान महावीर के आदर्श जीवन को देखकर भी जो व्रतों का पूर्णता से पालन नहीं करते वे कुशील कहलाते हैं, उनका वर्णन इसमें हुआ है।

आठवाँ 'वीर्य' अध्ययन– सुशील और कुशील दोनों में ही व्यक्ति पुरुषार्थ करता है, अतः आठवें अध्ययन में वीर्य का वर्णन हुआ है। वीर्य तीन प्रकार का है– 1. बाल, 2.बाल-पण्डित, 3. पण्डित वीर्य। बाल-वीर्य संसार को बढ़ाने वाला है, अतः उसे छोड़कर पण्डित वीर्य अर्थात् सुशील में पुरुषार्थ करना चाहिए। अनादिकाल से यह जीव भोगों में ही पुरुषार्थ करता आ रहा है, जिससे चतुर्गति संसार का परिभ्रमण चल रहा है। इस परिभ्रमण को मिटाने का एक मात्र उपाय है– संयम। अतः उसमें ही साधक पुरुषार्थ करे।

नववाँ 'धर्म' अध्ययन– पुरुषार्थ कहाँ करना चाहिए? संसार में किया गया पुरुषार्थ संसार बढ़ाने वाला होता है, अतः साधक को अपना पुरुषार्थ धर्म में लगाना चाहिए। अतः इस अध्ययन में धर्म का स्वरूप व किस प्रकार धर्माराधना की जाती है। किन-किन विराधनाओं से बचना चाहिए, इसका विस्तार से वर्णन किया गया है। धर्म का अर्थ यहाँ भावधर्म समझना चाहिए। दशवैकालिक सूत्र के प्रथम व छठे अध्ययन में भी इसी दुर्गति गमन से जीव को बचाने वाले भावधर्म का वर्णन हुआ है।

दसवाँ 'समाधि' अध्ययन– धर्म की साधना तभी सुचारू रूप से हो सकती है, जबकि अविकल समाधि हो। समाधि का अर्थ है– तुष्टि, सन्तोष, आत्म-प्रसन्नता, आनन्द या प्रमोद। जिसे धर्मध्यान या श्रुत, विनय, आचार एवं तप रूप साधना के द्वारा आत्मा मोक्ष या मोक्षमार्ग में अच्छी तरह स्थापित या व्यवस्थित किया जाता है, वह समाधि है। इस अध्ययन में भाव-समाधि का वर्णन है। जिन गुणों के द्वारा जीवन में आत्म-प्रसन्नता (समाधि) का लाभ हो, उसे भाव समाधि कहते हैं जो ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप रूप है।

ग्यारहवाँ मार्ग अध्ययन– समाधि में रत रहने वाला साधक ही सम्यग्मार्ग की आराधना कर सकता है। अतः इस अध्ययन में मार्ग का वर्णन है। मोक्ष का मार्ग सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप है जो भावात्मक है। इस अध्ययन में इसी मार्ग का विस्तृत विवेचन हुआ है। संक्षेप में, इसे संयम मार्ग या सदाचार मार्ग भी कहा जा सकता है। इस अध्ययन में आहार शुद्धि, सदाचार, संयम, प्राणातिपात विरमण आदि पर प्रकाश डाला गया है।

बारहवाँ 'समवसरण' अध्ययन– कुमार्ग को छोड़ने से सम्यग् मार्ग प्राप्त होता है, अतः

कुमार्ग कौन-कौनसे हैं इसका परिज्ञान होना आवश्यक है, इसलिए कुमार्ग का स्वरूप बताते हुए इस अध्ययन का प्रारम्भ किया गया है। इसका नाम समवसरण है जिसका अर्थ देवादिकृत समवसरण या ठहरना नहीं है। यहाँ कुमार्ग की प्ररूपणा करने वाले क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी और विनयवादी इन चारों के समवसरण का निरूपण है।

निर्युक्तिकार ने समवसरण का अर्थ- एकीभाव से एक जगह एकत्र होना या मिलना किया है। अर्थात् इस अध्ययन में विविध प्रकार के मत प्रवर्तकों या मतों का संगम है।

तेरहवाँ 'याथातथ्य' अध्ययन- समवसरण अध्ययन में परमत वादियों के मत का निरूपण और एकान्तमतवाद का खण्डन किया गया है, वह खण्डन यथार्थ (सत्य) वचन के द्वारा होता है अतः याथातथ्य नामक यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। किसी मत, सिद्धान्त और सूत्रवचन की व्याख्या सुधर्मा स्वामी से लेकर अब तक आचार्यों की परम्परानुसार युक्तिसंगत और मोक्षमार्गपरक यथार्थ रूप से की जाय, उसका नाम याथातथ्य है।

यथातथा शब्द से भाववाचक प्रत्यय लगाकर याथातथ्य शब्द बना है। जो वस्तु जैसी है उसे उसी रूप में कहना याथातथ्य है, वही तथ्य है।

आशय यह है कि जिस दृष्टि या रीति से सूत्रों की रचना की गई है उनकी व्याख्या यदि उसी तरह की जाय और उसी तरह उन्हें आचरण में क्रियान्वित किया जाय तो वे जीव को संसार सागर से पार उतारने में समर्थ हैं, इसलिए वह याथातथ्य होता है। इसके विपरीत यदि सूत्र का अर्थ और व्याख्या ठीक-ठीक न की जाय या तदनुसार अनुष्ठान न किया जाय अथवा उसे संसार का कारण कहकर उसकी निन्दा की जाय तो वह याथातथ्य नहीं होता। परम्परागत सूत्र व्याख्यान के विपरीत मनमाना, कुतर्कमद से विकृत, कपोलकल्पित सूत्र व्याख्यान करना अयाथातथ्य है। कोई अपने को पण्डित और ज्ञानी मानकर मिथ्यात्व के कारण दृष्टि विपर्यास होने से सर्वज्ञ कथित वस्तुतत्त्व को असत्य ठहराकर व्याख्यान करता है, वह अयाथातथ्य है। जैसे **कडे माणे कडे** का अर्थ है- की जा चुकी उसे की गई कहना चाहिए। की जा रही है उसे की गई नहीं कहना चाहिए। ऐसा कहना अयाथातथ्य है।

चौदहवाँ 'ग्रन्थ' अध्ययन- याथातथ्य अध्ययन में ज्ञान, दर्शन, चारित्र तप आदि की विवेचना की गई है, किन्तु ये ज्ञान, दर्शनादि तभी शुद्ध रह सकते हैं जब बाह्य और आभ्यन्तर सभी प्रकार के ग्रन्थों (गांठों) का त्याग किया जाय, वह त्याग भी ग्रन्थ समूह को जानने से होता है। अतः इस अध्ययन में ग्रन्थ का स्वरूप बताकर उसका परित्याग करने की प्रेरणा दी गई है। इसलिए इस अध्ययन का नाम ग्रन्थ रखा गया है। ग्रन्थ का सामान्य अर्थ

परिग्रह होता है। उसके दो भेद हैं- 1. बाह्य, 2.आभ्यन्तर। बाह्य के धन-धान्यादि दस भेद हैं, उनमें मूर्च्छा रखना ग्रन्थ है। आभ्यन्तर के चौदह भेद हैं- मिथ्यात्व, कषाय, नोकषाय आदि।

जिन्हें दोनों प्रकार के ग्रन्थों से लगाव या आसक्ति नहीं है, जो संयममार्ग की प्ररूपणा करने वाले आचारांगादि ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं, वे शिष्य कहलाते हैं। शिष्य दो प्रकार के होते हैं- 1. दीक्षाशिष्य, 2. शिक्षाशिष्य। इसी प्रकार आचार्य या गुरु के भी दो भेद हैं- 1. दीक्षा गुरु, 2. शिक्षा गुरु। इस अध्ययन में शिक्षा शिष्य और शिक्षा गुरु कैसे होने चाहिए, उन्हें कैसी प्रवृत्ति करनी चाहिए, उनके क्या-क्या दायित्व और कर्त्तव्य हैं? इन बिन्दुओं का विवेचन किया गया है।

पन्द्रहवाँ 'आदान' अध्ययन- चौदहवें अध्ययन में कहा है कि साधु को ग्रन्थ मुक्त होना चाहिए। ग्रन्थ मुक्त होने से साधु आयत (विशाल) चारित्र से सम्पन्न हो जाता है। अतः इस अध्ययन में आयत चारित्र पर जोर दिया गया है।

इस अध्ययन के तीन नाम हैं- 1. आदान या आदानीय, 2. संकलिका अथवा श्रृंखला, 3. जमतीत या यमकीय।

इस अध्ययन में कर्मों का क्षय करने के लिए मोक्षार्थी पुरुष जिस विशिष्ट ज्ञानादि का आदान-ग्रहण करते हैं, उसका विवेचन होने से इसका नाम आदान या आदानीय रखा है।

इस अध्ययन में प्रथम पद्य का अन्तिम शब्द एवं द्वितीय पद्य का आदि शब्द श्रृंखला की भांति जुड़े हुए हैं अथवा इसमें अन्त और आदि पद का संकलन हुआ है, अतः इसका नाम संकलिका है। इस अध्ययन का आदि शब्द जं अतीतं है इसलिए इसका नाम जमतीत है। अथवा इसमें यमक अलंकार का प्रयोग हुआ है इसलिए यमकीय है।

सोलहवाँ 'गाथा' अध्ययन- इस अध्ययन में पूरे पन्द्रह अध्ययनों का निचोड़ है। इन अध्ययनों में जो-जो बातें कहीं गई हैं, उनमें जो विधिरूप और निषेधरूप हैं उनका पालन और त्याग करने वाला ही साधु हो सकता है। पन्द्रह अध्ययनों के साथ इसकी संगति है।

इस अध्ययन में बताया गया है कि जो समस्त पापकर्मों से विरत है, राग-द्वेष-मिथ्या दर्शनशल्य से रहित है, समितियुक्त है, ज्ञानादि गुण सहित है, संयम में प्रयत्नशील है, क्रोध से, अभिमान से दूर है, वह माहण है। जो अनासक्त, निदान-रहित, कषायमुक्त, हिंसा-झूठ आदि से रहित है, वह श्रमण है। जो अभिमान रहित, विनय सम्पन्न, परीषह-उपसर्गों पर विजय प्राप्त करने वाला, आध्यात्मिक वृत्तियुक्त, परदत्तभोजी है, वह भिक्षु है। जो ग्रन्थ रहित, एकाकी, एकविद्, पूजा सत्कार का अभिलाषी नहीं है, वह निर्ग्रंथ है।

(शेषांश पृष्ठ 83 पर)

संगोष्ठी-आलेख

सूत्रकृतांग में परमतानुसारी आत्म-स्वरूप की मीमांसा*

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

आत्मा के स्वरूप एवं अस्तित्व को लेकर भारतीय चिन्तनधारा में विभिन्न मत प्रचलित रहे हैं, उनमें से कई मतों की चर्चा प्राचीन जैनागम सूत्रकृतांग सूत्र में उपलब्ध है। इसमें पंच महाभूतों से चेतना की उत्पत्ति मानने वाले चार्वाकों, एक ही आत्मा को स्वीकार करने वाले वैदिकों, तज्जीव-तच्छरीरवादी लोकायतिकों, आत्मा को अकर्ता मानने वाले सांख्यदार्शनिकों, आत्मषष्ठवादियों, अनात्मवादी एवं चातुर्धातुकवादी बौद्धों तथा सुख-दुःख को नियति से स्वीकार करने वाले नियतिवादियों की चर्चा की गई है। इन विभिन्न मतवादों में से कुछ का खण्डन सूत्रकृतांग में हुआ है तो कुछ का खण्डन सूत्रकृतांग निर्युक्ति, सूत्रकृतांग चूर्णि एवं शीलाङ्काचार्य कृत टीका में उपलब्ध है। प्रस्तुत आलेख में आत्मा-सम्बन्धी विभिन्न परमतों के पूर्वपक्ष का उपस्थापन करने के साथ सूत्रकृतांग एवं उसके व्याख्या- साहित्य के आधार पर खण्डन प्रस्तुत किया गया है। जैनदर्शन में स्वीकृत आत्म-स्वरूप को उपसंहार के रूप में विवेचित किया गया है। जैनदर्शन को स्वमत तथा उससे भिन्न मतों को यहाँ परमत कहा गया है।

जैन दर्शन में आत्मा ज्ञान एवं दर्शन गुणों से युक्त चेतन तत्त्व है। विश्व में अनन्त आत्माएँ हैं तथा सब अस्तित्व की दृष्टि से स्वतन्त्र हैं। शरीर, इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि में चेतना का अनुभव आत्मा के संयोग से होता है। आत्मा को ही जीव भी कहा गया है। संसारी एवं सिद्ध के भेद से आत्मा के दो प्रकार हैं। सिद्ध आत्मा का संसार में पुनर्जन्म नहीं होता, क्योंकि वह संसार में जन्म-मरण के हेतु अष्टविध कर्मों से रहित होता है। संसारी आत्मा को कर्म-बन्धनों से बंधा हुआ स्वीकार किया गया है, साथ ही यह भी माना गया है कि वह सम्यग्ज्ञान तथा क्रिया के बल पर अथवा ज्ञ-परिज्ञा एवं प्रत्याख्यान-परिज्ञा के आलम्बन से पराधीनता के बन्धनों को तोड़कर सदा के लिए उनसे मुक्त हो सकता है।

ध्यातव्य है कि काम-भोगों में आसक्त जो श्रमण एवं ब्राह्मण बन्धनमुक्ति के सम्यक् उपायों को नहीं जानते, वे अनेक ऐसे मन्तव्यों का प्रतिपादन करते हैं जो मानव जाति को

*बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई 2014 को व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. के सान्निध्य में आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

सन्मार्ग से भटकाते हैं। प्राचीनकाल से आत्मा के स्वरूप तथा बन्धन और मुक्ति को लेकर विभिन्न विचारकों में मतभेद रहा है। कुछ मतों का संकेत हमें सूत्रकृतांग सदृश महत्त्वपूर्ण आगम में प्राप्त होता है।

सूत्रकृतांग में वैदिक परम्परा, चार्वाक, सांख्य, बौद्ध आदि दर्शनों से सम्बद्ध विभिन्न मान्यताओं का उपस्थापन एवं खण्डन उपलब्ध होता है। इसके प्रथम श्रुतस्कन्ध के प्रथम अध्ययन में पंचमहाभूतवाद, एकात्मवाद, तज्जीव-तच्छरीरवाद, आत्मषष्ठवाद, क्षणिकवाद, नियतिवाद, अज्ञानवाद, क्रियावाद, जगत्कर्तृत्ववाद, अवतारवाद आदि विभिन्न परमतों की चर्चा उपलब्ध होती है। प्रथम श्रुतस्कन्ध के ही समवसरण नामक बारहवें अध्ययन में अज्ञानवाद, विनयवाद, अक्रियावाद एवं क्रियावाद नामक मिथ्यामतों का निरूपण किया गया है। द्वितीय श्रुतस्कन्ध के प्रथम अध्ययन में पुन: तज्जीव-तच्छरीरवाद, पंचमहाभूतवाद, नियतिवाद आदि के साथ ईश्वरकारणवाद की भी विशद चर्चा हुई है। द्वितीय श्रुतस्कन्ध के आर्द्रकीय नामक छठे अध्ययन में गोशालक की मान्यता का आर्द्रक मुनि द्वारा प्रतिवाद किया गया है। बौद्धों, मांसभोजी ब्राह्मणों, सांख्य मतवादियों एवं हस्तितापसों की मान्यताओं का भी खण्डन किया गया है। इस प्रकार सूत्रकृतांग में हमें उस समय प्रचलित विभिन्न मतवादों का उल्लेख एवं खण्डन प्राप्त होता है।

सूत्रकृतांग पर आचार्य भद्रबाहु की निर्युक्ति, जिनदासगणि कृत चूर्णि तथा आचार्य शीलांक की टीका प्राप्त होती है। आचार्य शीलांक ने इन मतों पर विशेष प्रकाश डाला है। आधुनिक काल में पूज्य घासीलाल जी महाराज के द्वारा सूत्रकृतांग पर समयार्थबोधिनी टीका का निर्माण किया गया है। इनसे पूर्व हर्षकुलगणि रचित दीपिका तथा साधुरङ्गगणिविरचित दीपिका टीकाएँ भी उपलब्ध होती हैं। इन सबमें परमतों की चर्चा की गई है। आत्मा के स्वरूप से सम्बद्ध कतिपय मतों की चर्चा इस आलेख में की जा रही है।

(1) पंचमहाभूतों से चेतना की उत्पत्ति का मत एवं उसका खण्डन

भारतीय परम्परा में पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश इन पांचों को महाभूत कहा गया है। इन महाभूतों की चर्चा सांख्य, वैशेषिक, न्याय, वेदान्त आदि विभिन्न दर्शनों में प्राप्त होती है। प्राय: ये दर्शन पंचमहाभूतों को स्वीकार करके भी आत्मा का स्वरूप एवं अस्तित्व इनसे पृथक् अंगीकार करते हैं। किन्तु चार्वाक एक ऐसा दर्शन है जो इन पांच महाभूतों से आत्मा का पृथक् अस्तित्व स्वीकार नहीं करता एवं इन पांच भूतों से चेतना की उत्पत्ति उसी प्रकार अंगीकार करता है जिस प्रकार जौ, गुड़, महुआ आदि पदार्थों के संयोग से बनने वाली मदिरा में मद शक्ति उत्पन्न हो जाती है। चार्वाक मत का कथन है कि पृथ्वी आदि पंच महाभूतों के शरीर रूप में परिणत होने पर इन्हीं भूतों से शरीर में चैतन्य उत्पन्न हो जाता है।

सूत्रकृतांग की निम्नांकित गाथाओं में चार्वाक दर्शन की इसी मान्यता का निरूपण हुआ है-

संति पंच महब्भूया, इहमेगेसिमाहिया।
पुढवी आऊ तेऊ वा, वाऊ आगासपंचमा।
एते पंच महब्भूया, तेब्भो एगो त्ति आहिया।
अह तेसिं विणासेणं, विणासो होइ देहिणो।[1]

(किन्हीं के द्वारा पांच महाभूत कहे गए हैं- पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इन पांच महाभूतों से एक चैतन्य अथवा आत्मा उत्पन्न होता है और इन पंच महाभूतों के विनाश होने पर उस देही आत्मा का विनाश हो जाता है।)

चार्वाक अथवा लोकायतिक परम्परा में पुनर्जन्म एवं नरक-स्वर्ग आदि की परिकल्पना नहीं है। उनके अनुसार इस जीवन में प्राप्त होने वाला दुःख ही नरक है तथा यहाँ मिलने वाला सुख ही स्वर्ग है। लोक में कोई नरक-स्वर्ग नहीं है। इस शरीर का उच्छेद होना ही मोक्ष है। 'मैं मोटा हूँ', 'मैं दुबला हूँ', 'मैं काला हूँ' आदि अनुभवयुक्त कथन भी इंगित करते हैं कि चेतना शरीर रूप ही है। यह मेरा शरीर है इस प्रकार का व्यवहार औपचारिक है।

लोकायतिकों की एक अन्य मान्यता के अनुसार पाँच नहीं, अपितु पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु इन चार भूतों के मिलने से चैतन्य की उत्पत्ति होती है-

अत्र चत्वारि भूतानि भूमिवार्यनलानिलाः।
चतुर्भ्यः खलु भूतेभ्यश्चैतन्यमुपजायते।।[2]

(यहाँ चार भूत हैं- पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु। इन चार भूतों से चैतन्य उत्पन्न होता है।) यहां पर यह कहना उचित होगा कि चार्वाक-दर्शन प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता है। आकाश में किसी प्रकार का वर्ण या रूप नहीं होता। इसका चक्षु आदि इन्द्रिय के द्वारा प्रत्यक्ष नहीं किया जा सकता। इसलिए यह सम्भव है कि चार्वाकों की एक परम्परा ने आकाश को भूत स्वीकार करने का निषेध कर दिया हो एवं पाँच के स्थान पर चार भूतों से ही चैतन्य की उत्पत्ति मानने लगे हों।

बौद्ध ग्रन्थ दीघनिकाय के ब्रह्मजाल सुत्त में चार भूतों को मानने वाले लोकायतिकों का उल्लेख हुआ है। उनका कथन है कि यह आत्मा रूपी है, चार महाभूतों से निर्मित तथा माता-पिता के संयोग से उत्पन्न है तथा शरीर के नष्ट होते ही चेतना उच्छिन्न, विनष्ट और लुप्त हो जाती है।[3]

सूत्रकृतांग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध के अनुसार पंचमहाभूतवादी कहते हैं कि सत्क्रिया या असत्क्रिया, सुकृत या दुष्कृत, कल्याण या पाप, साधु या असाधु, सिद्धि या असिद्धि,

नरक या स्वर्गादि की प्राप्ति अथवा तिनके के हिलने जैसी क्रिया भी इन पंच महाभूतों से होती है। ये पांच महाभूत किसी कर्त्ता के द्वारा निर्मित नहीं हैं और न निर्मेय हैं। ये किसी के द्वारा कृत नहीं हैं और न ही ये कृत्रिम हैं। न ही ये अपनी उत्पत्ति के लिए किसी की अपेक्षा रखते हैं। ये पांचों महाभूत अनादि एवं अनन्त हैं। ये स्वतन्त्र एवं शाश्वत हैं। अपना कार्य स्वयं करने में समर्थ हैं।[4]

खण्डन:- चार्वाकों की इस मान्यता का सूत्रकृतांग में सीधा खण्डन नहीं किया गया है। किन्तु निर्युक्तिकार भद्रबाहु ने खण्डन करते हुए कहा है कि पृथ्वी आदि पंच भूतों के संयोग से चैतन्य आदि गुण उत्पन्न नहीं हो सकते, क्योंकि पंचमहाभूतों का गुण चैतन्य नहीं है। अन्य गुण वाले पदार्थों के संयोग से अन्य गुण वाले पदार्थ की उत्पत्ति नहीं हो सकती। जिस प्रकार बालू रेत में तेल उत्पन्न करने का स्निग्धता गुण नहीं है, इसलिए बालू रेत को पीलने पर उससे तेल उत्पन्न नहीं हो सकता; उसी प्रकार पंचभूतों में चेतनता न होने से उनके संयोग से चैतन्य उत्पन्न नहीं हो सकता। दूसरी बात यह है कि पांच इन्द्रियों (रसन, स्पर्शन, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र) से होने वाले ज्ञानों का संकलनात्मक अनुभव एक ही ज्ञाता को होने के कारण आत्मा का अलग अस्तित्व ज्ञात होता है।[5]

आचार्य शीलाङ्क ने सूत्रकृताङ्गटीका में चार्वाक मत का खण्डन करते हुए कहा है कि जौ, गुड, महुआ आदि में मदशक्ति नहीं होते हुए भी इनके समुदाय में मदशक्ति प्रकट हो जाती है, यह कथन उचित नहीं है, क्योंकि जौ, गुड, जल आदि में भूख मिटाने का सामर्थ्य होता है, भ्रम (चक्कर) उत्पन्न करने का सामर्थ्य होता है तथा जल में तृषा को दूर करने का सामर्थ्य होता है, अत: इनसे मदशक्ति का उत्पन्न होना सम्भव है, जबकि पंचभूतों में से पृथ्वी आदि किसी भी भूत में चैतन्य नहीं होता, अत: पंचभूतों से चैतन्य की उत्पत्ति हेतु जो दृष्टान्त दिया गया है वह विषम या अनुचित है।[6] यदि पंचभूतों में चैतन्य स्वीकार किया जाए तो उनसे उत्पन्न जीव का कभी मरण नहीं हो सकेगा, क्योंकि मृत शरीर में भी पृथ्वी आदि पांच भूतों का सद्भाव रहता है।[7] इससे यह मान्यता भी खण्डित हो जाती है कि पंच भूतों के नष्ट होते ही देही आत्मा का भी नाश हो जाता है।

शीलाङ्काचार्य ने एक तर्क यह भी प्रस्तुत किया है कि मिट्टी से निर्मित पुतली में पांचों महाभूत होते हैं, फिर भी उसमें जड़ता ही देखी जाती है, चेतना नहीं।[8]

आत्मा की सिद्धि अनुमान एवं आगम प्रमाण से भी होती है। शीलाङ्काचार्य ने अनुमान प्रमाण से आत्मा की सिद्धि करते हुए कहा है- आत्मा है, क्योंकि उसके ज्ञानादि असाधारण गुण उपलब्ध होते हैं, जिस प्रकार चक्षु इन्द्रिय का साक्षात् ज्ञान नहीं होता है,

वह उसके असाधारण गुण रूपविज्ञान की शक्ति से अनुमित होती है, उसी प्रकार आत्मा भी उसके असाधारण चैतन्य गुण से ज्ञात होता है। आत्मा का असाधारण गुण चैतन्य है तथा पृथिवी आदि भूतों में इसका निराकरण करने पर ही यह असाधारण गुण ज्ञात होता है।[9] 'मैं सुखी हूँ, मैं दुःखी हूँ' आदि अनुभवों में आत्मा प्रत्यक्ष से तथा ''अत्थि मे आया उववाइए'' वाक्यों में आगम प्रमाण से सिद्ध है।

पंचभूतों से पृथक् शाश्वत आत्म-तत्त्व को स्वीकार करना आवश्यक है, अन्यथा बंध-मोक्ष एवं पुण्य-पाप आदि की व्यवस्था नहीं बन सकेगी। जैनदर्शन का मन्तव्य है कि द्रव्यार्थिक नय की दृष्टि से जीव या आत्मा शाश्वत है तथा पर्यायार्थिक नय की दृष्टि से वह अशाश्वत या अनित्य है। आत्मा की पर्यायों में परिवर्तन होते हुए भी द्रव्यार्थिक नय की दृष्टि से जो आत्मा कर्मों का कर्ता होता है वही उसके फल का भोक्ता भी होता है। उत्तराध्ययनसूत्र में स्पष्टरूपेण कहा गया है-

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिओ सुप्पट्ठिओ।।[10]

आत्मा ही अपने दुःख एवं सुख का कर्ता एवं विकर्त्ता है। वह सन्मार्ग में चलने पर अपना मित्र तथा कुमार्ग पर आरूढ होने पर अपना शत्रु हो जाता है। यदि आत्मा को पंचभूतों से स्वतन्त्र द्रव्य नहीं माना जाएगा तो कर्म-बंध एवं उसका फल भोग किसके द्वारा होगा, यह प्रश्न अनुत्तरित रह जाएगा।

(2) एकात्मवाद का सिद्धान्त एवं उसका खण्डन

जैनदर्शन के अनुसार लोक में अनन्त जीव हैं तथा वे सभी अपने-अपने कृत कर्मों के अनुसार फल प्राप्त करते हैं। शुभ कर्मों का फल शुभ तथा अशुभ कर्मों का फल अशुभ प्राप्त होता है। किन्तु कुछ परमतावलम्बी एक ही आत्मा का अस्तित्व स्वीकार कर सभी जीवों को उसी के नानारूप मानते हैं। सूत्रकृतांग में उनके मत का उल्लेख करते हुए कहा गया है-

जहा य पुढवीथूभे, एगे नाणा हि दीसइ।
एवं भो! कसिणे लोए, विण्णू नाणा हि दीसइ।।[11]

जिस प्रकार एक ही पृथ्वी पिण्ड घर, भवन आदि नाना रूपों में दिखाई देता है, उसी प्रकार समस्त लोक में व्याप्त विज्ञ पुरुष (ब्रह्म) नाना जीव रूपों में दिखाई देता है। वैदिक ग्रन्थ ब्रह्मबिन्दूपनिषद् एवं कठोपनिषद् में इसका प्रतिपादन करते हुए कहा गया है-

एक एव हि भूतात्मा, भूते भूते व्यवस्थितः।
एकधा बहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत्।।[12]

वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो, रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च।।[13]

जिस प्रकार एक ही चन्द्रमा जल से भरे हुए विभिन्न घड़ों में अनेक दिखाई देता है, उसी प्रकार सभी भूतों में रहा हुआ एक ही भूतात्मा उपाधिभेद से नाना दिखाई देता है। जिस प्रकार एक ही वायु सारे लोक में व्याप्त है, किन्तु उपाधिभेद से अलग-अलग रूप वाला हो गया है, उसी प्रकार एक ही आत्मा उपाधिभेद से विभिन्न रूप वाला हो जाता है।

वेदान्तदर्शन में भी एक ब्रह्म को सत् मानकर समस्त जीवों को उसी का अंश स्वीकार किया गया है तथा उसे समस्त चराचर जगत् का कारण माना गया है। वेदान्तदर्शन का विकास उपनिषदों के आधार पर हुआ है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है-

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः, सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः, साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च।।[14]

अर्थात् एक देव ही समस्त प्राणियों में छिपा हुआ है। वह सर्वव्यापी है एवं समस्त प्राणियों का अन्तर्यामी परमात्मा है, वह सब कर्मों का अधिष्ठाता तथा समस्त भूतों का निवास है। वह सबका साक्षी चेतन स्वरूप, शुद्ध एवं गुणातीत (सत्त्व, रज एवं तम से रहित) है।

खण्डनः- सूत्रकृतांग में इसका खण्डन करते हुए कहा गया है कि यह मन्दबुद्धि लोगों का कथन है कि आत्मा एक है। वास्तव में तो आरम्भ आदि पापप्रवृत्ति में संलग्न सभी लोग स्वयं पाप करके अपने-अपने कर्मानुसार तीव्र दुःख को प्राप्त करते हैं।[15] सब आत्माएँ अस्तित्व की दृष्टि से अलग-अलग हैं, सबका अपना-अपना कर्म होता है, तदनुसार ही जीवों को फल की प्राप्ति होती है। स्वरूपतः आत्मा एक है, इसलिए स्थानांगसूत्र में 'एगे आया' कथन आया है, वह जीव के अकेलेपन को भी द्योतित करता है, अतः जैनदर्शन में अस्तित्व की दृष्टि से विचार करें तो सभी जीव अलग-अलग हैं, स्वतन्त्र हैं एवं संख्या में अनन्त हैं। यदि इन जीवों को भिन्न-भिन्न नहीं माना जाएगा तो कर्म-फल की व्यवस्था नहीं बन सकेगी। एक के कृत कर्मों का फल सबको भोगना पड़ेगा। परिवार, समाज आदि का व्यवहार नहीं हो सकेगा। एक का जन्म होने पर सभी का जन्म, एक की मृत्यु होने पर सभी की मृत्यु माननी पड़ेगी। एक के मुक्त होने पर सभी मुक्त हो जायेंगे तथा एक के बंधन को प्राप्त होने पर सभी जीव बंधन को प्राप्त हो जायेंगे। किन्तु सत्य इससे विपरीत है। यहाँ किसी का जन्म होता है तो किसी की मृत्यु। कोई सुखी होता है तो कोई दुःखी। कोई वृद्ध है तो कोई बालक है। कोई मनुष्य है तो कोई पशु। अतः यह मानना चाहिए कि सभी जीवों की

स्वतन्त्र सत्ता है एवं सभी अपने कृत कर्मों के अनुसार फल प्राप्त करते हैं। सभी जीवों को अलग-अलग मुक्त होना है। सामाजिक व्यवहार एवं नैतिकता का प्रश्न भी तभी घटित होगा जब सब जीवों की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार की जाएगी। आचार्य शीलांक का कथन है कि एक आत्मा को स्वीकार करने पर एक के पाप से सभी पापी और एक की मुक्ति से सबकी मुक्ति माननी पड़ेगी, जो उचित नहीं है। वे आगे कहते हैं कि यदि एक ही व्यापक आत्मा है तो घटादि में भी चैतन्य मानना होगा, जो है नहीं। सभी भूतों के अपने-अपने गुण हैं तथा सभी जीवों का अपना-अपना ज्ञान है। अतः आत्माद्वैत का सिद्धान्त सम्यक् नहीं है।[16] साधुरङ्ग ने दीपिका व्याख्या में कहा है कि यदि एक ही आत्मा व्यापक होकर प्रत्येक शरीर में जलचन्द्रवत् प्रतिभासित होता है तो कुछ सुखी हैं, कुछ दुःखी हैं, कुछ धनिक हैं, कुछ निर्धन हैं, कुछ मूर्ख हैं, कुछ प्राज्ञ हैं इत्यादि व्यवस्था नहीं हो सकेगी।[17] यदि एक ही आत्मा है तो एक प्राणी के द्वारा अपराध किए जाने पर सभी देव, मानव, तिर्यञ्च एवं नारक समान दुःखरूप फल का अनुभव करेंगे। जबकि ऐसा देखा नहीं जाता है। नारकों को दुःख एवं देवों को सुख का आधिक्य रहता है।[18]

(3) तज्जीव-तच्छरीरवादियों का मत एवं उसका खण्डन

जीव एवं शरीर में भिन्नता नहीं मानना ही तज्जीव-तच्छरीरवाद कहा गया है। इस मत के अनुसार आत्माएँ तो अनेक स्वीकार किए गए हैं, क्योंकि संसार में अज्ञानी जीव भी हैं और पण्डित पुरुष भी। अतः सर्वव्यापी रूप में एक आत्मा स्वीकार करना तज्जीव-तच्छरीरवादी उचित नहीं मानते, किन्तु इनका मानना है कि जब तक शरीर रहता है तब तक ही चैतन्य या आत्मा का अस्तित्व है। मृत्यु होने के पश्चात् आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं रहता। अतः शरीर से भिन्न कोई आत्मा मृत्यु के पश्चात् परलोक में जाकर उत्पन्न नहीं होता है।[19] इनका कथन है- "विज्ञानघन एवैतेभ्यो भूतेभ्यः समुत्थाय तान्येवानुविनश्यति न प्रेत्य संज्ञाऽस्तीति।"[20] अर्थात् इन पंचभूतों से विज्ञानघन आत्मा उत्पन्न होता है तथा उन्हीं भूतों में विलीन हो जाता है। वह मरकर अन्यत्र कहीं उत्पन्न नहीं होता।

पंचभूतवाद के समान तज्जीव- तच्छरीरवाद की मान्यता भी चार्वाकों की प्रतीत होती है। आचार्य शीलांककृत टीका एवं श्री हर्षकुलगणि रचित दीपिका व्याख्या में यह प्रश्न उठाया गया है कि भूतवादियों से तज्जीव-तच्छरीरवादियों में क्या भिन्नता है? इसके उत्तर में कहा गया है कि भूतवादियों के अनुसार पंचभूत काया के आकार में परिणत होकर धावन, चलन आदि क्रिया करते हैं, किन्तु तज्जीव-तच्छरीरवाद में काया के आकार में परिणत भूतों से चेतना नामक आत्मा उत्पन्न होता है।

तज्जीव-तच्छरीरवादियों के मत को सूत्रकृतांग में प्रस्तुत करते हुए कहा गया है-

नत्थि पुण्णे व पावे वा, नत्थि लोए इतोवरे।
सरीरस्स विणासेणं, विणासो होइ देहिणो।।[21]

इनके अनुसार अभ्युदय की प्राप्ति कराने वाला तत्त्व पुण्य भी नहीं है तथा इसके विपरीत जीव का पतन करने वाला तत्त्व पाप भी नहीं है, क्योंकि जब शरीर से भिन्न जीव की ही सत्ता नहीं है तो उसमें रहने वाले पुण्य-पाप भी सत्तावान् नहीं हो सकते। इस लोक से भिन्न अन्य लोक भी नहीं है, जहां पर पुण्य-पाप का अनुभव किया जा सके, क्योंकि शरीर का विनाश होने पर आत्मा या चैतन्य का विनाश हो जाता है।

सूत्रकृताङ्ग के द्वितीय श्रुतस्कन्ध में भी तज्जीव-तच्छरीरवाद की चर्चा है। उसके अनुसार तज्जीव-तच्छरीरवादियों का कथन है कि पैरों के तलवे से ऊपर तथा सिर के केशों के अग्रभाग से नीचे तक तथा बीच में जो भी शरीर है, वह जीव है। यह शरीर ही जीव का समस्त पर्याय है। इस शरीर के जीने तक ही यह जीता है तथा शरीर के मर जाने पर यह नहीं जीता। शरीर के चलने पर ही यह चलता है तथा विनष्ट होने पर नहीं चलता।[22] वे कहते हैं कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है, इसे किसी प्रकार सिद्ध नहीं किया जा सकता। जीव को शरीर से पृथक् मानते हैं तो उनका प्रश्न है कि वह आत्मा दीर्घ है या ह्रस्व? परिमंडल है या गोल? वह त्रिकोण है या चतुष्कोण? षट्कोण है या अष्टकोण? अथवा क्या यह आयत है?यह काला है या नीला? लाल है या पीला या श्वेत? यह सुगन्धित है या दुर्गन्धित? यह तीखा है या कड़वा? कषैला है या खट्टा या मीठा? यह कर्कश है या कोमल? भारी है या हल्का? शीतल है या उष्ण? स्निग्ध है या रुक्ष?[23] तज्जीव-तच्छरीरवादियों की इस शंका का उत्तर हमें आचारांग सूत्र में प्राप्त होता है।[24]

जो लोग जीव और शरीर को पृथक् मानते हैं वे आत्मा और शरीर को पृथक्-पृथक् करके दिखा नहीं सकते। जिस प्रकार म्यान से तलवार को बाहर निकाल कर दिखाया जा सकता है उस प्रकार कोई पुरुष शरीर से जीव को पृथक् करके नहीं दिखा सकता। इस प्रकार के आठ तर्क तज्जीव-तच्छरीरवादियों के द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं, जिनसे यही सिद्ध किया गया है कि आत्मा को शरीर से पृथक् दिखाना सम्भव नहीं है। इसलिए शरीर को ही जीव मानना उचित है।[25]

राजप्रश्नीयसूत्र में भी राजा प्रदेशी के द्वारा केशीश्रमण के समक्ष ऐसी शंकाएँ उठायी गई हैं जो तज्जीव-तच्छरीरवाद की पुष्टि करती हैं। राजा प्रदेशी ने अपने अधार्मिक दादा एवं धार्मिक दादी के दृष्टान्त देकर कहा है कि यदि शरीर से जीव भिन्न होता तो दादा नरक से

लौटकर मुझे सावधान करते कि मैं पापक्रिया न करूँ तथा दादी स्वर्ग से आकर सजग करती कि मैं अपना आचरण सुधारूँ। उन्होंने आकर मुझे कुछ नहीं कहा। इससे मुझे लगता है कि जो शरीर है वही जीव है। जीव एवं शरीर भिन्न नहीं हैं। राजप्रश्नीय सूत्र में लोहकुम्भी में चोर को बन्द करने आदि के भी उदाहरण दिए गए हैं, जो तज्जीव-तच्छरीरवाद को प्रतिपादित करते हैं।[26]

सूत्रकृतांग में कहा गया है कि जो कर्म समारम्भों में लगे रहते हैं वे सत्क्रिया और असत्क्रिया में, सुकृत और दुष्कृत में, पुण्य और पाप में, साधु और असाधु में, सिद्धि और असिद्धि में, नरक और स्वर्ग में भेद नहीं मानते। सूत्रकृतांग में यह भी संकेत किया गया है कि तज्जीव-तच्छरीरवादी भी कदाचित् अपने मतानुसार प्रव्रज्या अंगीकार करते हैं और अपने ही धर्म को सत्य समझते हैं। वे उपदेश देकर दूसरे लोगों को भी अपने मत से जोड़ते हैं, किन्तु सत्-असत् आदि क्रियाओं में भेद का प्रतिपादन नहीं होने के कारण वे हिंसा, परिग्रह आदि का सेवन और अनुमोदन करने लगते हैं। काम भोगों में आसक्त होकर न अन्यों को बन्धन मुक्त कर पाते हैं और न स्वयं मुक्त हो पाते हैं।

आचार्य शीलांक ने तज्जीव-तच्छरीरवाद को प्रस्तुत करते हुए यह भी शंका उठाई है कि पुण्य-पाप के अभाव में जगत् के जीवों की विचित्रता किस प्रकार होगी? इसके उत्तर में वे तज्जीव-तच्छरीरवादियों की ओर से स्वभाववाद को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं- ''कण्टकस्य च तीक्ष्णत्वं, मयूरस्य विचित्रता। वर्णाश्च ताम्रचूडानां, स्वभावेन भवन्ति हि।''[27] अर्थात् कांटों की तीक्ष्णता, मयूर की विचित्रता और मुर्गे के विभिन्न वर्णों का होना स्वभाव से ही सिद्ध है। इसमें पुण्य, पाप आदि कारणों की अपेक्षा नहीं है। अत: आत्मा को शरीर रूप स्वीकार करने में बाधा नहीं है।

खण्डन- तज्जीव-तच्छरीरवाद भी एक प्रकार से चार्वाकों का ही मत है। क्योंकि यह आत्मा का स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार न करके नास्तिकता को स्थापित करता है। समाज में नैतिकता की स्थापना के लिए आत्मा का स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार करना आवश्यक है, क्योंकि वही अपने कृत कर्मों के अनुसार अन्य भव में भी फल की प्राप्ति कराता है। तज्जीव-तच्छरीरवाद मत अत्यन्त स्थूल अनुभव के आधार पर कहा गया प्रतीत होता है। वास्तव में चैतन्यधारी आत्मा शरीर से भिन्न है, ऐसा भेद-विज्ञानियों एवं केवलज्ञानियों ने अनुभव किया है। शरीर में चेतनाशीलता आत्मा के कारण है, आत्म-तत्त्व के निकल जाने पर शरीर निढाल हो जाता है। अत: यह कहना कि शरीर परिणत पंचभूतों से चैतन्य उत्पन्न होता है, उचित नहीं है। जैन दर्शन में तो आत्मा का विस्तृत विवेचन हुआ है, जिसके अनुसार गुणस्थानों में आरोहण आत्मा का होता है, शरीर का नहीं। औपशमिक आदि भाव

भी आत्मा में पाए जाते हैं, शरीर में नहीं। ज्ञान, दर्शन, गुण की उपलब्धि आत्मा में होती है, शरीर में उपलब्ध इन्द्रियाँ तो मात्र साधन बनती हैं। विभिन्न इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानों के आधार पर ही आत्मा को यह अनुभव होता है कि मैंने देखा, मैंने सुना, मैंने चखा, मैंने स्पर्श किया एवं मैंने सूंघा। ये सभी ज्ञान यद्यपि अलग-अलग इन्द्रियों के माध्यम से होते हैं, तथापि इनका संकलनात्मक ज्ञान एक ही आत्मा को होता है।

आत्मा को शरीर से अभिन्न मानने वाले वादियों का निराकरण करते हुए कहा गया है कि पंचभूतों से भिन्न आत्मा का अस्तित्व नहीं मानने पर चतुर्गतिक संसार में जीव द्वारा जन्म-मरण किस प्रकार किया जाएगा और फिर जगत् की विचित्रता भी कैसे घटित हो सकेगी? ऐसे अज्ञानी लोग अज्ञान रूपी अन्धकार से पुनः अधिक अन्धकार (ज्ञानावरण आदि) की ओर गमन करते हैं। पंचभूतों से निर्मित शरीर से भिन्न आत्मा का अभाव मानने पर पुण्य, पाप का भी अभाव होगा और पुण्य-पाप के अभाव से परलोक गमन का अभाव हो जायेगा। इस प्रकार आत्मा के अभाव का प्रतिपादन करने वाले मतवादी महारम्भ में डूब जाते हैं और महारम्भ में निमग्न होकर वे नरक का रास्ता पकड़ लेते हैं।[28]

राजप्रश्नीय सूत्र में केशीकुमार श्रमण ने राजा प्रदेशी द्वारा 'जीवो तं सरीरं तं चेव' (तज्जीव-तच्छरीरवाद) के पक्ष में प्रदत्त तर्कों का सोदाहरण खण्डन किया है। उन्होंने बताया है कि किन कारणों से नरक में गया हुआ जीव हमें सावधान करने नहीं आ सकता, तथा स्वर्ग में गया हुआ जीव भी किन कारणों से आकर हमें नहीं चेताता। लोहकुम्भी आदि से निकलने में जीव को किसी छिद्र की आवश्यकता नहीं होती। जीव अप्रतिहत गति वाला होता है।[29]

पूज्य घासीलालजी कृत टीका एवं युवाचार्य श्री मधुकरमुनिजी द्वारा सम्पादित सूत्रकृतांग में आत्मा को शरीर से अभिन्न मानने को अनुचित ठहराते हुए कतिपय तर्क दिए गए हैं, यथा-

1. शरीर को ही आत्मा मानने पर बुद्धिमानों की शास्त्रादि में प्रवृत्ति नहीं होगी।[30] मोक्ष के लिए ली जाने वाली दीक्षा, चारित्र आदि की प्रवृत्ति नहीं हो सकेगी, किन्तु तीर्थंकर, गणधर आदि की मोक्ष के लिए प्रवृत्ति होने से उसे निष्फल नहीं कहा जा सकता।
2. यदि शरीर से भिन्न आत्मा न हो तो बाल्यावस्था में अनुभूत पदार्थ का स्मरण नहीं होना चाहिए।
3. किसी भी व्यक्ति को दान, सेवा, परोपकार, लोक-कल्याण आदि शुभकर्मों का फल प्राप्त नहीं होगा।

4. हिंसा, झूठ, चोरी आदि पापकर्म करने वाले लोग नि:शंक होकर पापकर्म करेंगे, क्योंकि शरीर के साथ चैतन्य का विनाश हो जाने से फल भोगने वाला कोई नहीं रहेगा।

(क्रमशः)

संदर्भ:-

1. सूत्रकृतांग, 1.1.1., गाथा 7-8
2. सर्वदर्शनसंग्रह, चार्वाकदर्शन, श्लोक 6
3. अयं अत्ता रूपी चातुर्महाभूतिको मातापेत्तिकसम्भवो कायस्स भेदा उच्छिज्जति, विनस्सति, न होइ परं मरणा....... इत्थेके सतो सत्तस्स उच्छेदं विनासं विभवं पञ्ञापेंति।- दीघनिकाय, ब्रह्मजाल सुत्त, पृ. 30, प्रकाशक-भारतीय बौद्ध शिक्षा परिषद्, बुद्ध विहार, लखनऊ।
4. सूत्रकृतांग 2.1, सूत्र 655
5. पंचण्हं संजोए अण्णगुणाणं च चेयणाइगुणो।
पंचिंदियठाणाणं ण अण्णमुणियं मुणइ अण्णो।।
-निर्युक्ति-संग्रह, सूत्रकृतांग निर्युक्ति, गाथा 33
6. यदप्यत्रपूर्वोक्तं यथा- मद्याङ्गेष्वविद्यमानाऽपि प्रत्येकं मदशक्तिः समुदाये प्रादुर्भवतीति, तदप्ययुक्तं, यतस्तत्र किण्वादिषु या च यावती च शक्तिरुपलभ्यते, तथाहि किण्वे बुभुक्षापनयनसामर्थ्यं भ्रमिजननसामर्थ्यं च उदकस्य तृडपनयन- सामर्थ्यमित्यादिनेति, भूतानां च प्रत्येकं चैतन्यानभ्युपगमे दृष्टान्तदार्ष्टान्ति- कयोरसाम्यम्।- श्री सूत्रकृतांगसूत्र 1.1.1, गाथा 7-8 पर शीलांककृतटीका पत्रांक 53
7. किं च भूतचैतन्याभ्युगमे मरणाभावो, मृतकायेऽपि पृथ्व्यादीनां भूतानां सद्भावात्। -वही, पत्रांक 53
8. लेप्यप्रतिमायां समस्तभूतसद्भावेऽपि जडत्वमेवोपलभ्यते।- वही, पत्रांक 53
9. अस्त्यात्मा, असाधारणतद्गुणोपलब्धेः............। -वही पत्रांक 54
10. उत्तराध्ययनसूत्र 20.37
11. सूत्रकृताङ्ग 1.1.1.9
12. ब्रह्मबिन्दूपनिषद्, 11
13. कठोपनिषद्, 2.2.10
14. श्वेताश्वरोपनिषद्, 6.11
15. एवमेगे त्ति जंपंति, मंदा आरंभनिस्सिया।
एगे किच्चा सयं पावं, तिव्वं दुक्खं नियच्छइ।।- सूत्रकृतांग, 1.1.1.10
16. यदि पुनरेक एवात्मा व्यापी स्यात्तदा घटादिष्वपि चैतन्योपलब्धिः स्यात्, न

चैवं, तस्मान्नेक आत्मा भूतानां चान्याऽन्यगुणत्वं न स्याद्, एकस्मा-द्वात्मनोऽभिन्नत्वात्।

- श्री सूत्रकृतांगसूत्र, लाखाबावल, शीलांङ्कटीका, पत्रांक 60

17. श्री सूत्रकृतांगसूत्र, लाखाबावल, साधुरङ्गदीपिका व्याख्या, पत्राङ्क 61

18. वही, पत्राङ्क 61

19. पत्तेअं कसिणे आया, जे बाला जे अ पंडिया।
संति पिच्चा न ते संति, नत्थि सत्तोववाइया।।- सूत्रकृतांग, 1.1.1.11

20. वृहदारण्यकोपनिषद्, 2.4.12

21. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.1.1.12

22. सूत्रकृतांग सूत्र, 2.1, सूत्र 648

23. वही, सूत्र 649

24. आचारांगसूत्र में कहा गया है कि आत्मा न दीर्घ है न ह्रस्व, न वृत्त है न त्रिकोण, न चतुष्कोण, न परिमंडल, न कृष्ण, न नील, न लोहित, न पीला, न शुक्ल, न सुरभिगन्ध, न दुरभिगन्ध, न तिक्त है न कटु, न कसैला, न खट्टा, न मधुर, न ककर्श है न मृदु, न गुरु है न लघु, न शीत है न उष्ण, न स्निग्ध है न रुक्ष, न वह काया है। वह जन्मधर्मा नहीं है, वह संगरहित है, वह न स्त्री है, न पुरुष और न नपुंसक।- आचारांगसूत्र, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर, 1.5.6, सूत्र 176

25. सूत्रकृताङ्ग, 2.1, सूत्र 650

26. द्रष्टव्य- राजप्रश्नीयसूत्र, सूत्र 242 से 259

27. सूत्रकृतांग टीका, 1.1.1.12 में उद्धृत वाक्य

28. तमाओ ते तमं जंति, मंदा आरम्भनिस्सिया। - सूत्रकृतांग 1.1.1.14

29. द्रष्टव्य, राजप्रश्नीय सूत्र, सूत्र 243 से 259

30. देहमात्रस्य ह्यात्मत्वे देहनाशाद्विनाशतः।
महाधियां च शास्त्राणां प्रवृत्तिर्नैव संभवेत्।।
-श्री सूत्रकृतांगसूत्र, पूज्य घासीलाल कृत टीका, भाग-1, पृ. 141

-3 K 24-25, कुड़ी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर-342005 (राज.)

क्षमा-याचना

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका के समस्त लेखकों एवं पाठकों से हमारा नियमित सम्बन्ध रहता है। न चाहते हुए भी हमारी किसी भूल से आपके हृदय को ठेस पहुँचना स्वाभाविक है। पर्वाधिराज सम्वत्सरी महापर्व पर हम निर्मल हृदय से अपनी भूल का परिमार्जन करते हुए आपसे हार्दिक क्षमायाचना करते हैं। आशा है आप क्षमा कर मैत्री को प्रगाढ़ बनायेंगे।

-सम्पादक, सहसम्पादक एवं जिनवाणी परिवार

संगोष्ठी-आलेख

सूत्रकृतांग में साधना के बाधक तत्त्व*

श्री शांतिलाल बोहरा

जिनेश्वर भगवंतों ने साधना में आने वाली बाधाओं का शास्त्रों में विभिन्न रूपों में वर्णन किया है और साधकों को सद्प्रेरणा दी है कि उन बाधाओं में अटकें नहीं, उलझें नहीं, साधना क्षेत्र में पुरुषार्थ पूर्वक आगे बढ़ते जाएं, बढ़ते ही जाएं।

उन्हीं बाधक तत्त्वों में से कुछ का वर्णन प्रभु महावीर एवं सुधर्मास्वामी ने सूत्रकृतांग सूत्र के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

साधना के बाधक तत्त्व मुख्यतः पांच होते हैं- मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और अशुभ योग। मिथ्यात्व तथा अव्रत की दशा में साधना का शुभारम्भ ही नहीं होता है तथा प्रमाद और कषाय रंजित प्रवृत्तियों से साधना में नित नई बाधाएँ उपस्थित होती रहती हैं।

शास्त्रकार ने साधना मार्ग की सर्वप्रथम बाधा अबोधि अर्थात् मिथ्यात्व को बताया है, अतः शास्त्र का शुभारम्भ ही प्रथम श्रुतस्कंध प्रथम अध्ययन, प्रथम गाथा के प्रथम शब्द में 'बुज्झिज्ज' शब्द से किया है अर्थात् बोध को प्राप्त करो, क्योंकि बोध की प्राप्ति के बिना साधना नहीं हो सकती है। साथ ही इसी प्रसंग में बोध-प्राप्ति में बाधा स्वरूप परिग्रह एवं आसक्ति को अबोधि का एक अहम् कारण भी बताया गया है-[1] **चित्तमंतमचित्तं वा, परिगिज्झ किसामवि।**

आगे बढ़ते हुए शास्त्रकार ने एकान्त एवं मिथ्यात्व के पोषक मिथ्यावादों के निरूपण के अन्तर्गत पंचमहाभूतवाद, एकात्मवाद, तज्जीव तच्छरीरवाद, अकारकवाद, आत्मषष्ठवाद, क्षणिकवाद आदि मिथ्यावादों को भी साधना में बाधक बताते हुए इनका सम्यक् रूप से निरसन किया है।[2]

इसी क्रम में प्रथम अध्ययन के दूसरे उद्देशक में नियतिवाद, अज्ञानवाद आदि का स्वरूप प्रस्तुत करते हुए प्रभु फरमाते हैं कि ऐसी मिथ्या मान्यताओं में फंसे हुए श्रमणों का ज्ञान-दर्शन-चारित्र सुरक्षित नहीं रहता है।

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पेच्च दुल्लहा।।

इस गाथा के माध्यम से दूसरे अध्ययन में प्रभु महावीर ने भगवान ऋषभ के अट्ठानवें

*बैंगलोर चातुर्मास में 19-20 जुलाई 2014 को व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. के सान्निध्य में आयोजित स्वाध्याय-संगोष्ठी में प्रस्तुत आलेख।

लघु पुत्रों एवं भरत के चक्रवर्तित्व प्रसंग की घटना को आधार बना कर जीवात्मा को बोध प्राप्त करने की प्रेरणा दी है।[3]

बोध प्राप्ति हेतु प्रभु हमें आध्यात्मिक सच्चाई का उपदेश फरमाते हुए निम्नलिखित चार तथ्यों का उद्घाटन करते हैं-

1. यहीं और अभी बोध को प्राप्त कर लो, परभव में यह सुलभ नहीं होगा।
2. मृत्यु सभी प्राणियों की निश्चित है, अतः कोई भी अमर नहीं रहेगा।
3. माता-पिता आदि संसारियों के प्रति मोह सुगति से वंचित कर देगा।
4. मोहग्रस्त जीव अपने दुष्कर्मों से स्वयं ही दुःखी एवं पीड़ित होता है। अतः बोध प्राप्त करके सम्यक् आचरण करना चाहिये।

प्रभु फरमाते हैं कि साधना के क्षेत्र में मायाचार का सेवन साधना हेतु सबसे बड़ा बाधक तत्त्व है।

जइ वि य णिगिणे किसे चरे, जइ वि य भुंजिय मासमंतसो।
जे इह मायाइ मिज्जती, आगंता गब्भायऽणंतसो।।

चाहे कोई साधक नग्न रहे, मासक्षपण आदि घोर तप करले, परन्तु माया का निवारण नहीं हुआ तो अनंतकाल तक संसार परिभ्रमण ही करना पड़ेगा।[4]

अन्ने अन्नेहिं मुच्छित्ता, मोहं जंति नरा असंवुडा।
विसमं विसमेहिं गाहिया, ते पावेहिं पुणो पगब्भिता।।

परीषह-सहन के प्रसंग में प्रभु फरमाते हैं कि कभी कभी साधक माता-पिता, स्त्री-पुत्र आदि स्वजन तथा अन्यान्य द्रव्यों में मूर्च्छित होकर पुनः असंयम अथवा पापकर्म में प्रवृत्त हो जाता है। इस दृष्टि से प्रभु ने परीषह तथा मूर्च्छा या आसक्ति को साधना का बाधक तत्त्व बताया है।[5] परीषह के अवसर पर हार जाना या विचलित हो जाना एक प्रकार का प्रमाद ही है। **महयं पलिगोव जाणिया.....**। प्रभु ने संसार परिचय को महापंक-कीचड़ बताते हुए त्याज्य बताया है।

साधक के लिये शास्त्रकार ने संसारी लोगों से अति परिचय को साधना का एक विशेष बाधक तत्त्व बताया है। सूत्रकृतांग सूत्र की 'अमरसुखबोधिनी व्याख्या' तथा शीलांक वृत्ति में बताया गया है कि साधु के लिये संसारी लोगों का अति परिचय गाढ़े कीचड़ के समान है जिसमें फंसकर साधु को पूजा, प्रतिष्ठा तो मिलती है, परन्तु उसके कारण साधु की साधना में साता, ऋद्धि एवं रस रूप गारव का तीखा और सूक्ष्म तीर गहरा चुभ जाता है जो तीव्र शल्य रूप होता है एवं साधना बाधित हो जाती है।[6]

प्रभु फरमाते हैं कि अधिकरण साधना का बाधक तत्त्व है। इस प्रसंग में अधिकरण का भाव रूप बताते हुए कठोर वाणी, हठ, कलह, विवाद आदि को अधिकरण मानते हुए शास्त्रकार कहते हैं कि- *'अट्ठे परिहायती बहु'*[7]

अर्थात् अधिकरण (कठोर वचनादि) के सेवन से साधक का बहुत सा अर्थ अर्थात् संयम-धन अथवा मोक्ष रूप प्रयोजन नष्ट हो जाता है।

सूत्रकृतांग सूत्र की टीका में आचार्य शीलांक का कथन है कि काम-वासना या सुख-सुविधाओं के पीछे दीवाने बन श्वेत वस्त्र सम संयम को मलिन बनाने से सारी मोक्ष सुख-साधना चौपट हो जाती है।[8] अर्थात् शीलांकाचार्य की दृष्टि में कामना या सुविधा प्रेम साधना का एक प्रमुख बाधक तत्त्व है। साथ ही कामना या सुविधा की पूर्ति का सम्बन्ध निश्चित ही आरम्भ-समारम्भ से होकर ही गुजरता है, इस संदर्भ में सूत्रकृतांग सूत्र के चूर्णिकार श्री जिनदास गणि महत्तर का कहना है कि आरम्भ का सेवन करने वाला मनुष्य सूर्य के प्रकाश रहित अंधकार वाली दिशा अर्थात् नरक गति को प्राप्त करता है अथवा मोह अज्ञान रूप भाव अंधकार को प्राप्त करता है।[9]

''आसुरियं दिसं..................।
पाठान्तर-आसुरियं.....न तत्थ सूरो विद्यते।।''

अतः साधक को सभी प्रकार के आरम्भ कार्यों से बचना चाहिये।

सुख-सुविधा, आरम्भ-समारम्भ, पूजा, श्लाघा, प्रतिष्ठा की कामना इन तीनों दोषों में एक सांयोगिक संबंध है। जैसे सुख-सुविधा प्रेमी आरम्भ-समारम्भ करता रहता है उसी प्रकार पूजा, श्लाघा की चाहना करने वाले को भी आरम्भ-समारम्भ में उलझना पड़ता है। इसी दृष्टि को ध्यान में रखते हुए परमात्मा महावीर ने साधक को आत्म-श्लाघा और पूजा प्रतिष्ठा से विरत रहने के संदेश देते हुए फरमाया है कि-

दुक्खी मोहे पुणो पुणो, निव्विंदेज्ज सिलोग-पूयणं।
एवं सहितेऽहिपासए, आयतुलं पाणेहिं संजते।।[10]

अर्थात् पूजा श्लाघा की चाहना से जीव दुःखी होता है और पुनःपुनः विवेकमूढ़ता को प्राप्त करता है, विवेक शून्य हो जाता है, इसलिये पूजा श्लाघा से दूर रहें और समस्त प्राणियों को 'आयतुला' आत्म तुल्य देखें। यही भाव सम्यक्त्व का पोषक भाव भी है। साथ ही ऐसा करने वाला साधक हीन भावना तथा अहम् भावना से ऊपर उठकर समभावना में स्थित हो सकेगा अन्यथा सदा अस्थिर रहेगा और संसार-परिभ्रमण बढ़ता रहेगा।

प्रभु ने इस सूत्र के तीसरे अध्ययन में परीषह-परिज्ञा का स्वरूप निरूपित किया है।

परीषह भी साधना के लिये बाधक है, परन्तु परीषह जीतने वाला साधक आगे बढ़ जाता है और परीषहों में घबरा जाने वाला साधक द्रव्य अथवा भाव रूप से पलायन कर जाता है। कहा है-''हत्थी वा सरसंवीता कीवाऽवसा गता गिहं।।''[11]

द्रव्य से पलायन करने वाला साधक संयम पथ से विचलित होकर पुनः गृहवासी बन जाता है एवं भाव से पलायन करने वाला द्रव्य से तो संयमी बना रहता है, परन्तु संयम-भाव का अभाव होने लगता है। वह शिथिलाचारी बन जाता है।

ऐसी स्थिति वाले साधक को संसारपक्षीय स्वजन-परिजन भी उसे पुनःपुनः संसार की ओर खींचते हैं तथा भोगों का निमंत्रण करते रहते हैं। शास्त्रकार इस अवस्था को स्वजन उपसर्ग की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि दुर्बल मनोभाव वाला साधक इस बाधा को पार नहीं कर सकता है और भोगों की ओर आकर्षित होकर संयम का परित्याग करके गृहवास की ओर चल पड़ता है।

यही आशय इस गाथा में बताया गया है-

एवं निमंतणं लद्धुं मुच्छिया गिद्ध इत्थीसु।
अज्झोववण्णा कामेहिं चोइज्जंता गिहं गया।।[12]

चतुर्थ अध्ययन में विशेष रूप से स्त्री-परिज्ञा के अंतर्गत काम-भोगों को साधना में विशेष बाधक बताते हुए सदा स्त्री-कथा, स्त्री-परिचय, आकर्षण आदि से दूर रहने की प्रेरणा प्रदान की गई है।

इस प्रकार चार अध्यायों में विभिन्न प्रकार के मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय एवं अशुभ योगों के अनेक प्रकार की वृत्तियों-प्रवृत्तियों का परिचय देते हुए आगमकार ने साधना के विभिन्न बाधक तत्त्वों का निरूपण किया है एवं उनसे सावधान रहकर साधना में निरन्तर प्रगतिशील बने रहने की प्रेरणा भी साथ-साथ ही दी है।

छठे अध्ययन में वीर प्रभु की स्तुति के माध्यम से कुछ अति विशेष एवं महत्त्वपूर्ण संकेत भी किये गये हैं। मुख्य रूप से भक्ति रूप अध्ययन है, प्रभु के गुणों की स्तुति है। साथ ही चार अध्ययनों में बताई गई विभिन्न मानव मन की दुर्बलताओं का समाधान भी है। जिसे इस रूप में समझने की आवश्यकता है कि महावीर भी एक मानव ही थे, परन्तु उन्होंने अपने संयमी जीवन में किसी भी बाधक तत्त्व को हावी नहीं होने दिया था। प्रत्येक साधक को चाहिये कि वह इन गुणों से युक्त महावीर के संयमी जीवन को अपना आदर्श बनाए। साथ ही प्रकारांतर से इस अध्ययन में भी सुधर्मास्वामी ने साधना मार्ग के बाधक तत्त्वों का भी निरूपण कर दिया है। मूलतः गुणगान रूप अध्ययन में संभवतः एक ही स्थान पर साधक के

लिये निर्देशात्मक भाषा का प्रयोग इस अध्ययन में हुआ है। सुधर्मास्वामी फरमाते हैं-
जाणाहिं धम्मं च धिइं च पेहि।।[13]

अर्थात् निर्देश दिया है कि महावीर के धर्म को जानो एवं उनके धैर्य को देखो। यानी अज्ञान एवं अधीरता साधना पक्ष के सबसे बड़े बाधक तत्त्व हैं। अज्ञान मोह की ओर ले जाता है तथा अधीरता से चंचलता बढ़ती है। इस प्रकार साधना विकृत हो जाती है। धीरता से ही साधना में स्थिरता प्राप्त होती है, अन्यथा विचिकित्सा की स्थिति को प्राप्त करके मिथ्यात्व तक पतन हो सकता है।

साथ ही इसी अध्ययन में आगे 26 वीं गाथा में चार कषायों को अध्यात्म दोषों के रूप में परिभाषित किया है। अर्थात् चारों कषाय अध्यात्म एवं दर्शन को दूषित करने वाले हैं- '**कोहं च माणं च तहेव मायं, लोभं चउत्थं अज्झत्थ दोसा।**[14] आगे सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं- **से वारिया इत्थि सराइभत्तं।**[15] अर्थात् रात्रिभोजन एवं स्त्री संग को दुःख का कारण तथा साधना की कमजोरी मानकर त्यागने का संदेश किया गया है।

सातवें अध्ययन में साधना के बाधक तत्त्वों का निरूपण करते हुए शास्त्रकार आहार संचय, विभूषा, स्नान, शृंगार, रस लोलुपता आदि अनेक दोषों को कुशील रूप बताकर उनके सेवन को निर्ग्रंथ भाव से दूर करने का संकेत करते हुए कहते हैं-

जे धम्मलद्धं वि णिहाय भुंजे, वियडेण साहट्टु जो सिणाति।
जो धावती लूसयती व वत्थं अहाहु से णागणियस्स दूरे।।[16]

तेरहवें अध्ययन में विभिन्न अपेक्षाओं से कुसाधु के कुशील अथवा असदनुष्ठानों का अतथ्य के रूप में वर्णन किया है। यथा- गुरु का नाम छिपाना, स्वयं ज्ञानी न होते हुए भी अपने आपको विशिष्ट ज्ञानी बताना, अपने उपकारी की निंदा करना, उपशांत क्लेश को उभारना, शास्त्रवाक्यों का अपनी स्वच्छंद बुद्धि से विपरीत अर्थ करना, पर-दोषों का कथन करना आदि। ये अनेक कलुषित भाव एवं परिणाम साधना मार्ग के बाधक तत्त्वों के रूप में हैं।[17]

साथ ही यह भी बताया है कि जो साधु उच्च आचारवान होते हुए भी यदि अपने गुणों का अपनी ऋद्धि का गौरव करता है, स्व प्रशंसा हेतु अनेकानेक उपक्रम करता है तथा पर का तिरस्कार करता है, स्वयं के गुणों का मद करता है तो इस प्रकार वह साधु भी अपने संयम में अतथ्य का प्रवेश कर लेता है। संयम को दूषित करके वह संसार-परिभ्रमण को बढ़ा लेता है।[18]

अन्त में 16वें अध्ययन में फरमाया है कि जो साधक 15 अध्ययनों में बताये गये गुण दोषों में विवेकवान होता है अर्थात् गुण एवं साधक तत्त्वों का सेवन करता है तथा दोष एवं संयम बाधक तत्त्वों का त्याग करता है, उसे माहण, श्रमण, भिक्षु अथवा निर्ग्रंथ कहा जाता है।

अहाह भगवं एवं से दंते दविए वोसट्ठकाए ति वच्चे

माहणे ति वा, समणेति वा, भिक्खू ति वा निग्गंथे ति वा।।[19]

अर्थात् शास्त्रकार ने इस सूत्रकृतांग सूत्र के प्रथम श्रुतस्कंध में आत्म-साधना के साधक-बाधक तत्त्वों का विभिन्न रूपों में निरूपण किया है, जिनमें विवेकवान साधक उपयोग सहित प्रगतिशील होता हुआ संसार पारगामी बनता है, मुक्ति लक्ष्मी का वरण करके अनंत काल के लिये सदा शाश्वत सुखों में लीन हो जाता है।

संदर्भः-

1. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.1.1.2
2. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.1.1.7 से 32
3. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.2.1.1
4. सूत्रकृतांगसूत्र,1.2.1.9
5. (अ) सूत्रकृतांगसूत्र,1.2.1.20 (ब) सूत्रकृतांगसूत्र, 1.2.2.11
6. (अ) सूत्रकृतांग शीलांक वृत्ति, पत्रांक-63 (ब) सूत्रकृतांग अमरसुखबोधिनी व्याख्या, पृ. 337
7. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.2.2.19
8. सूत्रकृतांग शीलांक वृत्ति, पृ. 71
9. सूत्रकृतांग चूर्णि, पृ. 27
10. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.2.3.12
11. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.3.1.17
12. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.3.2.22
13. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.6.3
14. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.6.26
15. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.6.28
16. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.7.21
17. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.13.2 से 5
18. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.13.12 से 14
19. सूत्रकृतांगसूत्र, 1.16.1

-Sri Karnataka Jain Swadhyay Sangh, Ganeshmal Choradia Jain Bhawan, 157, Huriopet, Chickpet, Banglore-560053 (Karnataka)

आवश्यकता

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर को प्रधान कार्यालय, घोड़ों का चौक, जोधपुर हेतु कार्यालय सहायक की आवश्यकता है, जो जैन धर्म का जानकार हो तथा जिसे कम्प्यूटर का ज्ञान हो। हिन्दी, अंग्रेजी टाइपिंग का भी अच्छा अनुभव हो। **सम्पर्क करें**- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. 0291-2636763, 2641445

युवा-स्तम्भ

आओ सेल्फी लें

श्री प्रमोद महनोत

सेल्फी का शौक काफी मनोरंजक है, रिसेन्ट ट्रेण्ड है, हम भी जमाने के साथ चलते हुए अपनी सेल्फी लेकर पोस्ट करते हैं ताकि फ्रेण्ड सर्किल मेरा एडवेन्चर, गेट-अप या एक्शन देख कर अचंभित अथवा इम्प्रेस हो।

Nothing seems wrong in it, कम से कम इसी बहाने हम परिचितों के सम्पर्क में रहते हैं तथा अपनी पर्सनलिटी को उजागर करते हैं।

मैं मजाक नहीं कर रहा, सचमुच सीरियस हूँ स्मार्ट फोन हमें बहुत कुछ दर्शा रहा है, जन्म से लेकर मरण तक।

विवेक नहीं रखा एवं सचेत नहीं रहे तो सेल्फी मरण भी दे देती है, रोज पढ़ते हैं सेल्फी लेते हुए नदी में बह गये या किले की दीवार से गिरे और सीधे ऊपर चले गये। सेल्फी स्टोर तो हो गई, पर भेज नहीं पाये।

इण्टरनेट की वजह से मानव अपने आप से दूर हो गया है, उसे दुनिया की खबर है, पर अपनी आत्मा की नहीं, क्योंकि शरीर और आत्मा के भेद-ज्ञान से वह अपने आपको अनभिज्ञ रखने की चेष्टा करता है।

सेल्फी हादसों में भारत विश्व में प्रथम नम्बर पर है। सेल्फी के जरिये हमें अपने आप को जानने की, प्रतिष्ठित करने की बहुत आकांक्षा रहती है। हमारे धर्म गुरुओं ने हमें हरदम स्वयं को जानने का पाठ पढाया है, पर हम जानने की बजाय दिखाने को प्राथमिकता देते हैं।

स्व का उद्धार और कल्याण करना है, तो वह हमें सिर्फ अपने चिन्तन-मनन से प्राप्त होगा, अन्य के सामने स्वयं को प्रोजेक्ट करके नहीं बल्कि खुद के सामने खुद को प्रोजेक्ट करने से होगा।

अपनी फेब्रिकेटेड स्माइल सब जगह बिखेरना चाहते हैं, लेकिन जब मानव अपने अन्तर्मन की एवं अपने आचार-विचार की सेल्फी लेने लग जायेंगे तब उनके जीवन जीने का सलीका बदल जायेगा तथा उनके चेहरे की मुस्कान की चमक में निखार आ जायेगा।

सेल्फी हमारी वो पिक्चर है जो सिर्फ एक क्षण के लिये होती है और उसे हम लोगों के सामने प्रकट करना चाहते हैं, इस क्षणिक रूप को Post करने की लालसा का मुख्य कारण अन्य सब लोग हमारे विषय में क्या सोचेंगे यह चिन्तन है। खुद का स्वयं के बारे में चिन्तन नगण्य है।

इस तरह समीकरण (Equation) बदल रही है, अज्ञानी अपनी सेल्फी को ही सेल्फ समझ रहे हैं और गुरूर कर रहे हैं।

इस सोच से मानसिकता कुण्ठित हो रही है और आध्यात्मिकता पर खतरा मण्डरा रहा है, अतः आवश्यकता है सेल्फ तथा सेल्फी के बीच के अंतर को समझने की-

सेलफोन द्वारा ली गई सेल्फी क्या मानव को खुदगर्ज (Selfish) व Phoney नहीं बना देती है? आइये हम Selfy लेने की बजाय Self को feel करना शुरू करें।

अपनी अच्छाइयाँ, कमियाँ, खुशियाँ, Selfy में नहीं टटोलें, बल्कि अपने अन्तर्मन में झाँकें, वहाँ ढूँढें और स्वयं का निर्माण करें। ज्ञात रहे आत्मज्ञान के द्वारा ही स्व का निर्माण होता है, उसी से सम्बल (Confidence) प्राप्त कर मानव अपने जीवन को सार्थक कर सकता है। यह सिर्फ मानव ही कर सकते है, पशु-पक्षी व अन्य जीव नहीं।

हमारे जैन साधु सन्तों के चेहरों पर लुभावनी मुस्कान, चमक, शान्ति नज़र आती है, इस पर कभी चिन्तन किया है? इसका मूल रहस्य है कि हमारे गुणीजन सदैव अपने अन्तर्मन की सुध लेते हैं जिसे "सच्ची सेल्फी" कह सकते हैं। किसी कवि ने ठीक ही कहा है -

मनवा आजा अपने अन्तर में,
अन्तर्मन में जो रमण करे,
वही शिव सुख का आनन्द

-सी-345, हंस मार्ग, मालवीय नगर, जयपुर (राज.)

(पृष्ठ 63 का शेषांश)

यह अध्ययन पद्य में नहीं हैं फिर भी गाथा अध्ययन कहा गया है। गाथा का सामुद्र छन्द की दृष्टि से वृत्तिकार ने यह अर्थ किया है- जो छन्दोवद्ध नहीं है, पण्डितों ने उसे संसार में गाथा नाम दिया है। मालूम होता है कि यह अध्ययन किसी प्रकार के पद्य में रचित नहीं है फिर भी गाया जा सकता है, अतः गाथा नाम रखा है। अथवा जिसमें बहुत सा अर्थ समूह एकत्र कर समाविष्ट किया गया हो, वह गाथा है। अथवा पन्द्रह अध्ययनों में साधुओं के क्षमादि गुण विधि-निषेध रूप में बताये गये हैं, वे इस अध्ययन में एकत्रित करके प्रशंसात्मक रूप में कहे गये हैं इसलिए इस अध्ययन को गाथा कहा गया है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि इस सूत्र में विचारों की शुद्धता से आचार की शुद्धता तक क्रमबद्ध आगे बढ़कर जीवन को सार्थक बनाने की सुन्दर प्रेरणा दी गई है जो सबके लिए मननीय व आचरणीय है।

-पूर्व प्राचार्य, महावीर जैन स्वाध्याय पीठ, जलगाँव, जयपुर (राज.)

नारी-स्तम्भ

मन की शुद्धि

श्रीमती आशा धीरेन्द्र बांठिया

मन और तन का अटूट सम्बन्ध है। मानसिक और शारीरिक क्रियाएँ एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। मन में जो कुछ होता है वह शरीर पर व्यक्त होने लगता है। सच तो यह है कि मन ही शरीर की सारी क्रियायों पर नियन्त्रण करता है। उदाहरणतः- हम भोजन को देखते हैं। मन को अगर आहार पसन्द आ गया तो यह सूचना शरीर के सभी केन्द्रों में स्वतःचलित ज्ञान तन्तुओं द्वारा पहुँच जाती है। व्यक्ति को अपने मन की पसन्द का भोजन प्राप्त हो जाता है। वह उस भोजन को बहुत ही मनोयोग के साथ ग्रहण करता है। जिस कारण से भोजन शरीर को अत्यधिक ऊर्जा प्रदान करता है।

इसी तरह से मनुष्य के मन में शब्दों का प्रभाव पड़ता है। यदि किसी व्यक्ति के परिवार के सदस्यों के साथ या अन्य किन्हीं लोगों के साथ कलह-क्लेश हो जाए तो आप उसके चेहरे और उसकी उदासी से बता सकते हैं कि उस व्यक्ति का मन खिन्न है इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य के साथ जो कुछ भी होता है उसके बारे में उसकी मनोदशा देखकर आप समझ सकते हैं। मनुष्य के साथ जो भी घटनाएँ होती हैं, उनका सीधा सम्बन्ध मन के साथ जुड़ा होता है।

मन द्वारा संदेश प्राप्त होने पर जब हम प्रसन्न होते हैं तो चेहरे पर हंसी-मुस्कान व आँखों में खुशी के आँसू स्वतः आ जाते हैं और जब हम शोकसन्तप्त होते हैं तो चेहरे पर उदासी की चादर और आँखों में दुःख का गीलापन आ जाता है। जब हम भयभीत या क्रोधित होते हैं तो चेहरा लाल हो जाता है और हृदय की धड़कन तीव्र हो जाती है।

अतः मन अच्छा तो तन अच्छा। इसलिए गृहणियों को हमेशा अच्छे भावों के साथ गृह-कार्यों को करने की कोशिश करनी चाहिए। जिससे उनके परिवार में सुख-शांति की वृद्धि हो। अपने गुणों का विस्तार करने की दिशा में सोचें और अपनी कमियों को सुधारने की कोशिश करें। अपने आस-पास की चीजों, प्रकृति और संसार को प्रेमभाव से देखें। सभी के प्रति आभारी रहें। अपने मित्रों तथा अन्य साथियों के प्रति भी, जिनसे आपके विचार नहीं मिलते हों, उनके प्रति भी प्रेमभाव का व्यवहार करें, यह आभार की स्थिति आपको अपना अच्छा स्वरूप व मन की शांति प्रदान करने में सहायक होगी।

-ई-50, लालबहादुर नगर, जयपुर (राज.)

बाल-स्तम्भ

बदल गई श्रेया

श्रीमती कमला सुराणा

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित इस रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 अक्टूबर 2016 तक जिनवाणी संपादकीय कार्यालय, सामायिक-स्वाध्याय भवन, कुम्हार छात्रावास के सामने, प्लॉट नं. 2, नेहरु पार्क, जोधपुर-342003(राज.) के पते पर प्रेषित करें। उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

लक्ष्मणगढ़ अभियन्ता कॉलेज के हॉस्टल में बहुत सी लड़कियाँ रहती थीं। उसमें एक लड़की अति सुन्दर और समृद्ध परिवार की थी। वह सभी लड़कियों से अलग रहती थी। किसी से भी सीधे मुँह बात नहीं करती थी। वह किसी से मेलजोल नहीं रखती थी। सभी लड़कियाँ तीन-तीन पलंग वाले कमरे में रहती थी। श्रेया एक पलंग वाले कमरे में अकेली रहती थी। श्रेया घमण्डी स्वभाव की लड़की थी।

श्रेया के घर से फल, मेवा और मिठाइयाँ आती रहती थीं। खाने के बाद जो बच जाती उसे ताजी की ताजी फेंक देती थी। अपनी सहपाठिनियों में नहीं बाँटती थी। कोई लड़की सामने मिल जाती तो उससे आँख चुराकर निकल जाती थी।

कॉलेज में सभी लड़कियों को प्रोजेक्ट तैयार करने के लिए कहा गया। लड़कियाँ वार्डन से पूछकर प्रोजेक्ट का सामान खरीदने गई। श्रेया भी अकेली ही सामान खरीदने गई। तीसरे दिन प्रोजेक्ट जमा करवाना था। जमा कराने की पहली रात को प्रोजेक्ट पूरा करके लगभग सभी लड़कियाँ सो गई। उनके साथ 'मिली' नाम की लड़की थी। वह रंग-रूप में साधारण ही थी। निर्धन परिवार की होने के कारण कपड़े भी ठीक-ठीक ही पहनती थी। लेकिन कुशाग्र बुद्धि वाली थी और कलाकार थी। प्रोजेक्ट बनाते-बनाते थक गई। प्रोजेक्ट के नीचे नाम अंकित नहीं किया और सो गई। श्रेया ने प्रोजेक्ट नहीं बनाया। उसको अकेली को बनाना समझ में नहीं आया। अब वह असमंजस में पड़ गई। हाथ मलती रही। पलंग से उठी और पास वाले कमरे में गई। तीनों लड़कियाँ सो रही थी। दो लड़कियों के प्रोजेक्ट में उनमे नाम लिखे हुए

थे, मिली के प्रोजेक्ट में नाम नहीं लिखा था। प्रोजेक्ट अति सुन्दर बना हुआ है, नाम भी लिखा हुआ नहीं है, ऐसा सोचकर श्रेया ने धीरे से प्रोजेक्ट उठाया और अपने कमरे में जाकर अपना नाम लिख दिया। मन ही मन बहुत खुश हुई कि प्रोजेक्ट समय पर जमा हो जाएगा। सवेरे सभी लड़कियाँ उठीं, प्रोजेक्ट जमा करवाने की तैयारी में लग गई। मिली उठी, उसकी टेबल पर प्रोजेक्ट नहीं था। सब लड़कियों से पूछा गया कि मेरा प्रोजेक्ट किसी ने देखने के लिया है तो मुझे लौटा दो। प्रोजेक्ट नहीं मिला। मिली डरती-डरती श्रेया के कमरे में पहुँची उसने कहा- श्रेया तुमने मेरा प्रोजेक्ट देखने के लिया है तो लौटा दो। श्रेया उस पर ऐसी बरसी कि- 'तुमने मुझे क्या समझा? क्या मैं चोर हूँ, तूने मेरे कमरे में आने का साहस कैसे किया? निकल जा यहाँ से, नहीं तो धक्के मार निकाल दूँगी।' जाते समय मिली की दृष्टि प्रोजेक्ट पर पड़ गई और मिली ने कहा- 'यह प्रोजेक्ट मेरा है, मैंने इसको बनाने में बहुत परिश्रम किया है।' श्रेया ने कहा- 'नीच कहीं कि भागजा यहाँ से।' बेचारी मिली मुँह लटकाए, दुःखी होकर अपने कमरे में आकर रोने लगी कि मैंने अपनी औकात से ज्यादा खर्च किया है मेरा अथक परिश्रम व्यर्थ गया। आज ही तो जमा करवाना है, पुनः बनाने के लिए न तो सामान है, न ही समय बचा है।

प्रोजेक्ट जमा होने लगे। सूची में देखा तो मिली का प्रोजेक्ट नहीं आया है। निरीक्षक ने मिली को बुलाया और कहा-'तुम्हारा प्रोजेक्ट नहीं आया।' मिली ने कहा-'मैंने प्रोजेक्ट बनाया था लेकिन मेरे कमरे से गायब हो गया।' निरीक्षक ने कहा- 'तुम झूठ बोलती हो।' मिली फूट-फूटकर रोने लगी। सभी लड़कियों ने मिलकर कहा-'इसने रातों-रात बनाया था।' लेकिन निरीक्षक ने उन पर विश्वास नहीं किया। प्रोजेक्ट का परिणाम घोषित हुआ, उसमें श्रेया प्रथम रही। अब तो श्रेया फूली न समाई।

गर्मी के दिन थे। अति गर्मी के कारण सभी परेशान थे। काले-काले बादल आए। मूसलाधार वर्षा होने लगी। हॉस्टल की लड़कियाँ नहाने के लिए परिसर में आ गईं। श्रेया भी यह आनन्द उठाने के लिए आ गई। परिसर के एक ओर गंदा नाला था उसकी बाउंडरी वॉल टूटी हुई थी। परिसर में पानी भर जाने के कारण श्रेया को नाला नहीं दिखाई दिया। कूदती-फाँदती नाले में जा गिरी। लड़कियाँ मस्ती में नाच रही थी। मिली की नज़र अचानक नाले की ओर गई, देखा- श्रेया नाले में बह रही है। वह वहाँ से भागी और अपनी चुन्नी श्रेया के पास डाली, कहा- इसे पकड़ ले और स्वयं भी कूद पड़ी। मिली तैरना जानती थी। नाले के पास में पीपल का पेड़ था उसके पास पहुँचकर एक मोटी डाली पकड़ ली। एक हाथ से डाली पकड़ी और दूसरे हाथ से श्रेया को कस कर पकड़ लिया। सोचने लगी बाहर कैसे निकले, इतने में सभी लड़कियाँ वहाँ पहुँच गई। भयानक स्थिति को देखा। तुरन्त कॉलेज कार्यालय में सूचना दी गई। झट से कर्मचारी आए, तब तक मिली पानी के थपेड़े झेलती रही थी। दोनों को निकाला गया। श्रेया के कानों और आँखों में गंदा पानी चला गया, उसको अत्यन्त पीड़ा हो रही थी। उसे कमरे

में पहुँचाया गया। मिली ने उसे नहलाया-धुलाया और सुलाया। डॉक्टर को बुलवाया गया। परीक्षण किया गया। श्रेया के स्वास्थ्य में कोई विशेष हानि नहीं पहुँची, पर उसे गहरा सदमा पहुँचा। सभी लड़कियाँ अपने-अपने कमरे में जाते समय मिली की बहादुरी की प्रशंसा करने लगीं। मिली श्रेया की सेवा में लग गई। मिली ने श्रेया को गर्म-गर्म चाय पिलाई। श्रेया के घर वालों को सूचना दी गई। मिली पानी के थपेड़े और श्रेया को कसकर पकड़ने से बहुत थक गई थी। पेट में भूख के मारे चूहे दौड़ रहे थे। मिली ने श्रेया के हाथ-पैर दबाए और चिकित्सा भी बराबर दे रही थी। उसका मन बहलाने के लिए कहानी, किस्से कहे, गाने भी सुनाए। श्रेया में बोलने की शक्ति न थी फिर भी उसने कहा- "तुम कितनी अच्छी हो।" कॉलेज के सभी लोग श्रेया को देखने आए।

तीन घण्टे पश्चात् श्रेया के माता-पिता आए और देखा, उसकी सहपाठिन उसको सहला रही है। मिली ने श्रेया के माता-पिता के चरण-स्पर्श किए। दवाइयों से अवगत कराया। श्रेया को उसके माता-पिता अपने घर ले जाने के लिए रवाना हुए तब तक मिली उनकी सहायता करती रही। उसके जाने के बाद स्वयं अपने कमरे में गई।

श्रेया का स्वास्थ्य सुधरा, तब उसने अपनी सारी बात माता-पिता को बतलाई। उसने बताया कि मिली नहीं होती तो मैं आज इस संसार में नहीं होती।

श्रेया के पिता ने कहा- "मैं लक्ष्मणगढ़ कॉलेज के सभी छात्र-छात्राओं, प्राध्यापकों और कर्मचारियों को भोजन के लिए आमन्त्रित करूँगा।"

श्रेया स्वस्थ होकर वापस कॉलेज आ गई। श्रेया द्वारा कार्यालय में सूचना दी गई कि आज का खाना मेरे परिवार की ओर से होगा। जिसमें कॉलेज के समस्त सदस्य आमंत्रित हैं, उनसे अनुरोध है कि समय पर उपस्थित हों।

संध्या के भोजन में सभी लोग ठीक समय पर इकट्ठे हो गए। श्रेया ने मंच पर जाकर उद्बोधित किया-"आदरणीय आचार्यजी, प्राध्यापकजी, कर्मचारीगण एवं प्रिय विद्यार्थीगण को नमस्कार। इसके साथ ही मिली को मंच पर बुलाया गया। मिली सकपका गई कि मुझे ही मंच पर क्यों बुलाया गया है? मिली सहमी-सहमी मंच पर गई। तब श्रेया ने कहा- 'आज मैं आपके सामने जीवित खड़ी हूँ, बोल रही हूँ। यह नया जीवन मुझे मिली ने दिया है। 'मिली' मिली यानी भगवान मिले। प्रभु ने ऐसी पवित्र आत्मा से मिलाया जिससे मैं मानवता का साक्षात्कार कर रही हूँ। इसके पुनीत विचारों ने मेरे हृदय को परिवर्तित कर दिया। अहं का जो पर्दा मेरी आँखों पर छाया हुआ था वह हमेशा के लिए हट गया।" प्रोजेक्ट प्रतियोगिता में मैंने प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया वह इसका ही था। मैंने प्रोजेक्ट चुराकर घिनौना व्यवहार किया। मुझे हार्दिक पीड़ा हो रही है, जिसका वर्णन करना कठिन है। नाज इस बात का है कि मेरी जैसी तुच्छ एवं संकीर्ण विचार वाली लड़की को इसने अपने जीवन को खतरे में डाल कर मुझे

जीवनदान दिया। धन्यवाद है इसके माता-पिता को, जिन्होंने ऐसी सुसंस्कारित सुपुत्री को जन्म दिया। यह मनुज नहीं मनुज अवतारी है। श्रेया के द्वारा मिली को गले लगाते ही करतल ध्वनि से भवन गूँज उठा।

प्रश्न-

1. मिली के जीवन की विशेषताएँ लिखिए।
2. श्रेया के घर से आई मिठाइयाँ आदि खाद्य सामग्री वह अकेली क्यों खाती थी?
3. मिली का प्रोजेक्ट श्रेया ने चुराया, उलटा मिली को डांटा। इस हरकत का सटीक मुहावरा लिखिए।
4. मिली ने श्रेया को कैसे जीवन-दान दिया?
5. श्रेया के जीवन में कैसे परिवर्तन आया?
6. अच्छे से अच्छा व्यवहार 'व्यापार' और बुरे से भी अच्छा व्यवहार 'सुसंस्कार'- उक्ति को चरितार्थ करने वाली कोई घटना या कथा लिखिए?

-ई-23, नेहरुपार्क, सरदारपुरा, जोधपुर-342003 (राज.)

बाल-स्तम्भ [जुलाई-2016] का परिणाम

जिनवाणी के जुलाई-2016 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'अंधानुकरण से बचें' के प्रश्नों के उत्तर 15 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए। पूर्णांक30 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	नमिता जैन-मसूदा, अजमेर (राज.)	27
द्वितीय पुरस्कार-300/-	वैभव जैन-हिण्डौनसिटी, करौली (राज.)	25.5
तृतीय पुरस्कार- 200/-	प्रांजल जैन-उज्जैन (मध्यप्रदेश)	24.5
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	निकिता जैन-मसूदा, अजमेर (राज.)	24
	अरिन चोरडिया-जयपुर (राज.)	22.5
	कोमल बैद-भीनासर, बीकानेर (राज.)	22
	अमीषा कोठारी-लोहाखान-अजमेर (राज.)	22
	शोभा राजेन्द्रजी छाजेड़-भुसावल (महा.)	21.5

रचनाएँ आमन्त्रित

जिनवाणी के लिए मौलिक एवं स्तरीय रचनाओं/आलेखों का सदैव स्वागत है। आपकी रचनाओं से ही यह पत्रिका दीप्तिमान हो रही है। इस वर्ष भी कतिपय श्रेष्ठ रचनाओं को पुरस्कृत किया जाएगा। **-सम्पादक**

<u>कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं</u>

नूतन साहित्य

डॉ. श्वेता जैन

समय और समयसार- डॉ. दिलीप धींग, ***प्रकाशक***- रिसर्च फाउण्डेशन फॉर जैनोलॉजी, सुगन हाउस, 18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट, साहूकार पेट, चेन्नई-600079, फोन नं. 044-25298082, 25296557, ***पृष्ठ***-362, ***मूल्य***- 500 रुपये मात्र, (40 प्रतिशत छूट पर उपलब्ध) सन् 2016

दिगम्बर परम्परा का आगमतुल्य ग्रंथ समयसार अध्यात्म ग्रंथों की श्रेणी में कनिष्ठिकाधिष्ठित ग्रंथ है। इसमें 'समय' शब्द आत्मा के लिए प्रयुक्त हुआ है तथा निश्चय व व्यवहार नय से आत्म-स्वरूप का विवेचन किया गया है। आत्म केन्द्रित यह ग्रंथ आत्मशुद्धि के लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग हो सकता है। विद्वान् लेखक ने यह पुस्तक इसी समयसार ग्रन्थ एवं इसके कर्त्ता कुन्दकुन्द को आधार बनाकर विभिन्न विषयों का विवेचन करते हुए लिखी है। डॉ. धींग लिखते हैं कि अपने आप पर भरोसा करना आत्म-पुरुषार्थ है। पुरुषार्थ जगाने के लिए निश्चय नय का दृष्टिकोण बहुत उपयोगी है। जो अपने आप पर विश्वास नहीं करता है, उसके लिए देव, गुरु और धर्म का विश्वास भी फलदायी नहीं बन पाता है। धर्म और तत्त्व को समझने के लिए बुद्धि की तीक्ष्णता और प्रज्ञा का जागरण आवश्यक है। समयसार में आत्मा और आत्मस्वरूप को जानने के लिए प्रज्ञा का सहारा लेने का निर्देश करते हुए कहा गया है-

कह सो घिप्पदि अप्पा पण्णाए सो दु घिप्पदे अप्पा।
जह पण्णाइ विभत्तो तह पण्णाएव घेत्तव्वो।।

आत्मा को प्रज्ञा से ग्रहण करना चाहिए। क्योंकि प्रज्ञा से ही देह और आत्मा के भेद को जाना जाता है और प्रज्ञा से ही आत्मा को ग्रहण किया जाता है। इस सम्बन्ध में उत्तराध्ययन सूत्र में कहा गया है- 'पण्णा समिक्खाए धम्मं तत्तं तत्तविणिच्छयं'। अर्थात् धर्म, तत्त्व तथा तत्त्व का निश्चय प्रज्ञा से होता है, इसलिए प्रज्ञा से इनकी समीक्षा करनी चाहिए तथा प्रज्ञा से ही जानकर ग्रहण करना चाहिए। बुद्धि की पहुँच शरीर और पुद्गलों तक ही होती है और प्रज्ञा की पहुँच आत्मा और आत्मानुभव तक होती है। इसलिए प्रज्ञा से धर्म और धर्म-तत्त्व को जानने का उपदेश दिया गया है। इसी तरह के विचारों से युक्त यह पुस्तक सभी के लिए उपादेय है।

यह पुस्तक पाँच अध्यायों एवं प्रत्येक अध्याय पुनः चार परिच्छेदों में विभक्त है। **'आचार्य कुन्दकुन्द : व्यक्तित्व और कृतित्व'** नामक प्रथम अध्याय में भगवान महावीर की आचार्य परम्परा और कुन्दकुन्द, आचार्य कुन्दकुन्द का जीवन परिचय, समय और साहित्य साधना तथा **'समयसार की विषय वस्तु का मूल्यांकन'** नामक द्वितीय अध्याय में 'समय और समयसार', 'आत्मा और शुद्धात्मा', 'भेदविज्ञान', 'सम्यग्दर्शन' विषयक विवेचन है। **'नव पदार्थ विवेचन'** नामक तृतीय अध्याय में नयदृष्टि और जीव तत्त्व, अजीव और पुण्यपाप, आस्रव-संवर तत्त्व, निर्जरा, बंध और मोक्ष तत्त्व; **'कर्ता और कर्म की अवधारणा'** नामक चतुर्थ अध्याय में कर्ता और कर्म, ज्ञानी और अज्ञानी, वस्तु स्वातंत्र्य का सिद्धान्त, समयसार में जीवन दृष्टि तथा **'समयसार का आध्यात्मिक पक्ष'** में अध्यात्म का परिचय, आध्यात्मिक विकास और गुणस्थान, मूढताओं से परे अध्यात्म, अध्यात्म का सार्वभौमिक स्वरूप विषयक लेखन हुआ है।

हेमचन्द्राचार्य और कुमारपाल- आचार्य श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा., ***प्रकाशक***- दिव्य संदेश प्रकाशन, द्वारा-सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेम्बर्स, 507-509, जे.एस.एस.रोड़, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (पूर्व), मुम्बई-400002 (महा.), फोन नं. 022-22034529, मोबाइल नं. 098920-69330, ***पृष्ठ***-109+16, ***मूल्य***- 60 रुपये, सन् 2016

उपर्युक्त पुस्तक में कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र और उनसे प्रतिबोधित राजा सिद्धराज एवं कुमारपाल के जीवन वृत्तान्तों की विभिन्न शीर्षकों के साथ रोचक प्रस्तुति की गई है। राजा सिद्धराज के निवेदन पर आचार्य श्री ने व्याकरण की रचना की, जो 'सिद्धहेमशब्दानुशासन' नाम से प्रसिद्ध हुई तथा राजा कुमारपाल के अनुनय पर योगशास्त्र की रचना की। श्रमण की मर्यादा को भी यहाँ रेखांकित किया गया है। सिद्धराज एवं कुमारपाल के सम्बन्ध में इस पुस्तक से अनेक घटनाक्रमों का बोध होता है तथा इन पर हेमचन्द्राचार्य का प्रभाव भी ज्ञात होता है। राजा कुमारपाल विरचित आत्मनिन्दा-द्वात्रिंशिका के श्लोकों को अर्थ सहित प्रस्तुत किया गया है। अंत में 'तिलक के लिए बलिदान' शीर्षक से एक नाटक भी योजित किया गया है, जो धर्म पर बलिदान की कथा है। ऐतिहासिक दस्तावेज को प्रस्तुत करने वाला यह ग्रन्थ जैन इतिहास को जानने में सहयोगी है।

समुत्थान सूत्र- ***सम्पादक***- श्री त्रिलोकचन्द जैन, ***प्रकाशक***- आगम नवनीत प्रकाशन समिति, राजकोट, प्राप्ति स्थान- श्री त्रिलोकचन्द जी जैन, सी-21, इशिता टावर,

सामवेद हॉस्पिटल के पीछे, नवरंगपुरा, अहमदाबाद-380009, मोबाइल नं. 097140-02008, 098982-39961, **पृष्ठ**-287, **मूल्य**- 100 रुपये, सन् 2016

समुत्थान सूत्र का उल्लेख नन्दीसूत्र में कालिक सूत्र के रूप में हुआ है तथा व्यवहारसूत्र के दसवें उद्देशक में तेरह वर्ष की दीक्षा के पश्चात् श्रमण के लिए इसके अध्ययन का निर्देश प्राप्त होता है। विधिमार्ग प्रपा, विचारसार ग्रंथ में भी यह परिगणित है। पूर्व में प्रकाशित गुजराती अनुवाद के पश्चात् हिन्दी अनुवाद का यह स्तुत्य प्रयास सम्पादक द्वारा किया गया है। इसमें 8 उद्देशक हैं। प्रथम उद्देशक में वंदना का फल; दूसरे उद्देशक में चार प्रकार के आचार्य तथा प्रयोजन; तृतीय उद्देशक में दीक्षा-विधि, मुँहपत्ती, रजोहरण, अप्रमाद, श्रुतज्ञान, दीक्षा के अयोग्य आदि; चतुर्थ उद्देशक में समाचारी, पंचम उद्देशक में 6 आवश्यक विधि सहित पाँच व छ प्रकार के प्रतिक्रमण, उद्देशक 6 में समकित व चारित्र के अतिचार, मुँहपत्ती के पाँच अतिचार, 10 महाप्रत्याख्यान, नमस्कार मंत्र के पाँच प्रकार व फल, उद्देशक 7 में पाँचवें आरे में जिनशासन, कल्प्य-अकल्प्य आदि तथा अन्तिम उद्देशक में अनशन विधि विषयक विचार हैं। अंत में पाँच परिशिष्ट भी योजित हैं।

नोट:- यह पुस्तक स्वाध्यायियों एवं पुस्तकालयों द्वारा एक पत्र उपर्युक्त निर्दिष्ट पते पर भेजकर निःशुल्क मंगवाई जा सकती है।

जैन आगमों की प्रमुख वाचनाएँ

डॉ. दिलीप धींग

वर्तमान में उपलब्ध आगम-साहित्य आचार्य देवर्द्धि क्षमाश्रमण के सान्निध्य में वल्लभी में हुई वाचना के अन्तर्गत लिपिबद्ध किया गया था।

क्रम	वाचना-प्रमुख/अध्यक्ष	स्थान	वीर निर्माण संवत्	ईस्वी सन्
प्रथम	आचार्य स्थूलिभद्र	पाटलिपुत्र	160	367 ई.पू.
द्वितीय	सम्राट् खारवेल (आचार्य बलिस्सह और आचार्य सुस्थित की निश्रा)	कुमारगिरी	327-329	200-198 ई.पू.
तृतीय	आचार्य स्कन्दिल आचार्य नागार्जुन	मथुरा वल्लभी	827-840	300-313
चतुर्थ	आचार्य देवर्द्धि क्षमाश्रमण	वल्लभी	980	453

-निदेशक, अंतरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, सुगन हाउस, 18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600079

सांवत्सरिक क्षमायाचना

छद्मस्थता में त्रुटि स्वाभाविक है। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व की आराधना करते हुए हमने भाद्रपद शुक्ला पंचमी, मंगलवार, 06 सितम्बर 2016 को सांवत्सरिक प्रतिक्रमण कर सर्व जीवयोनि से विशुद्ध हृदय से क्षमायाचना की है। हम पूज्य आचार्यप्रवर-उपाध्यायप्रवर प्रभृति संत-सतीवृन्द से अविनय-आशातना के लिए करबद्ध क्षमाप्रार्थी हैं, वहीं संघ-समाज के सभी भाई-बहिनों से हार्दिक क्षमायाचना करते हैं। विगत तीन वर्षों के हमारे कार्यकाल में हम सब से और हमारे साथियों के किसी वचन-व्यवहार व कार्यप्रणाली से किसी भी संघ-सदस्य की भावनाओं को ठेस पहुँची हो, इसके लिए हम अन्तःकरण से क्षमायाचना करते हैं।

क्षमाप्रार्थी

पी.एस. सुराणा अध्यक्ष	आनंद चौपड़ा कार्याध्यक्ष	अशोक कवाड़ कार्याध्यक्ष	पूरणराज अबानी महामंत्री

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

पारसचन्द हीरावत अध्यक्ष	पदमचन्द कोठारी कार्याध्यक्ष	प्रमोद महनोत कार्याध्यक्ष	विनयचन्द डागा मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

पूर्णिमा लोढ़ा अध्यक्ष	मीना गोलेच्छा कार्याध्यक्ष	प्रमिला दुग्गड़ कार्याध्यक्ष	बीना मेहता महासचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर

राजकुमार गोलेच्छा अध्यक्ष	राजेन्द्र लुंकड़ कार्याध्यक्ष	लोकेश कुम्भट कार्याध्यक्ष	मनीष लोढा महासचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर

ओमप्रकाश बांठिया संयोजक	मंगला चोरडिया सह-संयोजक	गोपालराज अबानी सचिव

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर

अशोक चोरडिया संयोजक	अशोक बाफना सह संयोजक	नवरतन गिड़िया सचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

हर्षवर्द्धन ललवाणी संयोजक	विरेन्द्र कांकरिया सह संयोजक	राजेश भंडारी सचिव

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर

एवं

समस्त सदस्यगण, संचालन समिति एवं कार्यकारिणी

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ व सहयोगी संस्थाएँ

समाचार विविधा

पूज्य आचार्यप्रवर का निमाज-चातुर्मास बना आकर्षण का केन्द्र

तीर्थंकर आराधना एवं बीस बोलों की साधना

तीन मासक्षपण तप पूर्ण

दर्शनार्थियों का निरन्तर आवागमन

26 से 31 जुलाई तक स्वाध्याय शिविर

आगमज्ञ, प्रवचन प्रभाकर, ज्ञान सुधाकर, गुण रत्नाकर, जिनशासन गौरव, व्यसन मुक्ति के प्रबल प्रेरक, **परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** प्रभृति संतवृन्द ठाणा 6 एवं **व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा.** आदि ठाणा 4 पूज्य आचार्य हस्ती के अविस्मरणीय संथारे की भूमि निमाज में चातुर्मास हेतु विराज रहे हैं। निमाजवासी बैंगलोर आदि स्थानों से अपने ग्राम निमाज में आकर धर्मश्रवण एवं धर्माराधना का लाभ ले रहे हैं।

प्रातःकालीन प्रार्थना, प्रवचन, आगम-वाचनी, तत्त्वचर्चा, प्रतिक्रमण, संवर, उपवास, पौषध आदि के कार्यक्रम नियमित रूप से चल रहे हैं। दोपहर वाचनी उत्तराध्ययन सूत्र के पश्चात् नन्दीसूत्र की चल रही है। सायंकालीन प्रतिक्रमण भाई/बहिनों द्वारा अपने-अपने स्थानों पर हो रहे हैं। चातुर्मास प्रारम्भ से तेला, उपवास, एकासन, बीयासन, आयंबिल व दया की लड़ी निरन्तर चल रही है।

महत्त्वपूर्ण पर्व व महापुरुषों की तिथियों पर हर वर्ष पचरंगी का अयोजन होता है। 30 जुलाई को पचरंगी का पहला दिवस था। इस अवसर पर फरमाया कि **दया का वास्तविक स्वरूप सात प्रहर तक संवर में रहना बताया है। मात्र ग्यारह सामायिक कर दया का स्वरूप नहीं बिगाड़ें।** स्वाध्यायियों को सम्बोधन कर पूज्य आचार्य भगवन्त ने फरमाया कि **हर स्वाध्यायी एक सामायिक धर्मस्थान में स्वाध्याय के साथ करे।** आपकी स्वाध्याय की रूपरेखा नियमित प्रवाहमान रहनी चाहिये।

30 जुलाई को सुमेरगंज मण्डी संघ पूज्य गुरुदेव की सेवा में दर्शनार्थ उपस्थित हुआ। 31 जुलाई को स्वाध्यायियों के पंच दिवसीय शिविर के समापन व श्री सागरमलजी म.सा.

के समाधिमरण के साथ 59 दिवसीय अद्वितीय संथारे की स्मृति का पावन प्रसंग था। **श्रद्धेय श्री यशवंतमुनिजी म.सा.** ने फरमाया कि तीसरा मनोरथ साधु व श्रावकों का समान है। जिन्होंने साधना कर आनन्दपूर्वक जीवन को जीया है वे सलेखना-संथारा द्वारा जीवन का सार निकाल सकते हैं। **व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा.** ने फरमाया कि संसार में सभी वस्तुएँ विनाशी हैं पर धर्म अविनाशी है। महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने फरमाया कि- विद्यार्थी के वर्ष भर के अध्ययन का मूल्यांकन परीक्षा का परिणाम आने पर, व्यापारी के आय-व्यय-लाभ का मूल्यांकन 31 मार्च को बैलेंस सीट आने पर होता है। इसी तरह जीवन का मूल्यांकन अन्तिम समय में जागृत अवस्था में समाधिमरण के भाव होने पर होता है। समाधिमरण से जीवन का सार सफल हो जाता है।

पूज्य आचार्य भगवन्त ने फरमाया कि तीर्थंकर भगवान महावीर की आदेय अनमोल वाणी में जीवन-निर्माण का एक स्वर्णिम अनमोल सूत्र है- निरन्तर चलने वाला एवं नियमित रहने वाला, सिद्धत्व को प्राप्त करता है। रस्सी पर पत्थर पड़े तो वह टूट जाती है, पर वही डोरी पत्थर पर नियमित-निरन्तर चले तो वह पत्थर घिस जाता है। आज प्रवचन सभा में ये कुसियाँ क्यों बढ़ रही है, क्योंकि आप मेहनत नहीं कर रहे हैं। कंचनबाईजी डूंगरवाल वजन 27 किलो है। 17 वर्ष से एकान्तर तप व 108 बार सविधि वंदना कर रही है। श्री सौभाग्यमलजी, रामदयालजी की अवस्था 85 के लगभग है, रोजाना 108 बार वंदना करने का नियम है। कई सशक्त हैं फिर भी खड़े-खड़े वंदना कर रहे हैं। तप-त्याग, नियम का उनके जीवन में कोई स्थान नहीं, इस कारण वजन बढ़ रहा है। संवत् 2029 में पोरवाल-पल्लीवाल क्षेत्र में गया था। उस समय की आँखों देखी बात कह रहा हूँ- रात्रि का चौका बंद रहता था, बच्चे भी रात्रि में नहीं खाते थे। अभ्यास करें, सब संभव है। श्री सागरमलजी म.सा. के संथारा दिवस पर प्रेरक प्रवचन हुए।

गोटन संघ ने 31 जुलाई को चरण सन्निधि का लाभ लिया। 01 अगस्त को महासती श्री छोगाजी म.सा. के जीवनवृत्तों पर प्रकाश डाला गया। 02 अगस्त को पूज्य आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. का 20 वां पुण्यदिवस, 03 अगस्त को आचार्यप्रवर श्री आनन्दऋषिजी म.सा. का जन्मदिवस तप-त्याग-व्रत प्रत्याख्यान के साथ भाई व बहिनों की पृथक्-पृथक् पचरंगी के साथ मनाया गया। कुशतला से श्री रतनलालजी जैन उनके मातुश्री श्रीमती कल्याणीदेवी जी के स्वर्गवास पर परिवारजनों के साथ मांगलिक श्रवणार्थ एवं सेवानिवृत्त एस.पी. श्री विजेन्द्रजी झाला-जयपुर तथा बैंगलोर संघ के पदाधिकारीगण ने पूज्य आचार्य भगवन्त की सेवा-सन्निधि का लाभ लिया। महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. के 7 दिवसीय तपस्या का स्वास्थ्य समाधि के साथ पारणा हुआ। 05

अगस्त को निमाज ठिकाना के ठाकुर श्री अमरसिंहजी ने सन्तों के दर्शन पाकर, चातुर्मास फरमाने की कृपा पर कृतज्ञता के भाव निवेदन किये। 07 अगस्त को बिलाड़ा, रणसीगाँव संघ पूज्य गुरु भगवन्त की चरण सन्निधि में दर्शन-वन्दन की भावना से उपस्थित हुआ। प्रतापनगर जयपुर विराजित नवदीक्षिता महासती श्री विचित्राजी म.सा. के दीक्षित होने के पश्चात् बीच-बीच में कई बार संथारे के लिये निवेदन आया। किन्तु जब 08 अगस्त को सायं समाचार आये, तब भविष्य द्रष्टा पूज्यश्री ने संथारे के लिये स्वीकृति फरमाई एवं पूज्यप्रवर की आज्ञा से सायं 4.15 बजे संथारे के प्रत्याख्यान करवाये गये। हलुकर्मी चारित्रात्मा का 09 अगस्त को सायं 6.12 पर संथारा सीझ गया। 10 अगस्त को पार्थिव शरीर पंचतत्त्व में विलीन होने पर दोपहर 2.15 बजे से गुणानुवाद सभा हुई। श्रद्धेय श्री यशवंतमुनिजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा, श्रीमती बीनाजी मेहता, राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष डॉ. अशोकजी कवाड़, श्री निर्मलजी बम्ब-संघमंत्री, श्री जयसिंहजी छाजेड़, श्री उमगराजजी कांकरिया, श्री सौभाग्यमलजी जैन-कुश्तला, महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमनिजी म.सा., परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. ने साधक आत्मा के संयम ग्रहण के साथ तीसरा मनोरथ फलित होने की उत्कृष्ट अभिलाषा की अनुमोदना करते हुए संयम-जीवन के महत्त्व पर एवं तृतीय मनोरथ पर प्रकाश डाला। गुणानुवाद के अनन्तर चार-चार लोगस्स का ध्यान करवाया गया।

12 अगस्त को 24 तीर्थंकरों की आराधना, 20 बोलों की साधना कार्यक्रम का समापन था। विगत 24 दिवसों में श्रद्धेय **श्री विनम्रमुनिजी म.सा.** प्रार्थना के साथ तीर्थंकर से सम्बद्ध स्तोत्र एवं भजन के साथ मैत्री भावना प्रशस्त हो, इस विषयक ध्यान करवाते। महासती **श्री चारित्रलताजी म.सा.** आदि सभी सतियाँ समय-समय पर आराधना से सम्बन्धित गतिविधियों को करवाने का बराबर ध्यान रखती। आराधना के 24 दिनों तक प्रातः 4.30 से रात्रि 9.30 तक के मध्य आराधना में जो अनुभव रहे, उस सम्बन्ध में श्रीमती अकलकंवरजी मोदी, श्रीमती मोहिनीदेवीजी जैन, श्री भागचन्दजी मेहता, श्री मोहनलालजी देशरला, श्री सूरजमलजी भण्डारी, श्री निर्मलकुमारजी बम्ब ने विचार रखे। प्रवचन के समय चले इस कार्यक्रम का सुन्दर संचालन श्री तरूणजी बोहरा ने प्रभावी शैली में किया। श्रीमती बीनाजी मेहता ने आराधना विषयक रिपोर्ट प्रस्तुत की। राष्ट्रीय संघाध्यक्ष श्री पी. शिखरमलजी सुराणा ने आराधना विषयक प्रवृत्ति पर दक्षिण प्रवास के समय रहे उत्साह का उल्लेख किया।

पूज्य **आचार्य भगवन्त** ने फरमाया कि- कुछ साधना-आराधना या प्रत्याख्यानों का कहीं आगम में उल्लेख नहीं है, फिर भी वे प्रचलन में आ गये हैं। पचरंगी, सतरंगी, नवरंगी

जैसे चल रही है, उसी तरह इस आराधना को 24 रंगी भी कहा जा सकता है। बीयासन, खाता-पीता पौषध, 11 सामायिक वाली दया ये सब आज प्रायः गली निकालकर चल रहे हैं। हाँ, यह जरूर है कि कम से कम इन आराधनाओं के समय संवर साधना होती है। अतः पापों से छुटकारा तो रहता ही है। अतः जिस रूप में संवर करनी हो, वो अच्छी ही है।

14 अगस्त को कोटा से वृहद् संख्या में भाई-बहिनों का संघ, सूरत संघ तथा नवदीक्षिता महासती श्री विचित्राजी का सांसारिक परिवार उनके समाधिमरण पर पूज्य आचार्य भगवन्त के पावन पादयुग्मों में दर्शन व मांगलिक श्रवणार्थ आया।

16 अगस्त को वीर पिता श्री कुशलराजजी कोठारी की पुत्रवधू वीर भ्राता श्री महावीरप्रसादजी कोठारी की धर्मपत्नी **श्रीमती प्रियंकाजी कोठारी का मासक्षपण तप** पूर्ण हुआ। आप श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा. की सांसारिक भाभीजी हैं। श्रद्धेय संत मुनिराजों, महासतीजी म.सा. ने तप की अनुमोदना पर प्रवचन फरमाया- पूज्य आचार्य भगवन्त ने संक्षिप्त में फरमाया कि प्रियंका जी ने पुरुषार्थ कर मासक्षपण किया। सुश्रावक श्री कनकमलजी कोठारी ने अपनी संतान को सुसंस्कारों की सम्पत्ति प्रदान की। उसी का सुपरिणाम रहा कि उन्हीं के घर से जितेन्द्रमुनिजी संयम के मार्ग पर आगे बढ़े। तप की अनुमोदना में यथाशक्य जितना त्याग कर सकते हो करने का लक्ष्य रख पापों को सीमित किया जा सकता है। 24 अगस्त को ब्यावर से श्री विमलचन्दजी, राजेन्द्रकुमारजी, सुमितकुमारजी सुराणा आदि समस्त परिवारजन श्रीमान् शांतिलालजी सुराणा के स्वर्गवास पर मांगलिक श्रवणार्थ पधारे। 25 अगस्त को किशनगढ़ संघ महासतियों के चातुर्मास विषयक उपकार पर कृतज्ञता प्रकट करने आया। 28 अगस्त को संघ सेवा में समर्पित रहे श्रावकरत्न स्वर्गीय श्री गणेशमलजी भण्डारी की बहिन व भानजी के मासक्षपण का प्रसंग था। **श्रीमती मदनकंवरजी धर्मसहायिका श्री हुक्मीचन्दजी डोसी** 'चावण्डिया वाले'-बैंगलोर व **श्रीमती निर्मलाबाईजी धर्मसहायिका श्री पदमचन्दजी धोका** 'निमाजवाले' रामनगर के पूज्य आचार्य भगवन्त के पावन मुखारविन्द से **मासक्षपण तप** के प्रत्याख्यान हुए। तप अनुमोदनार्थ अनेक क्षेत्रों से श्रद्धालु भाई-बहिनों का पधारना हुआ। श्रद्धेय श्री यशवंतमुनिजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने तप की महिमा का संगान फरमाया कि तपस्विनी बहिनों के तप की अनुमोदना करके कर्म-निर्जरा करें। दोनों तपस्विनियों का शरीर पर्याप्त सक्षम नहीं है। गुरुदेव के कृपा प्रसाद से ही मासक्षपण तप संभव हुआ है।

पूज्य आचार्य भगवन्त ने फरमाया कि साधना करने वाले श्रद्धालु श्रावक-श्राविका गुरु के पधारने के पहले ही मानस बना लेते हैं। सुबाहुकुमार भगवान के पधारने पर निमित्त मिलने

से जग जाते हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो पहले से संकल्प कर बुलाते हैं। कुछ आने पर करते हैं। इन बहिनों ने पहले से संकल्प किया कि यदि गुरुदेव का चातुर्मास हुआ तो उग्र तपस्या करेंगे। संकल्पबल की ही करामात है- इनके शरीर की अनुकूलता नहीं है, फिर भी साहस से संकल्प आगे बढ़ाती रही। उम्र 70 से ऊपर है, फिर भी मासक्षपण किया। संकल्प बल दृढ़ हो तो अवस्था, प्रतिकूलता भी पीछे रह जाती है। तपस्या श्रद्धा से होती है, पर श्रद्धा के साथ संकल्प भी चाहिये। जिनके संकल्प नहीं बने हैं, वे बनाये। खुले न रहें। दया-संवर-पौषध में रत रहकर नौ दिवसीय आराधना रखना है। नवरंगी में पूरे पाप छोड़ें। ऐसा स्वर्णिम अवसर पाकर आप कोरे न रहें। नवरंगी में या अष्ट दिवसीय सिद्ध पद की आराधना की साधना में पंजीकरण करवाकर पर्युषण पर्वाधिराज में धर्ममय बनेंगे, ऐसी मंगल भावना है।

29 अगस्त से भाई/बहिनों की पृथक्-पृथक् नवरंगी तथा 30 अगस्त से सिद्ध पद की आराधना हुई, जिसमें उववाई सूत्र का 8 बार स्वाध्याय, 8 दिन ही एकाशना व प्रतिदिन कम से कम 8 सामायिक का संवत्सरी महापर्व तक लक्ष्य रखा गया।

पीपाड़ सिटी से तपस्या की आराधना करने वाले श्रद्धालु भाई-बहिन निमाज पधारकर पूज्य आचार्य भगवन्त के पावन श्रीमुख से प्रत्याख्यान ले रहे हैं। पीपाड़ संघ वालों की यह अंतरंग भावना संघनायक की गौरव गरिमा को महामण्डित करने वाली श्लाघनीय पद्धति है। निमाज जैन श्री संघ उत्सुकता व आत्मीय भाव से आगत दर्शनार्थी बन्धुओं की सेवा सन्निधि के लिये पलक पावड़े बिछाये अहर्निश उद्यत एवं प्रतीक्षारत है। *-जगदीश जैन*

तीर्थंकर आराधना एवं 20 बोलों की साधना

जिनशासन गौरव पूज्य आचार्यप्रवर के सान्निध्य में निमाज में 24 तीर्थंकरों की आराधना एवं 20 बोलों की साधना 19 जुलाई से 11 अगस्त 2016 तक सम्पन्न हुई। 12 अगस्त को समापन समारोह मनाया गया। इस आराधना में 70 आराधकों ने भाग लिया, किन्तु पूर्ण रूप से 55 आराधकों ने यह साधना सम्पन्न की। प्रातः 6.30 बजे से ही प्रार्थना, स्तोत्र पाठ, चौबीसी आदि स्तवन एवं एक तीर्थंकर की स्तुति के साथ सुबह का शुभारम्भ श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा. के सहयोग से होता था। शेष दिन भर की आराधना में महासती श्री चारित्रलताजी म.सा., महासती श्री भावनाजी म.सा., महासती श्री प्रीतिश्रीजी म.सा. एवं महासती श्री गरिमाश्रीजी का विशेष योगदान रहा। सभी आराधक भाई-बहनों ने उपवास, आयंबिल, नींवी, बियासना एवं प्रतिदिन संवर के साथ यह आराधना सम्पन्न की। आराधना में प्रतिदिन जो भी दोष लगता उसका प्रायश्चित्त फार्म भरवाकर प्रायश्चित्त दिया जाता था। एक घण्टा प्रतिदिन नया ज्ञान सिखाया जाता था। प्रतिदिन वंदना, चौबीस नमोत्थु

णं, चौबीस लोगस्स का जाप कराया जाता था। इस आराधना में 50 एकाशन, 45 उपवास, 25 आयंबिल, 10 नींवी एवं 1310 बीयासना हुए। इस आराधना की पूरी व्यवस्था में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की महासचिव श्रीमती बीनाजी मेहता का पूर्ण सहयोग रहा। - *निर्मलकुमार बम्ब, मंत्री*

जोधपुर में उपाध्यायप्रवर की सन्निधि में धर्माराधना निरन्तर अग्रगामी

शान्त-दान्त-गम्भीर पूज्य **उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.**, मधुर व्याख्यानी **श्री गौतममुनिजी म.सा.** आदि ठाणा 6 के सान्निध्य में दिग्विजयनगर-गुलाबनगर में सूर्योदय पूर्व प्रतिक्रमण, प्रार्थना, प्रवचन, मध्याह्न शास्त्रवाचन, सायंकालीन प्रतिक्रमण, रात्रि में संवर-पौषध के साथ धर्माराधना निरन्तर अग्रगामी है। श्रावक-श्राविकाओं में अपार उत्साह अनुमोदनीय है। तपस्या में 4 मासक्षपण, एक 18 की तपस्या व 15,11,8 की एवं तेले की झड़ी लगी हुई है। प्रत्येक रविवार सामूहिक सामायिक में श्री तरूणजी बोहरा द्वारा 'महावीर तेरे शासन के लिए' विषय पर उद्‌बोधन दिया जाता है। दोपहर में श्राविका निधि मेहता द्वारा बहनों को 'साधु जीवन जय-जय, जिन धर्म जय-जय' पर सम्बोधित किया जाता है। युवाओं को जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है।

-धनपत सेठिया, अध्यक्ष

पीपाड़ चातुर्मास की ऐसी सौरभ, महक उठा है सारा नभ

सेवाभावी श्री नन्दीषेणजी म.सा., सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप के प्रति सभी में उत्साह का वातावरण है। उववाई सूत्र, मोक्षमार्ग की 38 गाथाओं का अध्ययन, प्रतिदिन (कम से कम 10 व्यक्तियों द्वारा) 1008 वंदना, प्रतिदिन न्यूनतम पाँच रात्रिसंवर होते हैं। उपवास, आयम्बिल, एकासन, बियासन और तेले की लड़ी के साथ अब तक 2 मासक्षपण तप (18 वर्षीया सुश्री रुचिका कटारिया एवं 20 वर्षीया सुश्री पूर्वा कटारिया), 50 से अधिक अठाई तप, 75 तेले, 1 पचरंगी, 1 एकाशन सिद्धितप, 1 सिद्धितप (श्री मनीन्द्र चौधरी)कई एकाशन के मासक्षपण सम्पन्न हुए हैं तो पर्युषण के दौरान कई तपस्याएँ आगे बढ़ रही हैं। 24 घण्टे अखण्ड नवकार मंत्र का जाप चल रहा है। अंतगडदसा सूत्र और कल्प सूत्र की वाचना एवं बड़ी साधु वन्दना पर व्याख्यान श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. फरमा रहे हैं। सेवाभावी श्रद्धेय श्री नन्दीषेणमुनिजी म.सा. दशवैकालिक सूत्र पर प्रवचन कर रहे हैं। प्रार्थना-प्रवचन-धर्मचर्चा-प्रतिक्रमण-रात्रिकालीन युवाशाला आदि में अच्छी उपस्थिति

पीपाड़वासियों की उमंग को दर्शा रही है। -*नमन मेहता*

बालोतरा चातुर्मास में जन-जन का रमा मन

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में ज्ञान-ध्यान-तप की आराधना का उपक्रम उल्लसित भावों से निरन्तर बढ़ता जा रहा है। प्रतिदिन प्रातः प्रार्थना श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. द्वारा तथा युवा वर्ग को स्वाध्याय सुश्रावक श्री नवरतनजी भंसाली द्वारा कराया जा रहा है। प्रवचन के समय श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी द्वारा वीरत्थुई के आधार पर वीतरागवाणी की सुन्दर व्याख्या की जा रही है। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. द्वारा आगम रहस्यों को अपने प्रवचन में सरलतम रीति से उद्घाटित किया जा रहा है। मध्याह्न में 2-3 बजे तक वाचनी होती है तथा 3-4 बजे तक तत्त्वचर्चा की जाती है, जिसका अनेक गुणानुरागी श्रावक-श्राविका नियमित लाभ ले रहे हैं। श्रीमती इन्द्रादेवी चौपड़ा के 35 उपवास, ममता पालरेचा के 15 उपवास के साथ ही अठाई की तपस्या सम्पन्न हो गई है। रविवार को प्रातः 7-8 बजे तक ध्यान-साधना कराई जाती है। साध्वी श्री विचित्राजी म.सा. के संलेखना संथारापूर्वक देवलोकगमन पर गुणानुवाद सभा में मुनिश्री द्वारा संयम एवं समाधिमरण की सार्थकता पर प्रकाश डाला गया। यहाँ युवा दम्पती शिविर आयोजित हुआ, जिसमें 250 से अधिक दम्पतियों ने भाग लिया। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी, श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी की पावन प्रेरणा के साथ राष्ट्रीय मंत्री श्री तरूण जी बोहरा ने विशेष रूप से सम्बोधित किया। 20 अगस्त से 26 अगस्त तक श्राविका मण्डल का धार्मिक शिविर आयोजित हुआ, जिसमें लगभग 80 बहनों ने भाग लिया। दर्शनार्थियों का आवागमन बना हुआ है। स्वधर्मी वात्सल्य का लाभ श्री मीठालालजी मधुर, जितेन्द्रकुमार, गौतमचन्द परिवार द्वारा लिया जा रहा है। श्री जैन रत्न युवक संघ के कार्यकर्त्ता श्री धर्मेश जी चौपड़ा के नेतृत्व में आवास व्यवस्था एवं अध्यक्ष श्री विनयजी मोदी, मंत्री श्री धनराजजी भण्डारी चौका व्यवस्था सहित सक्रियता से जुटे हुए हैं। रत्नसंघ के परिवारों के साथ ही श्री वर्द्धमान जैन स्थानकवासी संघ भी कार्यरत है। -*ओमप्रकाश बांठिया*

महासती-मण्डल के चातुर्मासों में धर्माराधन

पावटा-जोधपुर- शासनप्रभाविका, साध्वीप्रमुखा महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री रतनकंवरजी म.सा. आदि ठाणा 8 सामायिक-स्वाध्याय भवन, पावटा में सुख-साता पूर्वक विराज रहे हैं। नित्य प्रवचन एवं धर्माराधना का कार्यक्रम चल रहा है। तपस्याएँ एवं ज्ञानाराधन के कार्यक्रम भी चल रहे हैं। -*धनपत सेठिया, अध्यक्ष*

शक्तिनगर (जोधपुर)- व्याख्यात्री महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा 5 के सान्निध्य में सामायिक-स्वाध्याय भवन शक्तिनगर में चातुर्मास के प्रारम्भ से ही विविध कार्यक्रम चल रहे हैं। बालिकाओं में जागृति हेतु 13 से 15 अगस्त तक तीन दिवसीय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें 60 बालिकाओं ने भाग लिया। 45 बालिकाओं ने 2 दिन का संवर किया। इसमें कई विद्वान् श्रावक-श्राविकाओं ने एक-एक घण्टे के कालांश में बालिकाओं को 'संस्कार व जीवन कैसे जियें' विषय पर उद्बोधन दिया। उसके पश्चात् 55 वर्ष तक की श्राविकाओं का 23 से 25 अगस्त को दोपहर में 12 से 3 बजे तक का त्रिदिवसीय शिविर आयोजित किया गया, जिसमें 120 श्राविकाओं ने भाग लिया। तपस्या का ठाट लगा हुआ है। व्याख्यान में भी अच्छी उपस्थिति है। दोनों शिविरों के प्रायोजक का लाभ श्री कुशलचन्द बाफणा परिवार ने लिया। *-धनपत सेठिया*

फुलियाँकला- व्याख्यात्री महासती श्री मनोहरकंवरजी म.सा., महासती श्री कौशल्याजी म.सा. आदि ठाणा 3 का 15 जुलाई 2016 को चातुर्मास हेतु जयकारों के साथ मंगल प्रवेश हुआ। जैन समाज की संख्या कम होते हुए भी महासती मण्डल की प्रबल प्रेरणा से तपस्या का ठाट लगा हुआ है। प्रवेश के दिन से ही तपस्या प्रारम्भ हो गई। आयंबिल एवं एकाशन की लड़ी लगातार चल रही है। 9 अठाई, तेला, एकान्तर तप एवं एकाशन का मासक्षपण हुआ है। दोपहर बाद बच्चों को धार्मिक अध्ययन कराया जाता है। जिसमें बच्चे सामायिक सूत्र, प्रतिक्रमण सूत्र, भक्तामर स्तोत्र, पच्चीस बोल आदि सीख रहे हैं। प्रत्येक रविवार को प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। प्रवचन में जैन-अजैन सभी की उपस्थिति रहती है। *-धर्मीचन्द चौधरी, संरक्षक-09928778690*

यादगिरि (कर्नाटक)- व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा जब से यादगिरि पधारे हैं तब से धर्मध्यान, जप-तप एवं ज्ञानाराधन का ठाट लगा हुआ है। यादगिरि में स्थानकवासी परम्परा के 22 घर हैं, किन्तु मूर्तिपूजक एवं तेरापंथी समाज के बन्धु भी प्रवचन श्रवण के पश्चात् दुकान खोलते हैं। सभी का उमंग उत्साह बना हुआ है। मासक्षपण तप एवं उससे बड़ी तपस्या भी सम्पन्न हुई है। प्रवचन में भगवान महावीर का जीवन चरित्र चल रहा है। दोपहर में सुखविपाक सूत्र की वाचनी एवं अर्थ तथा उपासकदशांग का अर्थ सामूहिक रूप से किया जा रहा है। लघुदण्डक, विरहद्वार, वीरस्तुति, दशैवकालिक सूत्र, भक्तामर स्तोत्र, प्रतिक्रमण, पच्चीसबोल 40 जनें सीख रहे हैं। प्रत्येक रविवार एवं अवकाश के दिन बड़ों एवं बच्चों का शिविर आयोजित होता है तथा प्रतियोगिता रखी जाती है। एकाशन के 42 मासक्षपण एवं 10 एकान्तर उपवास चल रहे हैं। 16 तेले, आयंबिल की लड़ी प्रतिदिन चल रही है। पूरे चार माह तक 1 घण्टे का जाप चल

रहा है। 05 अगस्त तक 10 प्रतियोगिताएँ एवं 27 जाप सम्पन्न हो गये थे। यहाँ आसपास के कई क्षेत्रों के दर्शनार्थियों का आवागमन बना हुआ है। 31 जुलाई से 04 अगस्त तक 53 व्यक्तियों ने पाँच-पाँच सामायिक की। धोका परिवार तपस्या का पूरा लाभ ले रहा है।

-गौतमचंद धोका

बाड़मेर- व्याख्यात्री महासती श्री विनीतप्रभाजी आदि ठाणा 3 का 15 जुलाई को नवनिर्मित स्थानक भवन में चातुर्मास हेतु मंगल-प्रवेश हुआ। प्रवेश के समय बालोतरा संघ, जोधपुर संघ एवं बाड़मेर जैन श्री संघ, अचलगच्छ संघ, खतरगच्छ जैन श्री संघ एवं तेरापंथ सभा के सदस्य भी उपस्थित रहे। महासती मण्डल के यहाँ पदार्पण से सभी प्रमुदित हैं। महासती विनीत प्रभाजी ने अपने वक्तव्य में कहा कि सबसे बड़ा धर्म जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। महासती श्री कान्ताजी, सुव्रतप्रभाजी एवं विनीतप्रभाजी के प्रवचन एवं शिक्षण के कार्य निरन्तर चल रहे हैं। प्रवचनों से प्रेरित होकर श्री चम्पालालजी भण्डारी एवं श्रीमती शान्तिबालाजी भण्डारी ने आजीवन शीलव्रत ग्रहण किया। दो युगलों ने एक-एक वर्ष के लिए शीलव्रत स्वीकार किया। कई जोड़ों ने चार माह के लिए शीलव्रत लिया। अनेक भाई-बहनों ने जमीकंद का त्याग, रात्रिभोजन का त्याग किया। एकाशन का सिद्धि तप, उपवास की लड़ी, दया के मासक्षपण, संवर के मासक्षपण आदि सम्पन्न हुए। प्रत्येक रविवार को बालक-बालिकाओं की धार्मिक पाठशाला चल रही है। छोटी-बड़ी अनेक तपस्याएँ चल रही हैं। 31 जुलाई से 02 अगस्त तक माता-पुत्री संस्कार शिविर का आयोजन किया गया। प्रथम बार 50 महिलाओं एवं 50 बालिकाओं ने शिविर में भाग लिया। शिविर में कौशल्या सालेचा-बालोतरा, श्री ओम जोशी एवं मुकेश जैन 'एडवोकेट' ने माँ-पुत्री के बीच दूरियों को पाटने के सरल उपाय बताये। इन तीन दिनों में दया के तेले, उपवास के तेले, एकाशन के तेले भी सम्पन्न हुए। प्रवचन में जैन एवं जैनेतर भाई-बहनों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। संघसेवी श्री मूलचन्दजी गोगड़ विहार-गोचरी में नियमित सेवाएँ दे रहे हैं। *-जितेन्द्र बांठिया, मंत्री श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, बाड़मेर*

सूरत- व्याख्यात्री महासती श्री रुचिताजी म.सा. आदि ठाणा 6 की सन्निधि में धर्म-ध्यान एवं तप-त्याग का ठाट लगा हुआ है। महासतीवर्या अभी माँ की ममता एवं नारी के गौरव पर व्याख्यान फरमा रहे हैं तथा राजा वीर विक्रम का चरित्र भी चल रहा है। महासती श्री विवेकप्रभाजी उत्तराध्ययन सूत्र के सम्यक् पराक्रम के अध्ययन पर प्रवचन फरमा रहे हैं। प्रत्येक रविवार को धार्मिक परीक्षा का आयोजन हो रहा है। धार्मिक पाठशाला का संचालन सायंकाल 7-8 बजे तक किया जा रहा है। महासती श्री आराधनाश्रीजी ने 32 उपवास, युवारत्न श्री राजीव जी नाहर ने 31, श्रीमती चन्द्राजी नाहटा ने 31, श्रीमती उर्मिलाजी

चोरडिया ने 29, श्रीमती शशीजी जैन ने 22, श्रीमती विमलाजी बागरेचा ने 21, श्रीमती सुशीला जी मण्डोत ने 12 उपवास किए हैं। अठाई एवं नौ के उपवास भी अनेक श्रावक-श्राविकाओं द्वारा सम्पन्न हुए हैं। 10 अगस्त को महासती श्री विचित्राजी म.सा. के प्रति श्रद्धांजलि स्वरूप गुणानुवाद सभा आयोजित की गई, जिसमें अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पी. शिखरमल जी सुराणा-चेन्नई, शासनसेवा समिति के संयोजक श्री रतनलाल जी बाफना-जलगांव, श्री कांतिलालजी चौधरी-धुलिया, श्री पदमचन्दजी कोठारी-अहमदाबाद, श्री रतनचन्दजी भण्डारी-मुम्बई, श्री जगदीश जी जैन आदि ने अपने विचार प्रस्तुत किए। 11 अगस्त को महासती श्री आराधना श्रीजी के 32 वें उपवास के पूर पर अनेक ग्राम-नगरों के दर्शनार्थी बन्धु उपस्थित थे। वीर परिवारों का शॉल एवं चुन्दड़ी से अभिनन्दन किया गया। श्रावकों को सुखविपाक सूत्र, थोकड़े एवं प्रतिक्रमण सिखाने का कार्यक्रम चालू है। तेले, उपवास, आयंबिल तथा एकाशन की लड़ी चल रही है।

हरसाना- व्याख्यात्री महासती श्री स्नेहलताजी म.सा. के चातुर्मास में संयम-साधना एवं तप-त्याग की अविरल धारा बह रही है। प्रतिदिन उपवास, आयंबिल तथा तेले की लड़ी चल रही है। चार अठाई तप पूर्ण हो गये हैं। रेणुजी जैन धर्मपत्नी श्री नवनीतजी जैन मासक्षपण तप की ओर बढ़ रही हैं। 31 जुलाई से 04 अगस्त तक लगभग 25 बहनों एवं बालकों ने एकाशन के पचोले किए। प्रातःकालीन एवं 9 बजे प्रार्थना महासतीजी द्वारा आचारांग सूत्र के वाचन के पश्चात् सीखने-सिखाने का कार्यक्रम निरन्तर चल रहा है। दिन में 2 से 3 बजे तक प्रवचन होता है, जिसमें उत्तराध्ययन सूत्र पर प्रवचन फरमाया जा रहा है। प्रवचन श्रवण का लाभ लक्ष्मणगढ़, मौजपुर, बिचगांवा, खोह, मण्डावर आदि निकटवर्ती गाँवों के श्रावक-श्राविकाओं के द्वारा उनकी अनुकूलता के अनुसार लिया जाता है। ग्राम हरसाना के श्रावक-श्राविका उत्साह एवं उमंग से भरे हुए हैं। सायंकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् बहिनों के लिए धार्मिक चर्चा का कार्यक्रम रहता है। *-नितिनकुमार जैन-084400-70387*

सम्मान-समारोह एवं गुणी-अभिनन्दन कार्यक्रम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर द्वारा गुणी-अभिनन्दन एवं विशिष्ट सेवाभावी कार्यकर्त्ताओं का सम्मान-समारोह शनिवार 17 सितम्बर, 2016 को दोपहर 12.30 बजे निमाज, जिला-पाली (राज.) में रखा गया है, जिसमें सभी संघ सदस्य सादर आमन्त्रित हैं। समारोह की अध्यक्षता अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष माननीय श्री पी.शिखरमल जी सुराणा करेंगे। राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधिपति श्री मुनीश्वरनाथजी भण्डारी मुख्य अतिथि के रूप में, राजस्थान सरकार के पंचायतराज मंत्री माननीय श्री सुरेन्द्रजी गोयल सम्माननीय अतिथि के रूप में तथा राजस्थान

उच्च न्यायालय के महाधिवक्ता माननीय श्री नरपतमल जी लोढ़ा विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारेंगे। इस कार्यक्रम में निम्नानुसार अभिनन्दन एवं सम्मान किए जायेंगे-

1. संघ-रत्न सम्मान
2. आचार्य श्री हस्ती स्मृति सम्मान
3. युवा प्रतिभा-शोध-साधना-सेवा सम्मान
4. विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान
5. बहुविध संघ-सेवियों का अभिनन्दन
6. न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा स्मृति युवा शिक्षा-प्रतिभा-सम्मान
7. डॉ. बिमला भण्डारी जैन रत्न शोध सम्मान।

उक्त कार्यक्रमों में अपने पधारने की सूचना निमाज सम्पर्क सूत्र पर अवश्य करावे जिससे आवास आदि की व्यवस्था की जा सके। सम्पर्क सूत्र:- श्री सूरजमलजी भण्डारी 094444-14120 श्री निर्मलकुमारजी बम्ब 094496-49577, श्री गौतमचन्दजी भण्डारी 090083-55550

-पूरणराज अबानी, महामंत्री

वार्षिक आमसभा एवं अधिवेशनों का आयोजन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ एवं उसकी सहयोगी संस्थाओं की संयुक्त वार्षिक आमसभा रविवार, 18 सितम्बर, 2016 को दोपहर 12.30 बजे निमाज में आयोजित है। आप सभी सादर आमन्त्रित हैं।

卐卐卐

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल का वार्षिक अधिवेशन शुक्रवार, 16 सितम्बर, 2016 को दोपहर 12.30 बजे निमाज में आयोजित है।

卐卐卐

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् का वार्षिक अधिवेशन रविवार, 25 सितम्बर, 2016 को दोपहर 1.00 बजे जोधपुर में आयोजित है।

उपासकदशांग सूत्र पर द्विदिवसीय स्वाध्याय शाला

किशनगढ़- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में 6-7 अगस्त 2016 को सातवें अंग 'उपासकदशांगसूत्र' पर स्वाध्याय शाला आयोजित की गई। 06 अगस्त को प्रथम सत्र में सर्वप्रथम महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. ने उपासकदशांग सूत्र के दशों अध्ययनों की एक झलक प्रस्तुत की तदनन्तर महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. ने 'उपासकदशांगसूत्र' में वर्णित श्रमणोपासकों की सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक

आदि विशेषताओं का विश्लेषण किया। अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पूर्व राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री जितेन्द्रजी डागा, जयपुर ने 'उपासकदशांग सूत्र में प्रबन्धनकला' तथा जिनवाणी पत्रिका के मानद् सम्पादक प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन ने 'उपासकदशांग में जैन सिद्धान्तों की रूपरेखा' विषय पर अपने विचारों की अभिव्यक्ति दी।

दोपहर में चर्चा सत्र में श्रावक-श्राविकाओं ने मनोयोग से भाग लिया। द्वितीय सत्र में महासती भाग्यप्रभाजी म.सा. ने 'उपासकदशांग में ज्ञान, भक्ति व कर्म योग' पर तथा जिनवाणी पत्रिका की सह-सम्पादक डॉ. श्वेता जैन ने 'उपासकदशांग और पंच समवाय' पर अपनी प्रस्तुति दी।

07 अगस्त 2016 को तृतीय सत्र में बैंगलोर से समागत श्री शान्तिलाल जी बोहरा, संयोजक-कर्नाटक स्वाध्याय संघ ने 'उपासकदशांग सूत्र की वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उपादेयता' विषयक तथा डॉ. अशोक जी कवाड़, कार्याध्यक्ष-श्री अ.भा.श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ ने 'उपासकदशांग में अतिचारों की स्पष्टता' विषयक उद्बोधन दिया। दोपहर के चर्चा सत्र में अच्छी उपस्थिति थी। चतुर्थ सत्र में महासती श्री भाग्यप्रभाजी म.सा. ने रूपक शैली में 'उपासकदशांग में अध्यात्म' विषय को प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् श्री प्रकाशचन्दजी जैन, पूर्व प्राचार्य-महावीर स्वाध्यायपीठ, जलगाँव ने 'उपासकदशांग में वर्णित शब्दों की विवेचना' तथा श्रीमती तारा जी डागा-जयपुर ने 'उपासकदशांग में जैन सिद्धान्त एवं पर्यावरण' विषय पर अपने विचार व्यक्त किए। संगोष्ठी के अन्तिम सत्र में श्रोताओं ने अपनी सकारात्मक प्रतिक्रिया रखी। श्री प्रकाशचन्दजी जैन ने प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस स्वाध्याय शाला की यह विशेषता रही कि अपने व्यवसाय को छोड़कर भी युवा सहित श्रावक-श्राविका वहाँ उपस्थित रहे और उनमें आगमों के अध्ययन के प्रति रुचि जगी। किशनगढ़ संघ के अध्यक्ष श्री धनबुद्धसिंह जी महता, समस्त पदाधिकारियों एव कार्यकर्त्ताओं की तत्परता सराहनीय रही।

आवश्यकता

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर के लिए धार्मिक अनुभवी अध्यापक/अध्यापिकाओं एवं संस्कार केन्द्र के निरीक्षण हेतु निरीक्षकों की आवश्यकता है। वेतन योग्यतानुसार देय होगा। अपने आवेदन-पत्र सहित कार्यालय में उपस्थित हों। **सम्पर्क:-** राजेश भण्डारी, सचिव-अ.भा.श्री जैन रत्न संस्कार केन्द्र, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोनः 0291-2622623, मोबाइल नं. 094610-13878/98281-97000

तीर्थंकर आराधना एवं बीस बोलों की साधना

परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर 1008 पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के मंगल आशीर्वाद से चातुर्मास के प्रथम दिवस 19.07.2016 से 12.08.2016 तक निमाज (जिला-पाली) एवं किशनगढ़ (जिला-अजमेर) में **24 तीर्थंकर भगवन्तों की आराधना व 20 बोलों की साधना** का कार्यक्रम पहली बार किया गया। इस आराधना में बालक-बालिकाओं व श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया। दिनांक 30 अगस्त से 6 सितम्बर, 2016 तक निमाज में **सिद्ध आराधना** का कार्यक्रम चल रहा है।- *बीना मेहता, महासचिव-97727-93625*

आवश्यक सूत्र पर 'खुली पुस्तक प्रतियोगिता

अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 'बनें आगम अध्येता (6)' के अन्तर्गत आवश्यक सूत्र की परीक्षा 02 जुलाई 2016 से प्रारम्भ की जा चुकी है। मूल्यांकन प्रश्न-पत्र भरकर भेजने की अन्तिम तिथि 20 अक्टूबर 2016 व समापक परीक्षा 18 दिसम्बर 2016 को रखी गई है। प्रतियोगिता हेतु पुस्तक का मूल्य 60/- रुपये निर्धारित है। **सम्पर्क सूत्र:-** श्रीमती बीनाजी मेहता-97727-93625, श्री राकेशजी जैन-94616-63545. आवश्यक सूत्र की पुस्तक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 182-183 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.), फोन: 0141-2575997, 4068798 से मंगवा सकते हैं।

प्रतियोगियों के लिए आवश्यक सूचना

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 'बनें आगम अध्येता' योजना के अन्तर्गत खुली पुस्तक परीक्षाओं में प्राप्तांक 70 तथा इससे ऊपर के प्राप्तांक वाले विजेता प्रतिभागियों की पुरस्कार राशि उनके बैंक खाते में नेफ्ट द्वारा हस्तान्तरित की जायेगी। अत: प्रतियोगिता विजेता प्रतिभागी अपना नाम, स्थान का उल्लेख करने के साथ निम्न जानकारी भिजवाने का श्रम करावें :- Name of Bank, Name of Account holder, Bank Account Number, Bank Place, IFS code, Micr Code, Mobile No. - *बीना मेहता, महासचिव*

श्राविका मण्डल की कार्यकारिणी बैठक व वार्षिक अधिवेशन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा निमाज (जिला-पाली) में शुक्रवार, 16 सितम्बर, 2016 को वार्षिक अधिवेशन दोपहर 12.30 से तथा सायं 8 बजे **कार्यकारिणी** की बैठक रखी गई है तथा रविवार, 18 सितम्बर, 2016 को सभी संस्थाओं की संयुक्त वार्षिक साधारण सभा का आयोजन रखा गया है। **विशेष:-** सभी सदस्यों से

निवेदन है कि निमाज में आयोजित कार्यक्रमों में रत्नसंघ की ड्रेस कोड लाल चून्दड़ी की साड़ी ही पहनकर भाग लें जिससे एकरूपता का परिचय रहे। *-बीना मेहता, महासचिव*

श्राविका मण्डल की यादगिरी (कर्नाटक) में कार्यशाला सम्पन्न

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 23 अगस्त, 2016 को यादगिरी (कर्नाटक) में कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला में श्राविका मण्डल की परामर्शदाता श्रीमती मंजूजी भण्डारी-बेंगलोर, विहार सेवा समिति सदस्य श्रीमती सुशीलाजी भण्डारी-बैंगलोर, बेंगलोर शाखाध्यक्ष श्रीमती वैजयन्तीजी मेहता, शाखासचिव श्रीमती प्रभाजी गोलेच्छा, रायचूर शाखाध्यक्ष श्रीमती सुशीलाजी भण्डारी आदि पदाधिकारियों सहित 50 श्राविकाओं ने भाग लिया।

इस कार्यशाला में 'संघ को कैसे सशक्त बनाएं', 'युवा पीढ़ी को किस तरह जोड़ा जाए।', 'धर्म कार्य में कैसे आगे बढ़ें', विषयों पर विचार-विमर्श किया गया। श्राविकाओं में आगे बढ़ने की प्रबल लगन सराहनीय थी। कार्यशाला में बैंगलोर व रायचूर शाखाध्यक्ष व शाखासचिव का सराहनीय सहयोग प्राप्त हुआ।

मंजू भण्डारी, परामर्शदाता-अ. भा. श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, बेंगलोर

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा चेन्नई में सेमिनार का आयोजन

जिनशासन गौरव, परम पूज्य आचार्यप्रवर 1008 पूज्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के संदेश 'व्यसन मुक्त हो सारा देश' के नारे को अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् प्रोजेक्टर के माध्यम से सप्त कुव्यसन व आज समाज में प्रचलित कुरीतियां जैसे तम्बाखू, सिगरेट, गुटखा, जुआ, शराब आदि कुव्यसनों को जीवन से हटाने हेतु निरन्तर प्रयासरत है। जीवन को उन्नत बनाने के लिये व चारित्र निर्माण के लिये कुव्यसनों को छोड़ना अत्यन्त आवश्यक है। इसी उद्देश्य को लेकर अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पदाधिकारियों द्वारा श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्त्वावधान में 07 अगस्त 2016 को प्रातः 10.30 बजे से 3.30 बजे तक Jain Hands to empower the youth for a Happy & Blissful Life हेतु Train the Trainer Seminar का आयोजन सूरज पैलेस, चूलै में रखा गया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री पी.शिखरमलजी सुराणा, राष्ट्रीय अध्यक्ष-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ थे तथा अध्यक्षता श्री महेन्द्रकुमारजी कांकरिया, अध्यक्ष-श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ-तमिलनाडु ने की।

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के अध्यक्ष श्री राजकुमारजी गोलेच्छा, कार्याध्यक्ष श्री राजेन्द्रजी लुंकड़ व लोकेशजी कुम्भट, उपाध्यक्ष श्री राजेन्द्र जी दुधेड़िया, विकास जी गुन्देचा एवं महासचिव श्री मनीषजी लोढ़ा एवं अन्य पदाधिकारीगण नमनजी मेहता, निखिलजी बाघमार आदि उपस्थित हुए। इन सभी को मंच पर आमंत्रित किया गया और श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पदाधिकारिगणों एवं श्रावक संघ के पदाधिकारीगणों द्वारा माला एवं शाल से बहुमान किया गया। इसी शृंखला में श्री जैन रत्न युवक परिषद्, तमिलनाडु के अध्यक्ष श्री टी. दुलीचन्दजी नाहर एवं श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, तमिलनाडु की अध्यक्षा श्रीमती संगीताजी बोहरा को मंच पर आमंत्रित किया गया।

बहुमान के पश्चात् परम पूज्य आचार्य भगवन्त 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा के आचार्य पदारोहण रजत वर्ष के पावन प्रसंग पर श्री जैन रत्न युवक परिषद्, तमिलनाडु द्वारा प्रतिक्रमण कंठस्थ करने वाले 14 वर्ष तक की आयु के बालक-बालिकाओं को प्रशस्ति पत्र एवं मेडल से सम्मानित किया गया। श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा अध्यापक श्री विनोदजी एवं श्री गजेन्द्रजी जोगाणी का शाल, माला एवं मोमेन्टो से सम्मान किया गया।

अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के कार्याध्यक्ष राजेन्द्रजी लुंकड़ ने प्रोजेक्टर के द्वारा कई प्रकार के दृष्टांत, चलचित्र आदि के माध्यम से तीन घण्टे तक वर्तमानकाल में व्यसन रूपी चलने वाली भौतिक चकाचौंध की आंधियों से होने वाली हानियों एवं इनसे कैसे बचा जाये इस विषय पर अपना मार्मिक Presentation प्रदान किया। जिसको सभी प्रशिक्षकगणों ने ध्यानपूर्वक सुना व विश्वास दिलाया कि हम इस कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए लोगों को व्यसनों से मुक्त करने का प्रयास करेंगे । अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के उपाध्यक्ष श्री राजेन्द्रजी दुधेड़िया ने सभी ट्रेनरों को आगे प्रशिक्षण करवाने हेतु मार्ग दर्शन प्रदान किया ।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अहमदाबाद, जोधपुर, हैदराबाद, बैंगलोर, कांचीपुरम एवं स्थानीय युवक-युवतियों सहित लगभग 120 एवं युवक परिषद् के कार्यकर्ताओं ने सम्मिलित होकर कार्यक्रम को सफल बनाया । कार्यक्रम के अंत में पी.एस.सुराणा द्वारा मांगलिक श्रवण करवाई गई । श्री जैन रत्न युवक परिषद्, तमिलनाडु के शाखा सचिव श्रीमान् एस. मांगीलाल जी चोरड़िया ने सफलता पूर्वक कार्यक्रम का संचालन किया ।

कार्यक्रम के पश्चात् अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पदाधिकारियों एवं स्थानीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पदाधिकारिगणों तथा सदस्यों की संयुक्त संगोष्ठी हुई जिसमें युवक परिषद द्वारा चलने वाली समस्त गतिविधियों पर विचार विमर्श किया गया । युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्रीमान् राजकुमारजी गोलेच्छा द्वारा परिषद् की गतिविधियों पर

प्रकाश डाला गया।

श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्त्वावधान में चलने वाली मासिक सामूहिक सामायिक में 7 अगस्त 2016 को प्रात: 7.00 से 8.00 बजे तक एवं रविवारीय धार्मिक पाठशाला Wings to Fly में सुबह 9.00 से 10.00 बजे तक बच्चों में संस्कार एवं उत्साहवर्द्धन हेतु स्वाध्याय भवन के प्रांगण में श्री राजेन्द्रजी दुधेड़िया द्वारा उद्बोधन दिया गया।

कार्यक्रम में पधारे हुए समस्त अतिथियों, ट्रेनरों एवं कार्यकर्ताओं का धन्यवाद श्रीमान् मांगीलाल जी चोरड़िया द्वारा दिया गया। -*टी. दुलीचन्द नाहर, शाखा प्रमुख*

स्वाध्याय संघ को अर्थ-सहयोग सम्बन्धी सूचना

सभी श्री संघ, संस्थाओं एवं श्रावक-श्राविकाओं से निवेदन है कि वे श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ जोधपुर को किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग (पर्युषण सहयोग, स्वाध्याय शिक्षा प्रकाशन तथा अन्य किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग) प्रदान करना चाहते हैं तो वे श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर कार्यालय, घोड़ों का चौक में नकद अथवा स्वाध्याय संघ के बचत खाता (ओरियण्टल बैंक ऑफ कार्मस, नई सड़क, जोधपुर)में संख्या 00592010003010, IFSC Code No.- ORBC 0100059 में नकद/चैक/ड्राफ्ट द्वारा जमा कराकर रसीद प्राप्त कर सकते हैं। राशि जमा कराने पर कार्यालय में सूचना अवश्य करावें, जिससे रसीद शीघ्र ही प्रेषित की जा सके। **पता**-श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. 0291-2624891 -*ओमप्रकाश बांठिया, संयोजक*

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना में आवेदन की तिथि बढ़ी

सभी को सूचित किया जाता है कि छात्रवृत्ति योजना में छात्रवृत्ति के लिए आवेदन करने की अन्तिम तिथि 31 अगस्त 2016 थी जिसे बढ़ाकर 30 सितम्बर 2016 कर दिया गया है। अपने आवेदन अन्तिम तिथि से पूर्व ही प्रेषित करावें। **नोट**:- छात्रवृत्ति योजना की सम्पूर्ण जानकारी अगस्त माह की जिनवाणी में प्रकाशित की गई है। आवेदक आवेदन-पत्र निम्नलिखित पतों पर प्रेषित कर सकते हैं- (1) Achary Hasti Scholarship Fund, C/o. Pooja Foundation, No. 921, First Floor, E.V.R. Periyar 1st Lane, Opp. Kerala Vidalaya School, Poonamallee High Road, Chennai-600084 (T.N.), Mobile No.-095430-68382. (2) MR. HARISH JI KAVAD, No. 5, "Guru Hasti Thanga Maaligi", Car Street, Poonamallee, Chennai-600056 (T.N.) अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें- मनीष जैन, चेन्नई-095430-68382 -*हरीश कवाड़, संयोजक*

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर के बढ़ते चरण

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र के जोधपुर शहर में माणक चौक, मोती चौक, सरदारपुरा, दाधीचनगर, लक्ष्मीनगर में नये संस्कार केन्द्र खोलते हुए संस्कार केन्द्रों की संख्या 37 हो गई है। इसी प्रकार जोधपुर से बाहर सुमेरगंज, कोटा-केशवपुरा, कोटा-रामपुरा, सूरत, पाली, उखलाना, जैनपुरी में नये संस्कार केन्द्र खोलते हुए जोधपुर से बाहर संस्कार केन्द्रों की संख्या 36 हो गई है। शहर में मोती चौक, माणक चौक, दाधीचनगर में नये रविवारीय संस्कार शिविर सहित शिविरों की संख्या 39 हो गई है। इसी प्रकार जोधपुर से बाहर निमाज व कुरुक्कपेट (चेन्नई) में रविवारीय संस्कार शिविर प्रारम्भ करने पर शिविरों की संख्या 4 हो गई है। संस्कार केन्द्रों व शिविरों में कुल छात्र संख्या 1700 तथा 900 हो गई है। संस्कार केन्द्रों व शिविरों के विस्तार का क्रम जारी है।

-राजेश भण्डारी, सचिव

अहमदाबाद में रत्नसंघीय परिवारों का स्नेह-मिलन

03 अगस्त 2016 को अहमदाबाद के रत्नसंघीय परिवारों का स्नेह-मिलन समारोह आयोजित किया गया, जिसमें अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्री राजेन्द्रजी लुंकड़ ने **'नई पीढ़ी : नई सोच'** विषय पर वक्तव्य देते हुए कहा कि नई पीढ़ी को नये वातावरण के अनुसार धर्म-मार्ग पर आगे बढ़ने हेतु कार्यशालाएँ आयोजित कर प्रेरित किया जा सकता है। युवक परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री राजकुमारजी गोलेच्छा ने अहमदाबाद में सामायिक-स्वाध्याय भवन की आवश्यकता पर बल देते हुए इसके लिए प्रयास करने हेतु प्रेरणा प्रदान की। इस अवसर पर संत-सतीमण्डल के अहमदाबाद क्षेत्र में पालनपुर से बड़ौदा तक विचरण-विहार के दौरान सेवा प्रदान करने वाले श्री कमलेशजी बाफना-पालनपुर, श्री कन्हैयालालजी-सिद्धपुर, श्री महावीरजी पोकरना-ऊँझा, श्री रमेशभाई बंधु-बंधु विहार धाम, श्री पीयूषभाई शाह-आदिनाथ सोसायटी, ऊँझा, श्री विमलभाई जैन-उत्कृष्टी स्कूल, श्री जनकभाई शाह-कलोल, श्री अनिलभाई जैन-कलोल, श्री नटवरभाई पटेल-महावीर विहारधाम, नैनपुर, श्रीमती बीना बहन-वरसोला, श्री सज्जनराजजी नडियाद, श्री अनिलभाई शाह-उवसग्राम तीर्थ, श्री कमलभाई पटेल तथा बड़ौदा युवक परिषद् के साथियों एवं अन्य स्वधर्मियों और सहयोगियों का अहमदाबाद संघ की ओर से स्वागत कर स्मृति चिह्न प्रदान किए गए तथा उनके प्रति अहोभाव प्रकट किया गया। 10 वर्षीय दिनेश कोठारी एवं वंश कोठारी तथा 15

वर्षीय आकांक्षा महावीरजी जैन की विहार सेवा का भी उल्लेख किया गया।

पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के व्यसनमुक्ति संदेश को एक कव्वाली के रूप में प्रस्तुत कर व्यसनों के दुर्गुणों से अवगत कराया गया। कार्यक्रम के प्रारम्भ में श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ-अहमदाबाद के अध्यक्ष श्री छोगालाल जी बागमार ने अतिथियों का स्वागत किया तथा धन्यवाद ज्ञापन श्री महावीर जी मेहता ने किया। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के कार्याध्यक्ष श्री पदमचन्दजी कोठारी ने रत्नसंघ के कार्यक्रमों में इसी प्रकार सक्रियतापूर्वक भाग लेने हेतु प्रेरणा की।

संवैधानिक अधिकारों के प्रति अल्पसंख्यक जैन समुदाय में चेतना आवश्यक

भारत सरकार ने जैन समुदाय को धार्मिक अल्पसंख्यक का दर्जा 27 जनवरी 2014 को प्रदान किया। इससे पूर्व देश के 16 राज्यों में जैन समुदाय को उनके स्तर पर अल्पसंख्यक दर्जा प्रदान किया हुआ था। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 29 एवं 30 में अल्पसंख्यक समुदायों को विविध संवैधानिक अधिकार प्रदान किये गये हैं। अनुच्छेद 29 में यह उल्लेख है कि अल्पसंख्यक समुदाय की लिपि, भाषा एवं संस्कृति को संरक्षित किया जायेगा। यह नग्न सत्य है कि जैन समुदाय प्रेम की भाषा एवं लिपि से दूर होता जा रहा है, जो अन्ततः हमारी संस्कृति के पतन का कारण हो सकता है। जैन परम्परा का साहित्य प्राकृत भाषा एवं देवनागरी लिपि में है, जिसके संरक्षण की मांग आज की आवश्यकता है।

-प्रफुल्ल पारख, राष्ट्रीय अध्यक्ष, भारतीय जैन संघटना, पुणे, फोन-020-41200600

निःशुल्क शल्य चिकित्सा का आयोजन

श्री वर्द्धमान चिकित्सालय स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवा में विगत 40 वर्षों से निरन्तर वृद्धि की ओर गतिमान है। श्री वर्द्धमान जैन रिलीफ सोसायटी जोधपुर द्वारा रविवार, 16 अक्टूबर, 2016 को निःशुल्क शल्य चिकित्सा शिविर आयोजित किया जायेगा। शिविर में अनुभवी एवं ख्याति प्राप्त सर्जन डॉ. राम गोयल (कमला नगर अस्पताल) द्वारा हर्निया, मस्सा, भगन्दर, एपेडिंक्स, फिस्टुला आदि के ऑपरेशन किये जायेंगे। मरीजों को अस्पताल में तीन दिवस तक रखा जायेगा तथा उन्हें पाँच दिवसीय दवाई भी उपलब्ध कराई जायेगी। मरीजों की रक्तजाँच एवं डिजिटल एक्स-रे लागत दर पर किए जायेंगे।

इसी दिन परामर्श जाँच शिविर में अहमदाबाद हॉस्पिटल के चिकित्सक डॉ. सौरभ गोयल (जोइन्ट रिप्लेसमेन्ट सर्जन-अहमदाबाद) डॉ. हितेश शाह (हृदय रोग विशेषज्ञ) डॉ. प्रकाश चौधरी, (यूरोलोजिस्ट) द्वारा मरीजों की जाँच कर परामर्श दिया जायेगा।

सम्पर्क सूत्र-2627283/94139-59881 *-पूरणराज अबानी, अध्यक्ष*

संक्षिप्त-समाचार

जयपुर- राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान से तैयार की गई तीसरी कक्षा की पर्यावरण अध्ययन विषयक पुस्तक में भगवान महावीर के सम्बन्ध में दिए गए विवरण के साथ गौतम बुद्ध की फोटो छाप दी गई है। इससे जैन समाज में आक्रोश है।

छोटी कसरावद (खरगोन-मध्यप्रदेश)- स्वाध्याय संघ जोधपुर के वरिष्ठ स्वाध्यायी एवं खरगोन जिले के स्वाध्यायी शाला के प्रेरक स्तम्भ युवा कविहृदय श्री शिखरचन्दजी छाजेड़ के निरन्तर प्रयासों से जिले के अनेक स्थानों पर उनके ग्राम करही की तर्ज पर कसरावद, खरगोन, बलकवाडा, मण्डलेश्वर, पीपलियाँ, बागौद, बडवाह, तनावद आदि क्षेत्रों में रविवारीय स्वाध्यायी शाला के अन्तर्गत सामूहिक सामायिक-आराधना कार्यक्रम प्रारम्भ हुए। प्रत्येक क्षेत्र के श्रावक-श्राविकाओं ने पूर्ण सहयोग कर निर्व्यसनी सामायिक के अभियान को सफल बनाया। *-डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन*

बधाई

जोधपुर- जिनवाणी मासिक पत्रिका के मानद् सम्पादक प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन को

जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय के कला संकाय के अधिष्ठाता के रूप में नियुक्त किया गया है। उन्होंने 01 सितम्बर 2016 को कार्य भार ग्रहण कर लिया है। आप संस्कृत विभाग में प्रोफेसर पद पर कार्यरत हैं। हाल ही में आपको संस्कृत दिवस की पूर्व संध्या पर 17 अगस्त 2016 को संस्कृत शिक्षा निदेशालय, राजस्थान सरकार, जयपुर द्वारा बिड़ला ओडिटोरियम के प्रांगण में **विद्वत् सम्मान** से अलंकृत किया गया। सम्मान राजस्थान के उच्च शिक्षा मंत्री श्री कालीचनण सर्राफ एवं राज्य शिक्षा मंत्री श्री वासुदेव देवनानी ने प्रदान किया। *-डॉ. श्वेता जैन, सह-सम्पादक*

सुमित भंसाली

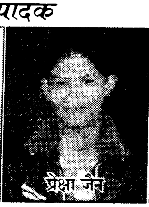

प्रेक्षा जैन

खुशी जैन

दीपाली डोसी

श्रेणिक ब्रम्ब

मनीला गांधी

जोधपुर- श्री सुमितजी भंसाली सुपुत्र श्रीमती कल्पनाजी-प्रमोदजी भंसाली सुपौत्र श्री शांतिमलजी भंसाली ने आई.आई. टी. मुम्बई के एस. जे. मेहता स्कूल ऑफ मैनेजमेण्ट

की एम.बी.ए.-2016 की परीक्षा में 9.37 सी.जी.पी.ए. के साथ प्रथम स्थान प्राप्त किया। उन्हें 13 अगस्त को आई.आई.टी. मुम्बई में आयोजित समारोह में स्वर्णपदक प्रदान किया गया है। इससे पूर्व वे आई.आई.टी. वाराणसी से एम.टेक. कर चुके हैं। वे सी.एफ.ए. (फाइनल), सी.ए. (फाइनल) तथा एफ.आर.एम. (यू.एस.ए.) में भी अध्ययनरत हैं।

-शांतिमल भंसाली

जोधपुर- सुश्री प्रेक्षा जैन सुपुत्री श्रीमती विजयलक्ष्मीजी-शांतिलालजी जैन सुपौत्री श्री अमरचन्दजी जैन ने सी.ए. परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की है। बी.कॉम परीक्षा में भी आपने जोधपुर में सातवाँ स्थान प्राप्त किया है।

पाली-मारवाड़- श्री सवाई लुंकड़ सुपुत्र श्री कांतिलाल जी लुंकड़ ने सी.ए. कीं परीक्षा उत्तीर्ण की है।

जोधपुर- सुश्री खुशी जैन सुपुत्री श्री लोकेशकुमार चौधरी ने सी.बी.एस.ई. की दसवीं परीक्षा में 10 सी.जी.पी.ए. (95 प्रतिशत+) के अंक प्राप्त किये। आप साध्वीप्रमुखा स्व. श्री लाडकंवरजी म.सा. की संसारपक्षीय ममेरे भाई श्री पुखराजजी चौधरी, पीपाड़ की सुपौत्री हैं।

जयपुर- सुश्री दीपाली डोसी सुपुत्री निर्मलाजी-नवीनकुमारजी डोसी सुपौत्री श्री सरदारमल जी डोसी-मसूदा ने सुबोध स्कूल, जयपुर से वाणिज्य में 12 वीं परीक्षा 93.6 प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण की है।

भड़गाँव (महा.)- श्री श्रेणिकजी बम्ब सुपुत्र सौ. सरलाजी एवं श्री संतोषजी बम्ब ने सी.डब्लू. ए. (सी.एम.ए) की अन्तिम परीक्षा प्रथम प्रयास में 21 वर्ष की आयु में उत्तीर्ण की है।

जोधपुर- सुश्री मनीला गाँधी सुपुत्री श्रीमती ललिताजी-श्री गौतमचन्दजी गाँधी (सुपौत्री पदमचन्दजी गाँधी-स्व. श्रीमती विमलादेवीजी गाँधी) ने सी.ए. (फाइनल) की परीक्षा उत्तीर्ण की है। आप पूर्व में सी.एस. भी कर चुकी हैं तथा राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की वरीयता सूची में भी स्थान पा चुकी हैं। *-गौतमचन्द गाँधी*

श्रद्धाञ्जलि

महासतीजी श्री विचित्राजी म.सा. का संलेखना-संथारा पूर्वक महाप्रयाण

रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर पूज्य आचार्यश्री हीराचन्द्रजी म.सा. की आज्ञानुवर्ती व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवरजी म.सा. की सन्निधि में 09 अगस्त 2016 को प्रतापनगर-जयपुर में श्री विचित्राजी म.सा. का संथारापूर्वक समाधिमरण हो गया। 09 जून

2016 को भागवती दीक्षा अंगीकार करने वाली विमलाजी जैन धर्मसहायिका श्री कस्तूरचन्दजी जैन-खेरलीगंज का बड़ी दीक्षा के पश्चात् विचित्राजी म.सा. नामकरण किया गया। दो माह संयम-पर्याय पालन कर आपने संलेखना संथारा के साथ तीन मनोरथों को पूर्ण किया। गृहस्थ जीवन में भी साध्वी की भांति जीवन जीने वाली विमलाजी ने कैंसर की अस्वस्थता का बोध होने पर संवेगपूर्वक संयम-पर्याय स्वीकार करते हुए जीवन को सफल बनाया।

प्रतापनगर चातुर्मास में प्रवेश के पश्चात् 15 जुलाई से 06 अगस्त तक आपके स्वास्थ्य में समाधि थी। किन्तु 07 अगस्त को स्वास्थ्य प्रतिकूल हो गया। उदर एवं कंधे में अचानक असहनीय दर्द उठा। डॉ. पी.एस. लोढ़ा ने जाँच कर बताया कि पेट में पानी भरा हुआ है तथा चाहें तो संथारा कराया जा सकता है। अतः 07 अगस्त को ही पूज्य आचार्यप्रवर की अनुमति से सायंकाल सागारी संथारे के साथ उपवास के प्रत्याख्यान कराये गए। 08 अगस्त को सायंकाल 04 बजे अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व अध्यक्ष श्री सुमेरसिंहजी बोथरा एवं अनेक पदाधिकारियों सहित लगभग 100-150 श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति में सभी से प्रमुदित भाव से साध्वीजी ने क्षमायाचना की तथा पूर्ण सजगता के साथ व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवरजी म.सा. से तिविहार संथारे के आजीवन प्रत्याख्यान स्वीकार किए। 08 अगस्त को रात्रि में स्वास्थ्य में समाधि रही एवं निद्रा भी ठीक से आयी। बाद में 09 अगस्त को प्रातः किडनी में दर्द उठा एवं खून की उल्टी हुई। सायंकाल महासतीवर्या से साध्वीजी लोगस्स के पाठ का श्रवण कर रहे थे तथा बड़े म.सा. से मांगलिक श्रवण करते-करते सायंकाल 06.12 बजे से शांति के साथ नश्वर देह का त्याग कर दिया।

श्री श्वेताम्बर जैन रत्न स्वाध्याय भवन-प्रतापनगर से 10 अगस्त को प्रातः 8.30 बजे महाप्रयाण यात्रा प्रारम्भ हुई। हल्दी घाटी मार्ग होते हुए यह यात्रा मोक्ष धाम पहुँची। महाप्रयाण यात्रा में निमाज, जोधपुर, जयपुर, पोरवाल एवं पल्लीवाल क्षेत्र के अनेक सदस्य उपस्थित थे। लगभग 1500 से 2000 श्रावक-श्राविकाओं की उपस्थिति रही। महासती जी के सांसारिक सुपुत्र श्री मुकेशजी जैन-खेरली, अन्य सुपुत्रों एवं परिजनों तथा अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पदाधिकारियों की उपस्थिति में उन्हें मुखाग्नि दी गई।

अपराह्न में आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर, संत-सतियों के सान्निध्य में चातुर्मास-स्थलों पर गुणानुवाद सभा रखी गई। यहाँ पर पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. द्वारा निमाज में अभिव्यक्त उद्गारों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

आचार्यप्रवर के उद्गार-

एक स्वाध्यायी श्रावक किसी के घर पहुँचा। एक बहन थाली में गेहूँ लेकर कंकर

बीन रही थी। पूछा भाई ने- बहन क्या कर रही हो? बोली- स्वाध्याय कर रही हूँ, भाई बोला- यह कौनसा स्वाध्याय। बहन ने जवाब दिया- मुझे स्वाध्याय का यही अर्थ बताया गया, अवगुणों को निकालो, गुणों को ग्रहण करो। गुणों का चिन्तन, मनन एवं ग्रहण करना यही स्वाध्याय होता है। परभाव से हटना और स्वभाव में आना ही स्वाध्याय है। शायद यही बात श्री रामजीलालजी की धर्मसहायिका श्रीमती जैनमती की पुत्री बहिन विमला के जीवन में देखने को मिली। आतंककारी रोग शरीर में आने पर भी धीरज को कायम रखा। आत्मलक्ष्यी होकर संयम जीवन को धारना, शास्त्र का परावर्तन करना, प्रतिदिन अपने अवगुणों का चिन्तन कर, दूर कर, गुणों को प्रगट करने के रूप स्वाध्याय किया। कैंसर के कारण बहिन विमला में यह क्रम चालू हुआ, जब स्वयं की भावना होगी, साहस जगेगा, पाप के प्रति त्याज्यता जगेगी तब संयम आयेगा।

वृद्धावस्था, रुग्णावस्था में स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है, ऐसे कष्टकारी रोग में सेवा करने वाला भी ऊब जाता है एवं परेशान हो मुँह फेर लेता है। अच्छे-अच्छे ज्ञानी भी सेवा नहीं कर पाते हैं। रोगी की अनुकूलता को ध्यान में रख, अपनी प्रतिकूलता भुलाकर अग्लान भाव से सेवा करना ही महानिर्जराकारी है। महासती सोहनकंवरजी स्वयं बीमार रहती हैं, पर बहिन विमला की संयम अभिलाषा को पूरा किया, संथारा की भावना को देखकर स्वयं की प्रतिकूलता को भुलाकर, अग्लान भाव से महासतीवृन्द ने सेवादायित्व का बीड़ा उठाया और अथक व सतत सेवा की।

प्रायः देखा जाता है बुढ़ापा आने, रोग होने पर माँ-बाप को परिवारजनों के द्वारा वृद्धाश्रम में छोड़ दिया जाता है, मैं कहता हूँ कि ऐसे लोगों को धर्मध्यान में लगना चाहिए। सारी जिन्दगी पैसा कमाया, यह किया-वह किया, सन्तान के मोह में फँसे रहे। सभी पाप किए, गृहस्थ में रहते हुए पाप छोड़ना दुष्कर है, ऐसे वृद्धों को सभी पापों का त्याग करने का साहस जुटाकर, अन्तिम क्षणों को आर्त्तध्यान भरी जिन्दगी से निकालकर धर्मसाधना, तप, संयम आदि में लगना चाहिए। मेरे यहाँ सभी के लिए दरवाजे सदैव खुले हैं। स्वयं का स्वाध्याय कर दुर्गुणों से बचें एवं सद्गुणों को ग्रहण कर अठारह पापों से बचते हुए जीवन को आगे बढ़ाने एवं सभी मनोरथों का लक्ष्य साधने का साहस जुटाएँ। जब जागे तभी सवेरा है। जैसा महासती श्री विचित्राजी म.सा. के जीवन वृतान्त से परिलक्षित होता है।

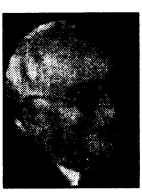

जयपुर- श्रावकरत्न श्री शोभागसिंह जी जैन-चौधरी का 80 वर्ष की आयु में 12 अगस्त 2016 को देवलोक गमन हो गया। कोठिया-भीलवाड़ा में जन्मे श्रावकरत्न ने राजस्थान एकाउण्ट सर्विस के माध्यम से चीफ एकाउण्टेण्ट एवं निदेशक के पदों को सुशोभित किया। आप राजकीय सेवा

से निवृत्त होने के पश्चात् समाजसेवा के कार्यों से जुड़े एवं भगवान महावीर कैंसर अस्पताल में सेवा देने के साथ सुबोध शिक्षा समिति में सचिव पद पर रहे। आप मिलनसार एवं मृदुभाषी थे। आप नियमित पाँच सामायिक एवं सायंकालीन प्रतिक्रमण करते थे। संघ-सेवा में सदैव तत्पर रहते थे। आपने महासती श्री वसुमतीजी म.सा. से सगारी संथारा एवं 18 पापों का प्रत्याख्यान किया तथा अंत में देहदान की भावना के साथ समाधिमरण प्राप्त किया। आप अपने पीछे संस्कारनिष्ठ संघसेवी भरापूरा परिवार छोडकर गये हैं।

पीपाड़- अनन्य गुरुभक्त संघसेवी सुश्रावक श्री अमरचन्दजी बोहरा का 15 अगस्त 2016 को देहावसान हो गया। पूज्य आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं संत-सतीवृन्द की सेवा में तत्पर रहने वाले श्रावकरत्न का जीवन संघ एवं समाज के प्रति समर्पित रहा। नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ उन्होंने अनेक व्रत-नियमों का पालन किया। संघ द्वारा संचालित गतिविधियों में आपकी सदैव सकारात्मक भूमिका रही। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ-पीपाड़ के आप कई वर्षों तक अध्यक्ष रहे। स्वधर्मी-वात्सल्य एवं संघ-सेवा में पूरा परिवार सदैव समर्पित रहा है। आप अपने पीछे संस्कारित परिवार छोड़कर गये हैं।

ब्यावर- सुश्रावक श्री शांतिलाल जी सुराणा का 76 वर्ष की वय में 17 अगस्त 2016 को

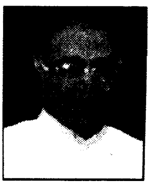

देवलोकगमन हो गया। श्रद्धानिष्ठ, धर्मनिष्ठ श्रावक नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ रात्रिभोजन त्यागी, तपस्वी एवं शीलव्रती थे। नियमित संवर-पौषध एवं प्रतिक्रमण करना उनके जीवन का अंग बन गया था। श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा संचालित संस्कार शिविर का सफल संचालन करने के साथ वे संघ सेवा में समर्पित रहे तथा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ-ब्यावर के अध्यक्ष पद के दायित्व का निर्वहन किया। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ एवं संस्कारशील परिवार छोड़कर गये हैं।

जोधपुर- सुश्राविका श्रीमती किरणदेवीजी सकलेचा धर्मपत्नी स्व. श्री साकलचन्दजी

सकलेचा का 23 अगस्त 2016 को देहावसान हो गया। संघनिष्ठ, कर्त्तव्यनिष्ठ श्राविका का जीवन धर्ममय रहा। संत-सतीवृन्द की सेवाभक्ति में वे सदैव तत्पर रहती थीं। श्राविकारत्न ने संस्कारों से अपने समूचे परिवार को समृद्ध किया। आपके सुपुत्र श्री सुनील जी संकलेचा ने महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, जलगांव से अध्ययन किया तथा वर्तमान में श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड में सह-सचिव के रूप में सेवाएँ दे रहे हैं।

जयपुर- श्री निर्मलकुमारजी सुपुत्र श्री राजकुमारजी चोरडिया का 01 जुलाई 2016 को निधन हो गया। आप देव गुरु एवं धर्म के प्रति श्रद्धा समर्पित थे तथा अनेक सद्गुणों से

सम्पन्न थे।

जोधपुर- धर्मपरायण सुश्राविका श्रीमती गुलाबकंवर सुराणा धर्मपत्नी स्व. श्री मख्तूरमलजी सुराणा का 93 वर्ष की आयु में 20 जुलाई 2016 को स्वर्गवास हो गया। सरल स्वभावी श्राविका नियमित सामायिक स्वाध्याय करती थीं। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं।

जोधपुर- सुश्री मुस्कान भण्डारी सुपुत्री श्रीमती तृप्तिजी-विशाल जी भण्डारी (सुपौत्री स्व. श्रीमती शांतिजी-स्व. श्री कैलाशमलजी भण्डारी) का मात्र 17 वर्ष की लघुवय में 5 अगस्त 2016 को आकस्मिक निधन हो गया। आपकी देव, गुरु धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा- भक्ति थी। आप चन्द्राजी-प्रभुचन्दजी अबानी की दौहित्री थी। भण्डारी तथा अबानी परिवार सदैव संत-सतीवृन्द की सेवा भक्ति में तत्पर रहते हैं। *-प्रभुचन्द अबानी*

चेन्नई- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री नगेन्द्रकुमारजी मोदी सुपुत्र स्व. श्री खेतसी जी मोदी (जालोर निवासी) का 13 जुलाई 2016 को 67 वर्ष की वय में यू.एस.ए. में स्वर्गगमन हो गया। आप सदैव धार्मिक गतिविधियों में उत्साहपूर्वक समर्पित भाव से अग्रणी रहते थे। *-गुलगोविन्दराज मेहता*

जोधपुर- संघसेवी उदारमना सुश्रावक श्री गौतमचन्दजी डोसी सुपुत्र स्व. श्री लादुराम जी डोसी का 12 अगस्त 2016 को स्वर्गगमन हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करते थे। आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं संत-सतियों के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आप विगत कुछ समय से अस्वस्थ चल रहे थे। *-धीरज डोसी*

पाली- श्रीमती कमलादेवीजी धर्मपत्नी श्री शांतिलाल जी ललवानी का निधन हो गया। आप नियमित पाँच-सात सामायिक करने के साथ उपवास, बेला, तेला एवं अठाई तप की आराधना करती थीं। आपके 40 वर्षों से रात्रिभोजन के त्याग थे एवं 16 वर्षों से शीलव्रत का पालन कर रही थीं।

अहमदाबाद- अनन्य गुरुभक्त संघसेवी सुश्राविका श्रीमती कमलादेवीजी बागमार धर्मपत्नी श्री छोगालाल जी बागमार का 15 अगस्त 2016 को स्वर्गवास हो गया। आपका जीवन संघ एवं समाज के प्रति समर्पित रहा। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान करने वाली तपस्वी श्राविका थीं। बालोतरा,

अहमदाबाद में शेखेकाल पधारने वाले संत-सतियों की सेवा में तत्पर रहती थीं। आपके पति श्री छोगालाल जी बागमार श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ अहमदाबाद के अध्यक्ष रहे हैं।

ताहराबाद (महा.)- सुश्राविका निर्मलाबेन विजयराजजी कांकरिया का 12 मई 2016 को स्वर्गप्रयाण हो गया। आप चारित्रनिष्ठ संत-सतियों के प्रति श्रद्धाभक्ति रखती थीं। आपने कई छोटी-बड़ी तपस्याओं के साथ मासक्षपण भी सम्पन्न किया। स्वाध्याय सेवा देने के साथ आप पाठशाला का भी संचालन करती थीं। *-धनराज छाजेड़*

जयपुर- सुश्रावक श्री कमलचन्दजी सुपुत्र श्री गुलाबचन्दजी सुखलेचा का 02 अगस्त 2016 को निधन हो गया। अनेक सद्गुणों से सम्पन्न श्रावकरत्न नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने के साथ संत-सतियों की सेवाभक्ति में तत्पर रहते थे।

मदनगंज- सुश्रावक श्री पारसमलजी बम्ब सुपुत्र स्व. श्री नेमीचन्दजी बम्ब का 05 जुलाई

2016 को आयुष्य पूर्ण हो गया। आप विनम्र, सहिष्णु, सेवाभावी आदर्श श्रावक थे। आपकी उदारता सेवाभावना उल्लेखनीय रही। आप श्री संघ के अध्यक्ष एवं संरक्षक रहे। आपने पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. की सन्निधि में महासती श्री विमलेशप्रभाजी म.सा. की भागवती दीक्षा कराने का लाभ लिया। *-कैलाशचन्द पीपाड़ा*

दिल्ली- सुश्रावक श्री नेमचन्द जी जैन (तातेड़) का 07 जुलाई 2016 का 55 घण्टे के

चौविहार संथारे के साथ देवलोकगमन हो गया। चांदनी चौक क्षेत्र के लोकप्रिय एवं समाजसेवी श्रावक का व्यवहार आत्मीयतापूर्ण रहा। धर्मनिष्ठ श्रावक ने अनेक सामाजिक पदों को सुशोभित किया।

-दिनेश जैन

कोटा- सुश्राविका श्रीमती बादामबाई जैन धर्मपत्नी स्व. श्री भंवरलालजी जैन बाबई वालों

का 92 वर्ष की उम्र में 15 जुलाई 2016 को परलोकगमन हो गया। प्रतिदिन सामायिक-स्वाध्याय करने वाली श्राविका ने दो बार वर्षीतप, बेले, तेले, उपवास, एकाशन आदि की आराधना की। रात्रिभोजन की त्यागी श्राविका अपने पीछे कोटा, जयपुर, इन्द्रगढ़ में भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं। *-सत्यनारायण महावीरप्रसाद जैन*

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी-परिवार तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 15659 से 15668 तक 10 सदस्य बने।

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

5000/- श्री हितेश कुमारजी, श्रीमती मयूरीजी, कु. क्याराजी बम्ब, बेंगलोर, निमाज आगमन की खुशी में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री सरदारसिंहजी, जवाहरलालजी, राजेश कुमारजी नाहर, दूदू, स्व. श्री ज्ञानचन्दजी का 15 जुलाई, 2016 को स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

2100/- श्री कांतिलालजी, शांतिलालजी, राजेन्द्रजी लुंकड, पाली-पचपदरा-ईरोड, चि. सवाईजी लुंकड के सी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट। श्री सवाईजी लुंकड़ श्री राजेन्द्रजी लुंकड़ (कार्याध्यक्ष-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद्) के भतीजे हैं।

2100/- श्री पदमचन्दजी नाहर, जलगाँव, सुपुत्र श्री जम्बूकुमारजी एवं पुत्रवधू श्रीमती संगीताजी नाहर के द्वारा महासती श्री इन्दुबालाजी म.सा. के जलगाँव चातुर्मास में सजोड़े अठाई की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री प्रभुचन्दजी अबानी, जोधपुर, अपनी दोहित्री सुश्री मुस्कान भण्डारी के 05 अगस्त, 2016 को स्वर्गगमन होने पर उसकी पुण्यस्मृति में।

2100/- श्रीमती कमलाजी धर्मपत्नी श्री हणवन्तमलजी सुराणा, जोधपुर, जिनवाणी सहयोगार्थ।

1111/- श्रीमती ललिताजी महेन्द्रमलजी गांग, सूरत, श्री अनुपमजी गांग (यू.एस.ए.) के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1101/- श्री रमेशलालजी जैन (करेला वाले), नागरिक नगर-जयपुर, सुपौत्र चि. संयम सुपुत्र श्रीमती रिंकूजी श्री सुशील कुमारजी जैन का 02 मई, 2016 को जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में।

1100/- श्रीमती मधुजी राजेन्द्रचन्दजी सिंघवी, नई-दिल्ली, स्व. श्री किस्तूरचन्दजी सिंघवी 20 अगस्त, 2016 की चतुर्थ पुण्य स्मृति के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री सौरभजी जैन, दिल्ली, पूज्य श्री नेमचन्दजी जैन (तातेड़) का 07 जुलाई 2016 को संथारे सहित महाप्रयाण हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री कमलचन्दजी बैद, जयपुर, पूज्य भाभीजी धर्मपत्नी स्व. श्री हेमचन्दजी बैद की पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री प्रकाशचन्दजी, लड्डूलालजी जैन, जलगाँव, महासती श्री इन्दुबालाजी म.सा. के जलगाँव चातुर्मास में अठाई की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री वर्धमानजी, अरविंद कुमारजी, आबड़, लासलगाँव, अठाई की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री सत्यनारायणजी, महावीर प्रसादजी जैन (बाबई वाले), कोटा, श्रीमती बादामबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री भँवरलालजी जैन (बाबई वाले) का 15 जुलाई 2016 को स्वर्गलोक गमन

हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री मनोहरमलजी, महेन्द्रमलजी, नरेन्द्रमलजी, राजेन्द्रमलजी एवं विमलेशजी सुराणा (नागौर वाले), चेन्नई, पूज्य मातुश्री श्रीमती सिरदारकँवरजी धर्मपत्नी स्व. श्री मानमलजी सुराणा का 16 जुलाई 2016 को संथारे सहित महाप्रयाण हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

1100/- श्री नाकोड़ा भैरव मण्डल, जयपुर, गुरुदर्शन के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्रीमती ममताजी, दिनेशजी कुचेरिया, हैदराबाद, चि. अंकितजी सुपौत्र स्व. श्रीमती केसरबाईजी-स्व. श्री पुसालालजी कुचेरिया का शुभ-विवाह सौ. रोशनीजी के संग सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री धनरूपचन्दजी, अमितजी मेहता, बेंगलोर, निमाज आगमन की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री पदमराजजी, अमितजी, आशीषजी मेहता, जोधपुर-बेंगलोर, निमाज आगमन की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री राजेन्द्रकुमारजी, सुमितजी, सुराणा, ब्यावर, पूज्य पिताजी श्री शांतिलालजी सुराणा का 17 अगस्त 2016 को स्वर्गगमन होने पर उनकी पुण्यस्मृति में।

1100/- श्री देवेन्द्रनाथजी-श्रीमती कमलादेवीजी, श्री लोकेन्द्रजी-श्रीमती ऋतुजी, सुश्री लोरीजी-सुश्री आर्विजी मोदी, जोधपुर, श्रीमती विमलाजी भण्डारी धर्मसहायिका स्व. श्री रणजीत सिंहजी भण्डारी की 26 वीं पुण्यतिथि पर स्मरणांजलिस्वरूप।

1100/- श्रीमती मायादेवीजी, सुशीलकुमारजी, सचिनकुमारजी जैन, गंगापुरसिटी (राज.), महासती श्री आराधनाजी म.सा. के 32 की तपस्या सूरत चातुर्मास में होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री अरूणजी सुराणा, जोधपुर, अपनी मातुश्री श्रीमती गुलाबकंवरजी सुराणा धर्मपत्नी स्व. श्री मख्तूरमल जी सुराणा का 20 जुलाई, 2016 को स्वर्गगमन होने पर स्मरणांजलिस्वरूप।

आचार्यपद विशेषांक हेतु अर्थसहयोग

5100/- श्री कैलाशमलजी दुगड, चेन्नई।

5000/- श्री प्रकाशमलजी, सुनील कुमारजी बोथरा, चेन्नई।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल हेतु साभार

श्री विनोदजी, विवेकजी लोढ़ा, महावीरनगर, जयपुर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक ''आवश्यक सूत्र'' के प्रथम संस्करण के प्रकाशन हेतु सप्रेम भेंट।

श्री सुभाषजी, अशोकजी धोका, मैसूर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक ''आवश्यक सूत्र'' के प्रथम संस्करण के प्रकाशन हेतु सप्रेम भेंट।

50000/- श्री प्रकाशचन्दजी हीरावत, जयपुर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक ''श्रावक सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र'' के पुनः मुद्रण हेतु सप्रेम भेंट।

30000/- श्री प्रेमचन्दजी एवं भंडारी परिवार, बेंगलोर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक ''संजया-नियंठा का थोकड़ा'' के प्रथम संस्करण के प्रकाशन हेतु सप्रेम भेंट।

21000/- श्री सुभाषजी, अशोकजी धोका, मैसूर, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल से प्रकाशित पुस्तक ''सामायिक सूत्र अंग्रेजी'' के पुनः मुद्रण हेतु सप्रेम भेंट।

स्वाध्याय संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार

2100/- श्रीमती मानकंवरजी बोगावत धर्मपत्नी स्व. श्री मोहनलालजी बोगावत, पाढरकवड़ा (महा.),

सहयोग हेतु।

2100/- श्री मनीष जी बोगावत सुपुत्र स्व. श्री मोहनलालजी बोगावत, पाढरकवड़ा (महा.), सहयोग हेतु।

2100/- श्री अमित जी बोगावत सुपुत्र स्व. श्री मोहनलालजी बोगावत, नागपुर (महा.), सहयोग हेतु।

1500/- श्री विजयजी चौपड़ा चेरिटेबल ट्रस्ट, जोधपुर, विजयजी चौपड़ा की पावन स्मृति में।

अ.भा.श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर को प्राप्त साभार

31000/- श्री कस्तुरचन्दजी, श्री राकेशकुमारजी, श्री हितेषकुमारजी, मुकेशकुमारजी, नरेशकुमारजी जैन, खेरली, हाल मुकाम जयपुर, संघ सहायतार्थ।

1100/- श्रीमती चन्द्रकलाजी जैन, जोधपुर, स्व. श्री इन्द्रसिंहजी जैन की जन्मतिथि, सुपुत्र श्री निलेशजी तथा सुपौत्री सौ. कां. मीमांसा जी के जन्मदिन के उपलक्ष्य में भेंट।

गजेन्द्र निधि द्वारा आचार्य हस्ती स्कॉलरशिप फण्ड
(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)
दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

24000/- श्रीमती कंचनकुमारीजी डागा, जयपुर, स्व. श्री माणकचन्दजी डागा की पुण्यस्मृति में।

12000/- श्री पुखराजचन्दजी भण्डारी, जयपुर, अपनी धर्मसहायिका स्व. श्रीमती सुधाजी भण्डारी की पावन पुण्यस्मृति में।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य हस्ती स्कॉलरशिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- ***Sh. M. Harish Kawad**, No. 5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600056(T.N.) (Mob. 9543068382)*

आगामी पर्व तिथि

भाद्रपद शुक्ला 14, गुरुवार	15.09.2016	चतुर्दशी
भाद्रपद शुक्ला 15, शुक्रवार	16.09.2016	पक्खी
आश्विन कृष्णा 8, शुक्रवार	23.09.2016	अष्टमी
आश्विन कृष्णा 14, गुरुवार	29.09.2016	चतुर्दशी
आश्विन कृष्णा 30, शुक्रवार	30.09.2016	पक्खी
आश्विन शुक्ला 7, शनिवार	08.10.2016	आयंबिल ओली आरम्भ
आश्विन शुक्ला 8, रविवार	09.10.2016	अष्टमी
आश्विन शुक्ला 10, मंगलवार	11.10.2016	आचार्य श्री भूधरजी म.सा. की पुण्यतिथि
आश्विन शुक्ला 14, शनिवार	15.10.2016	चतुर्दशी, पक्खी
आश्विन शुक्ला 15, रविवार	16.10.2016	आयंबिल ओली पूर्ण
कार्तिक कृष्णा 1, रविवार	16.10.2016	आचार्य हमीरमल जी म.सा. की 163 वीं पुण्यतिथि
कार्तिक कृष्णा 8, रविवार	23.10.2016	अष्टमी

।।श्री महावीराय नमः।।

जय गुरु हीरा — श्री कुशलरत्नगजेन्द्रगणिभ्यो नमः — जय गुरु मान

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.)

टेलीफैक्स-0291-2636763, मो. 9414126279

संघ-सेवा सोपान

संघ-सेवा, कर्म-निर्जरा का कारण है। इसलिए प्रत्येक सदस्य का कर्त्तव्य है कि वह तन-मन-धन से और समर्पित भाव से संघ-सेवा में उत्तरोत्तर प्रगति करे।

संघ अपनी सहयोगी संस्थाओं और शाखाओं के माध्यम से प्रत्येक संघ सदस्य तक पहुँचने के उद्देश्य के साथ ही ज्ञान-दर्शन-चारित्र की अभिवृद्धि, स्वधर्मि-वात्सल्य, लघुता भाव एवं संघ- संगठन के कार्य में निरन्तर गतिशील है। प्रत्येक परिवार संघ के विकास और उद्देश्यों की पूर्ति में तन-मन-धन से यथाशक्ति योगदान करें, इस पुनीत लक्ष्य से संघ ने संघ-सेवा सोपान योजना प्रारम्भ की है।

संघ-सेवा सोपान योजना के अन्तर्गत संघ के कार्यों के चहुँमुखी विकास हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान करने के लिए दीर्घकालीन योजना का प्रारूप रखा गया है।

आप संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं द्वारा संचालित प्रवृत्तियों के कुशल संचालन के लिए संघ द्वारा प्रस्तावित विभिन्न श्रेणियों का अवलोकन कर संघ के सहयोगी बनने का लक्ष्य रखें। दानदाताओं के नाम संघ की मुख पत्रिका जिनवाणी एवम् बुलेटिन रत्नम् में प्रकाशित किये जायेंगे।

आपका सहयोग संघ का आधार है। आपके सहयोग, सुझाव एवं मार्गदर्शन से संघ चहुँमुखी विकास एवं प्रगति करेगा, ऐसा विनम्र विश्वास है।

संघ-सेवा में योगदान

1. गजेन्द्र फाउण्डेशन ट्रस्टी — 11,00,000/- का अर्थ सहयोग

चैक/ड्राफ्ट ''गजेन्द्र फाउण्डेशन'' (Gajendra Foundation)के नाम से बनाकर भेजें अथवा सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया के खाता संख्या 1318666429 (IFSC Code-CBIN0280606) में जमा करवाएं।

संघ-सेवा सोपान योजना

2.	संघ प्रमुख आधार स्तम्भ	2,51,000/-	वार्षिक
3.	संघ आधार स्तम्भ	1,01,000/-	वार्षिक
4.	संघ स्तम्भ	51,000/-	वार्षिक
5.	संघ पोषक	21,000/-	वार्षिक

6.	संघ सहयोगी	11,000/-	वार्षिक
7.	संघ प्रोत्साहन	5,100/-	वार्षिक
8.	अन्य सहयोग	इच्छानुसार	

संघ-सेवा सोपान में सहयोग राशि का चैक/ ड्राफ्ट "गजेन्द्र फाउण्डेशन- संघ सेवा सोपान फण्ड"(Gajendra Foundation-Sangh Seva Sopan Fund) के नाम से बनाकर भेजें अथवा कोटक महिन्द्रा बैंक के खाता संख्या 3911757346 (IFSC Code-KKBK0000957) में जमा करवाएं।

यह सहयोग राशि संघ की प्रमुख गतिविधियों में खर्च की जायेगी। उपर्युक्त मदों में देय राशि आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80 (जी) के अन्तर्गत छूट प्राप्त है।

पी.शिखरमल सुराणा	नरेन्द्र हीरावत	पूरणराज अबानी	बसंत के. जैन
राष्ट्रीय अध्यक्ष	राष्ट्रीय उपाध्यक्ष	राष्ट्रीय महामंत्री	राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष

संघ-सेवा सोपान योजना में साभार प्राप्त

संघ प्रमुख आधार स्तम्भ-	251000/-	श्री मोफतराजजी मुणोत-मुम्बई (प्रथम वर्ष)
	251000/-	श्री पारसचन्दजी हीरावत-मुम्बई (प्रथम वर्ष)
संघ आधार स्तम्भ-	101000/-	श्री महेन्द्रजी कुम्भट-मुम्बई (प्रथम वर्ष)

जिनवाणी के स्वाध्याय से लाभ

डॉ. लक्ष्मीचन्द जैन

1. जैसे प्रातःकाल होने पर रात्रि का अंधकार मिट जाता है, वैसे ही जिनवाणी का स्वाध्याय करने से अज्ञान का अंधकार दूर हो जाता है। मिथ्यात्व (असत्य मान्यता) की जगह सम्यक्त्व प्रकट हो जाता है। जिनवाणी की महिमा बहुत भारी है।
2. जिनवाणी भ्रम को मिटाती है तथा अपना स्वरूप प्रकट होने लगता है। जो जिनवाणी का स्वाध्याय करते हैं उनकी हुण्डी (चेक) शीघ्र स्वीकार हो जाती है अर्थात् मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है। हम अपनी विभाव दशा से स्वभाव दशा में आने लगते हैं।
3. जिनवाणी के स्वाध्याय से इस भव और पर भव की दशा-दिशा बदल जाती है।
4. दृश्यमान (इस शरीर) में अदृश्य (शुद्धात्म तत्त्व) को देखना हो तथा उसका प्रत्यक्ष अनुभव करना हो, आत्मा के रहस्य को जानना हो, आत्मिक परम सुख की प्राप्ति का अनुभव करना हो तो जिनवाणी का स्वाध्याय अभीष्ट है।

-छोटी कसरावद (मध्यप्रदेश)

संघ हेतु आधार- सूचना संग्रहण-कार्यक्रम

अपेक्षित है आपका सहयोग

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के निर्देशन में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा रत्नसंघीय परिवारों के सम्बन्ध में सूचना का संग्रह ऑनलाइन किया जा रहा है, जिसके उद्देश्य हैं- 1.संघ सदस्यों की धार्मिक, व्यावसायिक एवं सामाजिक जानकारी एकत्रित करना, 2. संघ के सभी कार्यक्रमों की सूचना अपने सदस्यों को पहुँचाने के लिए सूचनातंत्र विकसित करना, 3. संघ सदस्यों से प्राप्त जानकारी एकत्रित कर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग करना, 4. प्राप्त आंकड़ों के आधार पर संघ के भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा तय करना, 5. संघ एवं संघ की सहयोगी संस्थाओं से सम्बन्धित सभी जानकारी एक ही जगह पर संकलित करना, 6. संघ के सभी सदस्यों में सक्रियता का संचरण करना। इस हेतु पंजीकरण 4 जनवरी 2016 से प्रारम्भ हो चुका है। आप **WWW.RATNASANGH.COM** पर अपनी सूचना दे सकते हैं।

- यह फार्म परिवार के तीन वर्ष से अधिक वय के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा भरा जाना है। इसे आप आधार कार्ड की भाँति व्यक्तिगत सूचनातंत्र भी समझ सकते हैं।
- इससे संघ का सूचनातंत्र विकसित होगा। आगे चलकर चिकित्सा के क्षेत्र में अन्य समाज की भाँति ग्रुप मेडिकल बीमा हेतु प्रयास कर उसे मूर्त रूप प्रदान किया जा सकता है।
- आप संघ की वेबसाइट www.ratnasangh.com पर जाकर अपना फार्म स्वयं ही भर सकते हैं। फार्म भरना शुरू करते समय आपके मोबाइल नम्बर पर एक संदेश आयेगा, जिसमें फार्म नम्बर एवं फार्म भरने की तारीख रहेगी। आप स्वयं अपना फार्म पूर्ण भर सकते हैं या उसमें आवश्यक सुधार कर सकते हैं। यदि आपके पास फार्म नम्बर या तारीख का संदेश सुरक्षित न हो तो आप वेबसाइट पर जाकर एडिट फार्म पर क्लिक करें, वहाँ पर आपको फोरगोट पासवर्ड का विकल्प प्राप्त होगा, उस पर क्लिक करके अपने नाम एवं मोबाइल नम्बर की जानकारी प्रदान करें। दोनों जानकारी सही होने पर आपके मोबाइल पर फार्म नम्बर एवं फार्म भरने की दिनाँक का संदेश आपको पुन: प्राप्त हो जायेगा। इसकी सहायता से आप अपना फार्म एडिट कर सकते हैं।
- इस सूचना संग्रहण कार्यक्रम से आपको यथासमय चातुर्मास, दीक्षा महोत्सव, विशिष्ट पर्व तिथि आदि एवं आवश्यक सूचनाएँ प्राप्त होंगी।
- आशा है आप संघ के इस भागीरथी प्रयास से रीते नहीं रहेंगे एवं अपने परिवार सहित सभी स्वधर्मी भाई-बहनों की सूचना संगृहीत कराने में पूरा प्रयास करेंगे।

-विकास गुंदेचा, राष्ट्रीय उपाध्यक्ष पुस्तकालय एवं श्रुत सेवा,
मोबाइल नं. 099283-63581

भण्डारी हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर

(आपके स्वास्थ्य के साथ हमेशा)

राजस्थान व पड़ौसी राज्यों में लेजर, लैप्रोस्कोपी एवं लिथोट्रिप्सी
का सर्वश्रेष्ठ एवं विश्वसनीय सेन्टर

~ अस्पताल की विशेषताएं ~

दूरबीन पद्धति से पेट, अपेन्डिक्स, हर्निया, प्रोस्टेट, पाइल्स आदि की शल्य चिकित्सा की सुविधा।

शरीर में किसी भी स्थान पर होने वाली पथरी के ईलाज का सर्वश्रेष्ठ संस्थान।

स्त्री रोग, नॉर्मल, सिजेरियन व हाई रिस्क डिलेवरी का अग्रणीय संस्थान।

विशेषज्ञों की सेवायें

- मूत्र व पथरी रोग
- पेट, लीवर व आंत रोग
- जनरल व मोटापा निवारण सर्जरी
- स्त्री रोग
- जनरल फिजिशियन
- प्लास्टिक व कॉस्मेटिक सर्जरी
- बाल रोग एवं बाल शल्य चिकित्सा
- न्यूरो सर्जरी
- दन्त रोग
- नाक, कान व गला रोग
- चर्म रोग

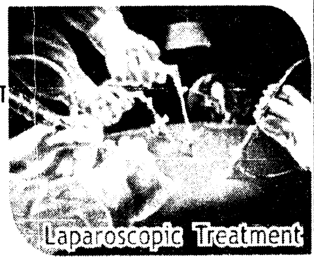

सुविधायें

- 30 वर्ष का अनुभव
- 4 लाख से अधिक रोगियों का सफल ईलाज
- 2 लाख से अधिक रोगियों का शल्य क्रिया द्वारा उपचार।
- 50,000 से अधिक पथरी रोगियों का उपचार।
- NABH & NABL से मान्यता प्राप्त।
- MLC (Medico Legal Case) की सुविधा
- 24x7 ICU, Emergency Facilty

CGHS, ECHS, ESIC, NPCIL (Rawatbhata), BSNL, BHEL, GAIL, IOCL, CWC, FCI, NFL, MNIT, CIPET, CSWRI, HCL, AAI, Coal India, CISF (8th RES BN), Rajasthan University, केन्द्र व राजस्थान सरकार के सभी कर्मचारी व पेंशनर्स एवं सभी प्रमुख TPA व इंश्योरेंस कंपनीयों से ईलाज हेतु अधिकृत

138-ए, वसुन्धरा कॉलोनी, गोपालपुरा बाईपास, टोंक रोड़, जयपुर - 302018
फोन: 0141-2703851-52 (मो.) 9660006228, 9829770055

अलविदा बाईपास सर्जरी

अब बाईपास सर्जरी के बारे में कभी ना सोचिये

काउन्टर पलसेशन थैरेपी (ई.ई.सी.पी.)

द्वारा प्राकृतिक बाईपास करवायें

काउन्टर पलसेशन थैरेपी (ई.ई.सी.पी.) में क्या होता हैं :-

हृदय रोगी को साधारणतया 35 दिन तक प्रतिदिन एक घंटे की थैरेपी ई.ई.सी.पी. मशीन जो कि एफ.डी.ए., अमेरिका द्वारा मान्यता प्राप्त है, पर दी जाती है । यह थैरेपी ई.ई.सी.पी. मशीन के विशेष प्रकार के बिस्तर पर रोगी को लिटाकर दी जाती है। तीन बड़े हवा से फूलने वाले कफ पैड जो ब्लड प्रेशर उपकरण के कफ पैड की तरह के होते हैं, उन्हें रोगी की पिंडलियों, जांघ एवं कमर के निचले हिस्से पर बाँधा जाता है एवम् इन कफ पैड के इनफ्लेशन एवम् डिफ्लेशन की क्रिया को मशीन से जुड़े कम्प्यूटर द्वारा निर्देशित किया जाता है। इस सारी प्रक्रिया का इलेक्ट्रोकार्डियोग्राफ मशीन के पर्दे पर अवलोकन किया जाता है। मशीन पर उपचार के दौरान कफ पैड के फैलने पर रक्त पूर्ण दबाव से हृदय की ओर जाता है एवं इस दबाव के कारण हृदय के पास सुप्त पड़ी धमनियों में रक्त तीव्र गति से प्रवाहित होकर इन धमनियों को क्रियाशील कर देता है व हृदय को पर्याप्त मात्रा में रक्त मिलने से व्यक्ति को एन्जिना दर्द (छाती दर्द) नहीं होता हैं। 35 दिन तक यह थैरेपी लेने से हृदय के पास सुप्त पड़ी धमनियाँ स्थायी रूप से खुल जाती है और छोटी-छोटी धमनियाँ आपस में जुड़कर नई धमनियों का निर्माण करती हैं।

श्रीमती गुलाब कुम्भट मेमोरियल चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा संचालित

समर्पण हार्ट एण्ड हैल्थ केयर सेन्टर

ए - 12, इण्डस्ट्रीयल एस्टेट, उद्योग भवन के पास, न्यू पावर हाउस रोड, जोधपुर (राज.)
Email : samarpanjodhpur@gmail.com

फोन : 2432525
सम्पर्क : धीरिन्द्र कुम्भट
93147 14030

卐 चारित्र आत्माओं के लिए ट्रस्ट द्वारा नि:शुल्क उपचार 卐

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

साधना के मार्ग में प्रगतिशील वही बन सकता है,
जिसमें संकल्प की दृढ़ता हो।

– आचार्य श्री हस्ती

C/o CHANANMUL UMEDRAJ
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIERS
S. RAJAN FINANCIERS

 # 218, Ashoka Road, Lashkar Mohalla,
Mysore-570001 (Karanataka)

With Best Compliments from :

C. Sohanlal Budhmal Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurabh, Akhilesh Baghmar

Tel. : 821-4265431, 2446407 (O)
Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

Gurudev

SURANA™
yes, the best TMT RE-BARS

DRI Plant

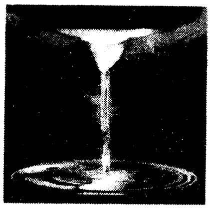
Electric Arc Furnace

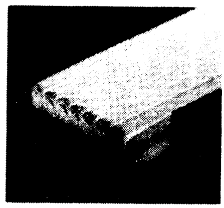
Billets

Rolling Mill

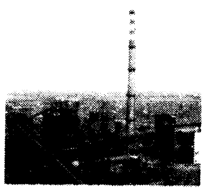
Captive Power Plant

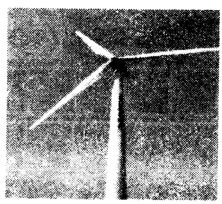
Windmill

With best wishes from

ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143

Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजाने के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त

रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल

के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.......

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

आदरणीय रत्नबंधुवर,

छात्रवृत्ति योजना की निरन्तर गतिशीलता के लिए सदस्यता अभियान से जुड़िये। सदस्यता अभियान का प्रारूप इस प्रकार है –

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.......

सदस्यता अभियान

हीरक स्तम्भ सदस्य (5 लाख रुपये प्रति वर्ष)	स्वर्ण स्तम्भ सदस्य (1 लाख रुपये प्रति वर्ष)

नोट-सदस्यता को ग्रहण करने वाले सभी सदस्यों का नाम जिनवाणी पत्रिका में प्रति माह प्रकाशित किया जायेगा।

Acharya Hasti Scholarship Fund

Ujjawal Bhavishya Ki Aur Ek Kadam...........

Your Contribution Towards This Noble Cause Will Go A Long Way In Lighting The Lamp Of Knowledge To Deserving and Intelligent Students, Hence We Kindly Request You To Contribute For This Noble Cause.

Note-The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. The Bank A/c Details is as follows -

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund
A/c No. 168010100120722
Bank Name & Address - AXIS BANK LTD. Anna Salai,Chennai(TN) IFSC Code - UTIB0000168
PAN No. - AAATG1995J
Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

- **For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad,Chennai (+91 95001 14455)**

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पुण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यों के नामों की सूची –

हीरक स्तम्भ सदस्य (5 लाख रुपये प्रति वर्ष)	स्वर्ण स्तम्भ सदस्य (1 लाख रुपये प्रति वर्ष)
श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई।	श्रीमान् दूलीचंद बाघमार एण्ड संस,चैन्नई।
युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।	श्रीमान् दलीचंद जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई।
श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन	श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् रिखबचंद सा सुखानी, रायचूर (कर्नाटक)	श्रीमान् गणपत जी हेमन्त जी बाघमार, चैन्नई।
	श्रीमान् प्रेम जी कवाड़, चैन्नई।
	गुप्त सहयोगी, चैन्नई।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें–

M. Harish Kumar Kavad - 5, Car Street, Poonamallee, **CHENNAI-600056** (TN)

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्पर्क करें– मनीष जैन, चैन्नई (Mob. +91 95430 68382)

'छोटा सा चिन्तन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का'

Jai Guru Heera *Jai Guru Hasti* *Jai Guru Maan*

।। जैनं जयति शासनम् ।।

With Best Compliments from:

Dharamchand Paraschand Exports
Paras Chand Hirawat
CC 3011-3012, Bandra Kurla Complex, Bandra (E), Mumbai-400 098 (MH)
Tel. : +91 22 4018 5000
Email : dpe90@hotmail.com

KANTILAL SHANTILAL RAJENDRA LUNKER
PACHPADRA-PALI-ERODE
K.L. ASSOCIATES
'Sanskar', 177-B, Adarsh Nagar, Pali-306401 (Raj.)
Mobile : 094141-22757
135, N.M.S. Compound, ERODE-638001 (T.N.)
Tel. : 3205500 (O), Mobile : 093600-25001

BHANSALI GROUP
Dhanpatraj V. Bhansali
BHANSALI DEVELOPERS
Sharda Bhawan, 2nd Floor, Nandapatkar Road, Vile Parle (E), Mumbai-400057 (MH) Tel. : 26185801, 32940462 (O),
E-mail : bhansalidevelopers@yahoo.com

S.D. GEMS & SURBHI DIAMONDS
Prakash Chand Daga
Virendra Kumar Daga (Sonu Daga)
FC51, Bharat-Diamond Bourse, Bandra Kurla Complex, Bandra (E), Mumbai-400098 (MH)
Ph. : 022-23684091, 23666799 (o), 022-28724429
Fax : 22-40042015, Mobile : 098200-30872
E-mail : sdgems@hotmail.com

Basant Jain & Associates, C.A.
BKJ & Associates, C.A.
BKJ Consulting Pvt. Ltd.,
Megha Properties Pvt. Ltd.
Ambition Properties Pvt.Ltd.
बसंत के जैन
अध्यक्ष: श्री जैन रत्न युवक परिषद, मुम्बई
ट्रस्टी : गजेन्द्र निधि ट्रस्ट
601, Dalamal Chambers, New Marine Lines, Mumbai - 400020 (MH)
Ph. : 022-22018793, 22018794 (o), 022-28810702

NARENDRA HIRAWAT & CO.
Launches
N.H. Studios ***N.H. Jewells***
A-1502, Floor-15th, Plot-FP616(PT), Naman Midtown, Senapati Bapat Marg, Near Indiabulls, Elphinstone (W), Mumbai-400013 (MH)
Web. www.nhstudioz.tv, Tel. : 022-24370713

।।श्री महावीराय नमः।।

।।जय गुरु हस्ती।। ।।जय गुरु हीरा-मान।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

रात्रि भोजन त्याग रूप व्रत को आत्म-कल्याण के लिए स्वीकार करना चाहिए।
– भगवान महावीर

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

रात्रि भोजन त्याग के साथ-साथ भक्ष्य-अभक्ष्य का विचार करके ही अन्न ग्रहण करना चाहिए।
– आचार्य हस्ती

अहिंसा परमो धर्म

रात्रि भोजन सदोष व तामसी आहार होता है। समाधि का अभिलाषी साधक ऐसी तामसी आहार से दूर ही रहता है।
– आचार्य हीरा

रात्रि भोजन करें या न करें, अगर त्याग नहीं है तो उसे दोष लग ही रहा है। अतः रात्रि भोजन का प्रत्याख्यान करना आवश्यक है।
– उपाध्याय मान

सामूहिक रात्रि भोजन आयोजन त्याग हेतु विनम्र अपील

प्रभु वीर का शासन मिला, गुरु भगवन्तों का सानिध्य मिला ।
श्रद्धा-भक्ति के भाव जगे, सामूहिक भोज रात्रि को तजे ।।

रात्रि भोजन त्याग जैनों की प्रमुख पहचान है।

रात्रि भोजन करना दुर्गति का कारण है।

रात्रि भोजन अनर्थदण्ड व पाप का कारण है।

आओ - हम सब संकल्प करें कि सामूहिक रात्रि भोजन का आयोजन कदापि नहीं करेंगे।

विनीत – **समस्त जैन समाज**

सौजन्य से : मधु कवाड़, चैन्नई

आर.एन.आई. नं. 3653/57 डाक पंजीयन संख्या JaipurCity/413/2015-17
मुद्रण तिथि दिनांक 5 से 8 सितम्बर, 2016
वर्ष : 74 ★ अंक : 09 ★ मूल्य : 10 रु.
डाक प्रेषण तिथि 10 सितम्बर, 2016★ भाद्रपद, 2073

waterfront
at KALPATARU
riverside
PANVEL

Premium 2 & 3 BHK residences
022 3064 3065

Promoters: **M/S Kalpataru + Sharyans**
Site Address: Opp. Panch Mukhi Hanuman Temple, Old Mumbai - Pune Highway, Panvel - 410 206. I **Head Office:** 101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (E), Mumbai - 400 055. Tel.: + 91 22 3064 3065 I Fax: + 91 22 3064 3131 I Email: sales@kalpataru.com I visit: www.kalpataru.com

Images are for representative purposes only. This property is secured with Housing Development Finance Corporation Limited. The No Objection Certificate / Permission would be provided, if required. Conditions apply.

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - विनय चन्द डागा द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन